परमपूज्य शासन-प्रभावक शास्त्र-विशारद जैनाचार्य
श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरिजी महाराज

परमपूज्य, प्रातःस्मरणीय, महोपकारी, शासन प्रभावक,
स्वनाम धन्य जैनाचार्य श्रीजिनकृपाचन्द्र
सूरीश्वरजी महाराज !

पूज्य गुरुदेव,

आपके सदुपदेशसे हमारे हृदयक्षेत्रमे साहित्यानुराग और साहित्य सेवाका जो भव्य बीज प्रस्फुटित और पल्लवित हुआ है, उसीके फलस्वरूप यह प्रथम पुष्पाञ्जलि प्रेम, श्रद्धा और भक्ति पूर्वक आपके कर-कमलोमे सादर समर्पित है।

विनीत,
अगरचन्द नाहटा।
भंवरलाल नाहटा।

महामहोपाध्याय रायबहादुर पण्डित गौरीशंकर जी हीराचन्द जी ओझा महोदयकी

सम्मति

सत्रहवीं शताब्दीके जैन समाजके आचार्योंमें एक श्री जिन-चन्द्र सूरिजी नामक बड़े ही प्रभावशाली आचार्य हो चुके हैं; जिनका उपदेश उस समयके तत्कालीन मुगल बादशाह अकबरने सुनकर अपने साम्राज्यमेंसे हिंसावृत्तिको बहुत कुछ रोक दी थी। उनकी तपस्या और त्यागवृत्तिने बादशाहका चित्त जैन धर्मकी ओर खींच लिया था, जिससे जैन धर्मका विकास होकर उस तरफ उत्तरोत्तर आस्था बढ़ती जाती थी। फलतः बादशाह अपने यहां प्रायः जैन साधुओंको बुलाकर उनसे उपदेश ग्रहण किया करता था। वह जैन समाजके लिये स्वर्णयुग था और कर्मचंद्र बच्छावत जैसे श्रावक उसमें मौजूद थे। इतिहाससे स्पष्ट है कि अकबरके समयके जैन आचार्योंने इस प्राचीन धर्मकी संरक्षाके लिये कठिन तपस्या की थी। वास्तवमें देखा जाय, तो मध्यकालीन युगके भारतके इतिहासको सुरक्षित रखने-का बहुत कुछ श्रेय जैन साधुओंको भी है, जिन्होंने कई ग्रन्थ निर्माणकर संस्कृत साहित्यको जीवित रखनेका बड़ा प्रयत्न किया है।

हिन्दी संसार अभीतक ऐसे साहित्यरक्षकोंसे अपरिचित है, अतएव इस कमीको पूरी करनेके लिये बीकानेरनिवासी श्री अगरचन्दजी नाहटा और श्री० भंवरलालजी नाहटाको बड़ी लगन है। उनकी प्रथम कृति 'युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि' मेरे सामने है। पुस्तक उपयोगी है और प्राचीन पुस्तकों, पट्टावलियों, शिलालेख आदिके आधारपर लिखी गई है, जिससे उस समयकी परिस्थिति और आचार्य श्री जिनचन्द-सूरिजीके जीवनकी खासी झांकी होती है।

श्री० अगरचन्दजी नाहटा और श्री० भंवरलालजी नाहटा खोजके बड़े प्रेमी हैं। श्री अगरचन्दजी नाहटा द्वारा लिखित 'विधवा-कर्त्तव्य' और श्री भंवरलाल जी नाहटा लिखित 'सती मृगावती' अपने विषयकी अच्छी पुस्तक है, और मैं उनके उत्साहकी प्रशंसा करता हूं।

अजमेर,
ता० १७ सितम्बर १९३५

गौरीशंकर हीराचन्द ओझा

स्वर्गीया विदुषी आर्या श्रीमती विमलश्रीजी महाराज

स्व० विदुषी आर्या श्रीमती विमलश्री

—का—

संक्षिप्त जीवन ।

'यथा नाम तथा गुणः' के वाक्यानुसार विमल श्री जीकी पवित्रात्मा सर्वथा विमल और निर्मल थी। हार्दिक ऋजुता (सरलता) और शान्त स्वभाव आपके अनुपम और आदर्श गुण थे। संसारसे उदासीनता और आध्यात्मिक मग्नता आपके प्रसन्न मुख और मृदु वचनोंसे टपकती थी, आपके उपदेश बड़े रोचक और असरकारक हुआ करते थे। जिन्हें एक बार भी आपके पुनीत दर्शन एवं सत्समागमका लाभ मिला है वे आपके सद्गुणोंसे सदाके लिये मुग्ध हो जाते थे।

फलोधी निवासी चौधरी करणमलजी श्रावककी धर्मपत्नी शृङ्गार देवीके कुक्षिसे सं० १९३२ के अक्षय तृतीयाको आपका जन्म हुआ था। आपका शुभ नाम दुगाकुमरी रखा गया। अवसरविज्ञ माता-पिताने १३ वर्षकी योग्य वयमें चोथमल जी लोंकड़के सुपुत्र मोहनलालजीके साथ आपका पाणिग्रहण कर दिया, किन्तु दुर्दैव कालने विवाहको १३ मास पूरे होनेके पूर्व ही आपकी सौभाग्यश्री को हरण कर लिया, या यों कहा जाय कि भोग्यकर्म आपके अवशेष न था और चारित्रावर्णीय कर्मके क्षयोपशमने आपको चारित्राभिमुख होनेका मौका दे दिया।

इधर पूज्या सिंह श्री जीके उपदेशोंने आपके हृदयको वैराग्यसे ओत-प्रोत कर दिया। फलतः दुगाबाईने अपने सास ससुर आदि कौटुम्बिक व्यक्तियोंकी आज्ञा सम्पादन कर सं० १९५० के आषाढ़ कृष्णा १३ को सिंह श्रीजीसे दीक्षा ग्रहण की, सं० १९५० आषाढ़ शु० ११ को बड़ी दीक्षा हो जानेपर आपका शुभ नाम 'विमलश्री' रखा गया।

दीक्षाके अनन्तर आपने स्वपर सिद्धान्तोंका अध्ययन कर अच्छी विद्वत्ता और योग्यता प्राप्त की, साधुताके सच्चे आदर्शसे विज्ञ होकर आप सदा उत्कृष्ट चारित्र पालनमें यत्न किया करती थीं।

सं० १९८९ के पौष शुक्ला १२ को श्रीसिंहश्रीजीका अजमेरमें स्वर्गवास हो गया, तबसे उनकी आज्ञानुवर्ती आर्या सङ्घकी देखभाल आपके नेतृत्वमें रही, आपने बड़ी योग्यतासे इसका सञ्चालन किया और आपके गम्भीर एवं शान्त प्रकृतिने सबके हृदयों पर प्रभुत्व जमा लिया।

नव वर्षकी अवस्थामें दीक्षित आर्या प्रमोदश्रीजीका विद्याध्ययन भी आपके नेतृत्वमें हुआ, जो आज परम विदुषी, पण्डिता और आर्यारत्नकी ख्याति प्राप्त हैं।

पूज्या विमलश्रीजीने मारवाड़, मेवाड़, मालवा, गुजरात, काठियावाड़ आदि देशोंमें विहार कर बहुत शासनोन्नति और धर्म प्रभावना की है, शिक्षा प्रचार और जीर्णोद्धारकी ओर आपका विशेष लक्ष्य था।

भोपाल और गन्धारमें प्रतिष्ठा महोत्सव, रतलाममें ध्वजा-रोपण और बाबासाके मन्दिरका जीर्णोद्धार, सरवाड़के दादावाड़ीके भव्य मन्दिरका उद्धार, सोजतमें कन्या पाठशालाकी स्थापना, कोटेमें दीवान बहादुर केशरीसिंहजी द्वारा विंशति स्थानक तप उद्यापनका महोत्सव, बीकानेरमें नवपद (१०-१२) उद्यापनोंका महोत्सव आदि अनेक धर्म कृत्योंके होनेमें आपके सदुपदेश ही प्रधान कारण हैं।

इस प्रकार आत्मोद्धार और धर्म प्रचार करते हुए सं० १९९० माघ कृष्णा अष्टमी मंगलवारके रात्रि ९। बजे समाधि पूर्वक फलोधीमें आपकी अमर और पवित्रात्मा नश्वर देहका परित्याग कर स्वर्ग सिधारी, उस पौद्गलिक देहकी अविद्यमानतामें भी आपकी विमल कीर्ति चिरस्थायी है।

विनीता,

आर्या राजेन्द्र श्री।

आवश्यक सूचना :—आपकी स्वर्गीया आत्माके सद्गुणोंकी स्मृतिमें फलौधी सङ्घने १०००) रुपये धर्मार्थ निकाले हैं।

इस ग्रन्थरत्नकी भी ४०० प्रति ये पूज्य विमलश्री जीकी स्मृतिमें अमूल्य वितरणार्थ जिन-जिन धर्मानुरागी श्रावक श्राविकाओंने द्रव्य सहायता दी है उन्हें धन्यवाद दिया जाता है और सदा इसी प्रकार उत्तम ग्रन्थोंके प्रकाशनमें सहायता देते रहें, यही अनुरोध है।

कविवर समयसुन्दरोपाध्याय कृत

युगप्रधान श्री जिनचन्द सूरि अष्टक

एजी संतनके मुख वाणि सुणी, 'जिनचन्द' मुणिंद महन्त यति ।
तप जप करै गुरु गुज्जरमें, प्रतिबोधन है भवि कुं सुमति ॥
तब ही चित चाहन चूंप भई, 'समयसुन्दर'के प्रभु१ गच्छपति ।
पठइ२ पातशाहि अजब३की छाप, बोलाए गुरु गजराज गति ॥१॥
एजी 'गुज्जर' तैं गुरुराज चले, विच४ में चौमास 'जालोर' रहे ।
'मेदनीतट' मन्त्री मंडाण कियो, गुरु 'नागोर' आदर मान लहे ॥
मारवाड 'रिणी' गुरु वन्दन को, तरसै 'सरसै' विच वेग वहे ।
हरख्यो संघ 'लाहोर' आये गुरु, पातिशाह अकबर पाँव गहे ॥२॥
एजी शाहि 'अकबर' बब्बर के, गुरु सूरति देखत ही हरखै ।
हम योगी यति सिद्ध साधु व्रती, सब ही षट दर्शनके निरखै ॥
तप जप्प दया धर्म धारणको, जग कोइ नहीं इनके सरखै ।
'समयसुन्दर' ६के प्रभु धन्य गुरु, पातिशाह 'अकबर' जो परखै॥३॥
एजी७ अमृतवाणी सुणी सुलतान, ऐसा पातिशाह हुकम किया ।
सब आलम माहि अमारि पलाइ, बोलाय गुरु फरमाण दिया ॥

---

१ गुरु २ भेजे ३ अकब्बरी ४ अधबिच ५ में ६ टोपीवदाऽमावस चन्द उदय, अज तीन बताय कला परखै (मुद्रितमें पाठान्तर) ७ गुरु

जग जीव दया धर्म दाखण तैं, जिन शासनमें जु सोभाग लिया।
'समयसुन्दर' कहै गुणवन्त गुरु, दृग देखो हरषित होत८ हीया ॥४॥
एजी९ श्रीजी गुरु धर्म गोठ१० मिले, सुलतान 'सलेम' अरज्ज करी।
गुरु जीव दया नित चाहत११ है, चित्त अंतर प्रीति प्रतीति धरी ॥
'कर्मचन्द' बुलाय दियो फुरमाण, छोड़ाइ 'खंभाइत'की मच्छरी।
'समयसुन्दर' कहै सब लोकनमें, जु१२ खरतर गच्छकी ख्याति खरी ॥५॥
एजी श्री 'जिनदत्त' चरित्र सुणी, पातिशाह भयो गुरु राजिय१४ रे।
उमराव सबै कर जोड़ि खड़े, पभणै अपणै मुख हाजिय रे॥
युगप्रधान१३ किये गुरु कुं, गिगड्दूं धुंधुं बाजिय रे।
'समयसुन्दर' तू ही जगत गुरु, पातिशाह 'अकबर' गाजिये रे ॥६॥
एजी ज्ञान विज्ञान कला सकला, गुण देख मेरा मन रीझिये जी।
हिमायुंको नन्दन एम अखे, मानसिंह 'पटोधर' कीजिये जी ॥
पतिशाह हजूरि थप्यो 'सिंह सूरि', मंडाण मन्त्रीश्वर१५ बींजियैजी।
'जिणचन्द्र'१६ अने 'जिनसिंह सूरि', चन्द्र सूरज ज्युं प्रतपीजियै जी॥७॥
एजी 'रीहड़' वंश विभूषण हंस, खरतर गच्छ-समुद्र शशि।
प्रतप्यो 'जिनमाणिक सूरि'के पाट१७, प्रभाकर ज्युं प्रणमो उलसी॥
मन शुद्ध 'अकबर' मानतु है, जग जाणत है परतीति इसी।
जिणचन्द्र मुणिन्द चिरं प्रतपो, 'समयसुन्दर' देत आशीस इसी ॥८॥

---

८ मध्य ९ इम १० ध्यान ११ प्रेम धरै १२ जु १३ चामरछत्र मुरा तब भेट १४ रीझिये १५ कीजियेशु १६ पदे १७ पट्ट।

वक्तव्य ।

सतरहवां सैका भारतका स्वर्णयुग था। इससे पहिलेकी कई शताब्दियोंकी तुलना करनेसे इस समयमें युगान्तर सा ज्ञात होता है। उस समय जैन धर्मकी अवस्था बड़ी उन्नत थी। आचार्य-देवकी आज्ञा, भक्तोंके लिये शाही आज्ञासे भी कहीं अधिक उपादेय समझी जाती थी, इसी कारण प्रत्येक गच्छ और समुदायका संगठन इतना सुदृढ़ था कि उसके सामने बड़ी बड़ी सत्ताएं भी टकरा कर पीछे हट जातीं और सिर झुकाती थीं। भक्तिवादका साम्राज्य इस समय बड़े जोरोंसे था। जैन धर्ममें ही नहीं बल्कि अन्य धर्मोंमें भी भक्ति रसका पोषण इस समय प्रचुर प्रमाणमे हुआ था। हमने हमारे चरित्र नायकके गुणानुवादकी, तत्कालीन लिखी हुई १०८ गहूंलियां (भक्तिकाव्य) संग्रहकी हैं, जिनको पढ़नेसे उस समयके विद्वानोंकी आचार्य देवके प्रति कितनी अगाध भक्ति थी, इसका अच्छा परिचय मिल जाता है।

हिन्दी-भाषाका अधिकाधिक प्रचार और सुव्यवस्थित रूपसे गठन भी इस शताब्दीसे प्रारम्भ हुआ है। इस शताब्दीके रचित और लिखित ग्रन्थोंकी संख्या बहुत विशाल है। अतः साहित्य युगके नाते भी यह शताब्दी विशेष उल्लेखनीय है।

सम्राट् अकबर आदि उस समयके राज्य शासक स्वयं विद्याविलासी थे, अतः प्रत्येक धर्म-प्रचारक विद्वानकी, विद्वत्ता और आचार ही सर्वोच्च कसौटी थी, इस कसौटीपर जैन विद्वानोंने उत्तीर्ण होकर राज्य शासकों एवं अन्य विद्वानोंपर भी अपना असाधारण प्रभाव जमा लिया था। जिसके फल स्वरूप इस समय ऐसे कई काम हुए, जो सदाके लिये चिरस्मरणीय हैं। अकबरके शासनकालमें प्रजाको जो शान्ति प्राप्त हुई, इसमें जैनाचार्यों और विद्वानोंका सतत उपदेश ही प्रधान कारण है।

जैनाचार्योंने इसके पहले और पीछे भी, समय समयपर राज-सभाओंमें बहुत सन्मान प्राप्त किया है एवं जैन धर्मकी महान सेवा और अत्यधिक प्रचार करके शासनकी परम प्रभावना की है। आर्य्य नृपतियोंको तो बात ही क्या? प्रत्येक विद्याविलासी नृपतियोंकी राजसभाओंमें उनकी विद्यमानताके प्रमाण मौजूद हैं! उन्होंने अपनी प्रखर मेधा और असाधारण पाण्डित्यका परिचय देकर अजैन विद्वानों पर भी अपनी विद्वत्ता एवं उत्कृष्ट चारित्रका गहरा प्रभाव डाला है।

राजसभाओंमें खरतर-गच्छाचार्य्य।

खरतर गच्छके विद्वानोंका नृपतियोंकी सभाओंमें बड़ा ही गौरवास्पद स्थानथा। "खरतर" विरुद प्राप्तिसे लगाकर जिन जिन आचार्योंने राज सभाओंमें अपना प्रभाव फैलाकर सन्मान प्राप्त किया है, उनके कतिपय नाम ये हैं:—श्रीजिनेश्वर-सूरिजीने गुर्जराधीश दुर्लभ राज+की सभामें, श्रीजिनवल्लभसूरिजीने

+अहिप दुल्लह राए, सरसइ अंको वसोहिए सहए।
मज्झे रायसहं पविसिऊण लोयागमाणु मयं ॥ ६६ ॥
(गणधर सार्ध शतकम)

धारानरेश नरवर्मकी सभामें, श्रीजिनदत्तसूरिजीका अजमेरके अर्णो-राज और त्रिभुवनगिरिके कुमारपालका प्रतिबोध* मणिधारी-श्रीजिनचन्द्रसूरिजीका दिल्लीके राजा मदनपालपर प्रभाव× और श्रीजिनपति सूरिजीका अन्तिम हिन्दूसम्राट पृथ्वीराजकी सभामें तथा राजा जयसिंह एवं आशिकान—रेश भीमसिंहकी सभामें वादियोंको शास्त्रार्थमें परास्त कर सम्मानित होना, इतिहाससे भली भांति सिद्ध है–।

आर्य-संस्कृतिके निनाशक मुसलमान बादशाहोंपर भी उनका प्रभाव विशेष उल्लेखनीय है। क्योंकि भिन्न जाति, भिन्न प्रकृति और भिन्न विचारवाले मुसलमान बादशाहोंपर प्रभाव जमाना देशी नरेशोंकी अपेक्षा अति कठिन कार्य था। वे लोग हरएक पर जरा-जरासी बातोंमे बिगड़ जाते और यद्वातद्वा दण्ड दे डालते थे। उन मुसलमान सम्राटोंपर सर्वप्रथम प्रभाव जमानेका श्रेय भी खरतर गच्छके आचार्योंको ही है।

---

* इन सब बातोंके लिये "गणधर सार्धशतक बृहद्वृत्ति" देखना चाहिये।

×यह सम्बन्ध पत्र ८६ को प्राचीन गुर्वावलीमें है।

– देखें 'ऐतिहासिक जैन काव्यसंग्रह' के पृष्ट ९ में—

"पामिउ जेतु छत्तीस विवादहि, जयसिंह पुहविय परषदह ए।
वोहिय पुहवी पमुह नरिन्दह, निसुणिय वयणि जिण धम्मु करइ ए ॥१६॥"
इन शास्त्रार्थोंका विस्तृत और मनोरंजक वर्णन प्राचीन गुर्वावली पत्र २६) में है।

खरतर गच्छके और भी कई आचार्योंने नृपति द्वारा सम्मान प्राप्त किया है, जिसका उल्लेख प्राचीन गुर्वावली आदिमें है।

कलिकाल केवली श्री जिनचन्द्रसूरिजी (सं० १३४१—७६) ने सुलतान कुतुबुद्दीनको चमत्कृत किया× । उसके पश्चात श्री जिनप्रभ सूरिजी– ने सं० १३८५ पोष शुक्ला २ (८) शनिवारके सन्ध्या समय महमद तुगलक बादशाहसे मिलकर इतना जबरदस्त प्रभाव डाला कि वह सूरिजीका परमभक्त हो गया, यहांतक कि प्रवासमें भी उनको अपने साथ रखा था। पन्द्रहवीं शताब्दीमें वेगडशाखाके प्रथम आचार्य श्री जिनेश्वर सूरिजीने महमद वेगड़ेसे अच्छा सम्मान

× कुतुबदीन सुरताण राउ, रंजिउ स मणोहरू ।
जगि पयडउ जिणचन्दसूरि, सूरिहि सिर सेहरू ॥
(जिनकुशलसूरि रास, ऐ. जै. का. सं० पृ० १६)

– इनके विषयमें 'विविध तीर्थ कल्प' कन्नानय तीर्थ कल्पद्वय और पं० लालचन्द भगवानदास गांधीका लेख 'जैन' पत्रके रौप्यमहोत्सवांक, और गीतत्रय ऐ. जै. का. सं० पृ० ११ से १४ में देखने चाहिये ।

पुरातत्त्वविद् श्रीजिनविजयजी विविध तीर्थ कल्पके प्रस्ताविक निवेदनमें जिन प्रभसूरिजीके विषयमें लिखते हैं :—"ग्रन्थकार अपने समयके एक बड़े भारी विद्वान् और प्रतिभाशाली जैन आचार्य थे। जिस तरह विक्रमकी १७ वीं शताब्दीमें मुगल सम्राट् अकबर बादशाहके दरबारमें जैन जगद्गुरु हीरविजयसूरिने शाही सम्मान प्राप्त किया था, उसी तरह जिनप्रभसूरिने भी १४ वीं शताब्दीमें तुगलक सुलतान महम्मद शाहके दरबारमें बड़ा गौरव प्राप्त किया था। भारतके मुसलमान बादशाहोंके दरबारमें, जैन-धर्मका महत्त्व बतलानेवाले और उसका गौरव बढ़ानेवाले शायद सबसे पहले ये ही आचार्य हुए।"

प्राप्त किया था÷। सोलहवीं शताब्दीके पूर्वार्द्धमें उपा० सिद्धान्त रुचिजीने मांडवगढ़में गयासुद्दीनकी सभामें विजय प्राप्त की× एवं उत्तरार्द्धमें श्री जिनहंस सूरिजीने सिकन्दर लोदी बादशाहके चित्तको चमत्कृतकर ५०० कैदियोंको छुड़ाया था*।

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिजी जो कि हमारे चरित्र नायक हैं, उन्होंने सम्राट अकबर और जहाँगीरको प्रतिबोध देकर शासनोन्नति की है। जिसका परिचय इस ग्रन्थसे भलीभांति मिल जायगा। उनके पश्चात् श्रीजिनसिंहसूरिजीको सम्राट जहाँगीरने युगप्रधान–

÷ देखो जिनेश्वरसूरि गीत (ऐ० जै० का सं० पृ० ३१४) :—
परतो पूर्यो खान नो, 'अणहिलवाड़े' मांहि हो।
महाजन बंद मुकावियो, मेल्यउ संघ उच्छाहि हो॥ स०॥ ६॥
'राजनगर' नइ पांगुर्या, प्रतिबोध्यो 'महमद' हो।
पद ठवणो परगट कियो, दुख दोहग गया रद हो॥ स०॥ ७॥

× श्री ग्यासदीनशाहेर्महासभालब्धवादिविजयानाम्।
श्री सिद्धान्तरुचि महोपाध्यायानां विनेयेन॥ २॥
(सं० १५१९ साधुसोम कृत, महावीर चरित्र वृत्तौ)

* देखें ऐतिहासिक जैन काव्यसंग्रह पृ० ५३ में भक्तिलाभोपाध्याय कृत 'श्रीजिन हंससूरि गुरु गीतम्' और पट्टावलियें।

÷सं० १६७५ खरतरवसहीके शांति प्रासाद आदिके लेखोंमें:—"दिल्लीपति पातशाह श्री जहांगीर प्रदत्त युगप्रधान विरुदधारक श्री अकबर शाहिरंजक कठिन काश्मीरादि देश विहारकारक युग प्रधान श्री जिनसिंह सूरि।"

सं० १६७९ में कविवर समयसुन्दरजीके स्वयं लिखित गुर्वावली पत्र १ में
श्री दिल्लीपति पातशाहि विभुना, श्री नूरदी साहिना।
येभ्यो दायि युगप्रधान पदवी, पट्टानुपट्टक्रमा।
भू पीठोत्तम चोपड़ाभिधकुल, प्रालेय रोचिः प्रभा।
जीयाज्जिनसिंह सूरि गुरवः, प्रौढ़ प्रतापोदयः॥ १॥

पदसे विभूषित किया, उनके पट्टधर श्रीजिनराजसूरिजी× भी सं० १६८६ मार्ग-शीर्ष कृष्णा ४ को आगरे में सम्राट् शाहजहाँसे मिले थे। श्रीजिनरत्नसूरिजी और श्रीजिनरंगसूरिजीका भी शाही दरबार और नवाबोंसे अच्छा सम्बन्ध रहा था, जिसके प्रमाण स्वरूप कई शाही फरमान, लखनऊके खरतर गच्छीय ज्ञान भंडार और बीकानेरके श्रीपूज्यजी श्रीजिन-चारित्रसूरिजीके पास उपलब्ध हैं।

बादशाह औरङ्गजेब बड़ा क्रूर-नीतिज्ञ और कट्टर मुसलमान था। अतः तभीसे शाही दरबारसे जैनाचार्योंका सम्बन्ध मन्द पड़ गया। अस्तु, कहनेका सारांश यह है कि खरतरगच्छाचार्योंका प्रभाव देशी नरेशों तक ही सीमित न होकर मुसलमान बादशाहों पर भी यथेष्ट था।

हम ऊपर बतला चुके हैं कि खरतरगच्छाचार्योंका प्रभाव आर्य्य नरपतियों पर खूब जमा हुआ था यहां तक कि वे उन्हे अपना धर्म-गुरु मानते थे—बीकानेर, जैसलमेर, जोधपुर, जयपुर आदि नरेशोंसे तो अविछिन्न सम्बन्ध रहा है, जिसके फल स्वरूप आज भी ताम्र-पत्र, पट्टे, परवाने, खास रुक्के आदि विपुल परिमाणमें उपलब्ध हैं। बस, इन बातोंका विवेचन यहीं समाप्त कर प्रस्तुत पुस्तकके लिखे जानेका कारण दर्शाते हैं।

इति सं० १६७९ वर्षे भाद्र पद ११ दिने। श्री प्रल्हादनपुरे। श्री समय-सुन्दरोपाध्यायैर्लिलेखि पंडित सहजविमल मुनि पठनार्थम्।

(हमारे संग्रहमें)

× देखें ऐतिहासिक जैन काव्यसंग्रह पृ० १७८

हमारी साहित्य प्रगति—

सं० १६८४ के वसन्त पंचमीको परम पूज्य आचार्य महाराज, सकलागम रहस्य वेदी, परम गीतार्थ, श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरिजी अपने विद्वान शिष्य, प्रवर्त्तक सुखसागरजी आदि मुनि मण्डलके साथ बीकानेर पधारे। सौभाग्यवश उनका चातुर्मास भी हमारे मकानमें हुआ, इससे हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। प्रतिक्रमण, व्याख्यान श्रवणादिके अतिरिक्त समय समय पर पूज्य आचार्यश्री एवं प्रवर्त्तकजी आदिसे सैद्धान्तिक विषयोंमें प्रश्नोत्तर करते हुए धार्मिक तत्त्वोंका यत्किञ्चित् बोध हुआ। यद्यपि आपश्रीका लगभग तीन वर्ष बीकानेरमें विराजना हुआ, किन्तु हमे केवल १॥ वर्ष ही आपके सत्समागमका सुयोग मिला।

एक दिन प्रवर्त्तकजीसे "आनन्द काव्य महोदधि, ७वां मौक्तिक" लाकर श्रीयुत मोहनलाल दलीचन्द देसाइ B A L. L. B का "कविवर समयसुन्दर" नामक निबन्ध पढा, तभी से हमारे हृदयमें कविवरके प्रति अगाध भक्ति उत्पन्न हुई और शीघ्र ही उनकी कृतियोंका खोज-शोध करना आरम्भ कर दिया। "श्रीमहावीर जैन मण्डल" के कतिपय हस्तलिखित ग्रन्थोंको मंगवाया। सौभाग्यवश उनमें हमें एक ऐसा गुटका (पुस्तकाकार प्रति) मिला, जिसने हमारी मानसिक-भावनाको अत्यधिक उत्तेजन दिया, इसका कारण था—उक्त गुटकेमें दो सौके लगभग कविवरकी छोटी कृतियोंका उपलब्ध होना, जिनमें बहुत सी तो देसाइ महोदयको भी अनुपलब्ध थी। बस, उत्तरोत्तर खोज शोधकी रुचि बढती गई, हमने इतने अधिक प्रमाणमें कार्य

करनेका अवसर दिया कि जो हमारे लिये एक तरहसे कल्पनातीत और असम्भवसा था।

इस ग्रन्थकी जन्म कथा—

सं० १९८६ में यु० प्र० श्रीजिनचन्द्रसूरिजीका संक्षिप्त परिचय पट्टावलीके आधारसे लिखा। जिसका उद्देश्य एक मात्र यही था कि कविवर समयसुन्दरजी आपके प्रशिष्य थे, अतः उनके चरित्र सम्पादनमें काम लगेगा, किन्तु उस समय यह कल्पना तक न हुई कि कविवरका जीवन-चरित्र लिखनेके पूर्व ही, इन महापुरुषकी जीवनी इतने विस्तारसे लिखनेका सुयोग मिलेगा। सं० १९८७ के आश्विन कृष्णा २ को बीकानेरमें हमारे चरित्र नायककी जयन्ती मनाई, उस समय भी आपश्री के विषयमें संक्षेपतः कइ पृष्ट लिखे गये। तदनन्तर तीसरी बार जिनदत्तसूरिचरित्र—उत्तरार्द्ध, गणधरसार्धशतक (भाषान्तर) आदिमें वर्णित चमत्कारिक बातों (जो इस ग्रन्थके १६ वें प्रकरणमें हैं) के साथ चरित्र लिखा गया। उसके बाद खोज-शोध करते हुए नयी नयी सामग्री प्राप्त होने लगी, उसी वर्षमें श्रीपूज्यजी महाराजके संग्रहका अवलोकन किया और उपा० श्रीजयचंद्रजी गणिके ज्ञान भण्डारके पुस्तकोंकी ज्ञातव्य सूचि बनाई। इन भण्डारोंमें भी हमें प्रचुर सामग्री मिली, तत्संबंधी साहित्य, गहुंलियों प्रशस्तियों आदिकी नकल की गई। सौभाग्यवश "अकबर प्रतिबोध रास" भी उ० श्रीजयचन्द्रजीके "ज्ञान भण्डार" की सूचि करते हुए उपलब्ध हुआ, अन्यान्य छोटे बड़े ज्ञान भण्डारोंसे भी यथेष्ट सामग्री मिलने लगी ; जिससे हमारे चित्तमें परम सन्तोष और उत्साहकी

अभिवृद्धि होने लगी। आखिर सं० १६८६ में समस्त प्रमाणोंका सार खींच कर मुद्रणार्थ चौथी कॉपी तैयार की गई उसमें जो कुछ लिखना अवशेष था सं० १६६० में पूर्णकर दिया और यह इच्छा हुई कि इसे श्री० देसाइ, श्रीजिनविजयजी, नाहरजी, जयसागरसूरिजी आदि इतिहास वेत्ताओंको दिखला कर शीघ्र ही छपा दें, किन्तु किसी अज्ञात शक्तिकी प्रेरणासे वह प्रेसकॉपी न तो कहीं भेजी गई और न प्रकाशनकी व्यवस्था ही हुई। गत वर्षमें बीकानेरके बृहत् ज्ञान-भण्डारके हस्तलिखित ग्रन्थोंकी सूचि, छह मासके अथक परिश्रमसे निर्माण करनेके समय भी ऐतिहासिक खोज शोध, अध्ययन और इसके सहायक अन्यान्य ग्रन्थोंको देखनेका कार्य चालू रखा। फलतः शुद्धि और वृद्धि द्वारा ५ वर्षोंकी शोध-खोजके परिणाम स्वरूप जिनचंद्र सूरिजी रूपी चंद्रमाकी १६ कलाओंके सूचक १६ (मूल) फर्मों और १६ प्रकरणोंमे विभक्त होकर यह विस्तृत ग्रन्थ, जिसका कि इतना बड़ा होनेकी कोई सम्भावना ही नहीं थी, आज हमें सुहृद पाठकोंके समक्ष रखते हुए परम हर्ष होता है।

प्रयुक्त सामग्रीकी प्रामाणिकता—

हमने सूरिजीके जीवन चरित्रकी प्रायः सभी बातें तत्कालीन लिखित विश्वसनीय प्रमाणोंके आधारसे ही लिखी हैं। विहार पत्र गहूंलियें आदि अधिकांश सामग्री हमारे संग्रहमें मौजूद हैं। पहले हमारा यह विचार था कि इस ग्रन्थकी समस्त साधन, सामग्रीको ग्रन्थके परिशिष्टमें प्रकाशित कर दी जाय किन्तु यह विचार अन्तमें स्थिर न रह सका। क्योंकि ऐसा करनेसे मूल ग्रन्थसे भी परिशिष्ट

लम्बा हो जाता, जो ग्रन्थके लिये शोभास्पद नहीं होता। अतएव प्रमाण साक्षात्कारके निमित्त फूटनोटमें अवतरण देकर कतिपय अत्यावश्यक सामग्री "परिशिष्ट" मे दे दी है एवं रास और उपयोगी गहूंलिया "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" मे प्रकाशित कर दी है।

हमे घटनाओंको क्रमिक लिखनेमे दो विहार पत्रोंसे जो कि हमारे संग्रहमे है, पूर्ण सहायता मिली है। सच पूछें, तो इनके बिना संवत्सरानुक्रमसे जीवनी लिखना असम्भव था। पहला विहार-पत्र तत्कालीन लिखा हुआ है, वह जर्जरित जीर्ण आदर्श नष्ट न हो जाय इसलिये हमने उसका चित्र पुस्तकके परिशिष्टमे लगा दिया है, जिससे पाठकोंको जीर्ण प्रथमादर्शका साक्षात् दर्शन हो जाय और साथ साथ हमारे लिखित बातोंको जाँच करनेमे भी सुगमता मिले। ऐतिहासिक संसारसे अज्ञात वृत्तान्त, मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रजीका मृत्यु-समय भी इसी विहार पत्रमे है अतः यह पत्र बहुत महत्वपूर्ण है। दूसरा विहार पत्र हमारे ख्यालसे कवि राजलाभ या उनके शिष्यका लिखा हुआ है। उसका लेखन समय अठारहवीं शताब्दीका पूर्वार्ध है, अत. प्राचीनताके नाते हमने इस पत्रसे भी, अधिक प्रामाणिक होनेसे पहले पत्रका विशेष उपयोग लिया है।

छट्ठा प्रकरण "अकबर आमन्त्रण" प्राय. 'अकबर प्रतिबोध रास' के आधार पर ही लिखा है, जिसकी मूल प्रति, कर्त्ताकी स्वयं लिखित उ० श्रीजयचन्द्रजी गणिके भण्डार (बीकानेर) मे है और इसे "ऐ० जैन काव्य संग्रह" में हमने प्रकाशित कर दिया है। कर्मचन्द्र-

वंश प्रबन्ध वृत्ति* से हमने पूर्णत. सहायता ली है, क्योंकि उसमें भी विशेष सामग्री है—वह सबसे अधिक प्राचीन, (रचना संवत् १६५०-५५) विश्वशनीय और सूरिजीके साथ ही लाहोर जानेवाले परम गीतार्थ विद्वानकी रचना है, अतएव इसमें सन्देहको तनिक भी स्थान नहीं है। 'अकबर प्रतिबोध' और 'युगप्रधान पद प्राप्ति' नामक प्रकरण द्वय इसी ग्रन्थके मुख्याधारसे लिखे गये हैं। इनके अतिरिक्त अनेकों शिलालेख, प्रशस्तियों, प्राचीन पट्टावलियें, हस्त लिखित ग्रन्थ आदि प्रामाणिक साधनों द्वारा इस ग्रन्थका संकलन हुआ है। 'सहायकग्रन्थ सूचि' में, जिन-जिन ग्रन्थोंकी सहायता ली गई है, उनके नाम दे दिये गये हैं, बाकी फुटकर कृतियोंके नाम फुटनोटमें निर्देश कर दिये हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थकी उपयोगिता—

सूरिजीसे सम्बन्ध रखनेवाले प्रायः सभी विषयोंपर प्रकाश डालनेका यथासाध्य प्रयास किया गया है। द्वितीय प्रकरणमें सूरिजी के पूर्ववर्त्ती आचार्यों, १३ वें प्रकरणमें शिष्य-समुदाय और १४ वें प्रकरणमें आज्ञानुवर्त्ती साधुसङ्घके परिचयके साथ साथ उनके रचित ग्रन्थोंकी विस्तृत नोंध भी दे दी गयी है, जिससे खरतरगच्छके विद्वानों की उल्लेखनीय साहित्य-सेवाका खासा परिचय मिल जायगा। इसी प्रकार १५ वें प्रकरणमें भक्त श्रावकोंकी स्तुत्य शासन-सेवा पर प्रकाश डाला गया है।

---

* इस ग्रन्थकी हस्तलिखित प्रति हमें भी जिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भण्डार—बीकानेरसे प्राप्त हुई थी, पर प्रति अशुद्ध होनेसे इस ग्रन्थमें उसके अवतरण (श्लोक) दिये गये हैं—उनमें भी अशुद्धियां रह गयी हैं, और भी दृष्टि और मुद्रण दोषकी अशुद्धियोंके संशोधन स्वरूप 'शुद्धा-शुद्धि पत्र' दे दिया गया है।

यद्यपि मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजीकी जीवनी कई ग्रन्थोंमे प्रगट हो चुकी हैं पर तथाविध खोज शोध और सामग्रीके अभावसे अद्यावधि ऐतिहासिक संसारमे उनके और उनके पुत्र भाग्यचन्द्र लक्ष्मीचन्द्रके विषयमे अनेक भ्रमणाएं* चली आती थी, हमने उन सबका तत्कालीन विश्वसनीय प्रमाणोंके आधारसे निराकरण कर इस ग्रन्थमे मन्त्रीश्वरकी प्रामाणिक जीवनी जनताके समक्ष रखनेका भरसक प्रयत्न किया है। अत यह ग्रन्थ सूरिजीके जीवनीके साथ-साथ उस समयके खरतरगच्छीय विद्वानों उनके कृतियों, भक्त श्रावकों आदि अनेक ज्ञातव्य बातोंके जाननेमे परम उपयोगी होगा।

स्पष्टीकरण—

"अकबर प्रतिबोध रास" और कर्मचन्द्र मंत्रि-वंश प्रबन्धमें परस्पर साधारण दो बातोंका वैषम्य है 'रास' मे, अकबरका कर्मचन्द्रसे पूछना और उनका सूरिजीके राजनगरमे अवस्थित होना बतलाना, एवं "वंश-प्रबन्ध" के अनुसार खम्भातमे होना। दूसरा 'रास' मे सूरिजीके लाहोर पधारनेके पश्चात् अष्टोत्तरी-स्नात्र-महोत्सव होना और "वंश प्रबन्ध" मे पहिले होना। इन पाठांतरोंपर

* बड़वा जैन मित्रमण्डल-भावनगरसे प्रकाशित जैन स्पेशीयल ट्रेन स्मरणांकके पृष्ठ ८९ में "करमचन्द दीवान दीलही मां आवीने रह्या, त्यां तेमणे अकबर बादशाह नो सारो प्रेम जीत्यो अने श्वेताम्बर जैन सघ ना प्रसिद्ध विद्वान् श्री हीरविजय सूरिने, सम्राट् अकबर ना दरबार मां बोलाववां मां करमचन्द दीवाने ज आगळ पडतो भाग लीधो हतो" लिखा है और भाग्यचन्द्र लक्ष्मीचन्द्रका मृत्यु समय ई० सं० १६१३ लिखा है जो सर्वथा असिद्ध है।

विचार करनेसे ज्ञात हुआ कि "वंशप्रबन्ध" में, सूरिजीसे पहले वा० मानसिंहजी (जिनसिंह सूरि) का लाहोर जानेका जिक्र ही नहीं किया है अतः संभव है कि वाचकजीको लाहोर भेजनेके समय सूरि महाराज राजनगरमें हों। हां ? सूरिजी तो खम्भातसे ही लाहोर पधारे थे यह बात समयसुन्दरजी कृत अष्टकादिसे भलीभांति सिद्ध है। अष्टोत्तरी स्नात्रके विषयमें "वंश-प्रबन्ध" का कथन ही विशेष ग्राह्य एवं विश्वसनीय है, क्योंकि 'जहांगीरनामे' में भी सं० १६४७ में जहांगीरके पुत्री जन्मका उल्लेख है और अष्टोत्तरी स्नात्र भी उसी पुत्रीके जन्मदोषके उपशान्तिके निमत्त ही हुआ था। अतः हमने "रास" के अनुसार सूरिजीके लाहोर पधारनेके पश्चात् आनेवाली चैत्री पूनमका लिखा है किन्तु वास्तवमें सं० १६४८ की चैत्री पूनम होना चाहिये।

दूसरे प्रकरण (पृ० १५) मे "संदेह दोलावली बृहद् वृत्ति" को भ्रमसे श्रीजिन प्रबोध सूरि द्वारा रचित लिखा है किन्तु यह कृति प्रबोधचन्द्र कृत है। पृ० १६ में सूरि परम्परामें जिनलब्धिसूरिजी-नाम छूट गया है ये सं० १४०० के आषाढ़ शुक्ला १ को श्रीजिन-पद्मसूरिजीके पाटपर बैठे, श्रीतरुणप्रभाचार्यने इन्हें सूरि मंत्र दिया। इनके रचित एक विद्वत्तापूर्ण स्तोत्र हमारे संग्रहमें है। सं० १४०६ में इनका स्वर्गवास हुआ।

पृ० १४० के फुटनोटमें दिया हुआ सं० १६६८ का लेख, हमारे चरित्र नायकसे प्रतिष्ठित मूर्तिका न होकर आद्यपक्षीय श्रीजिन-सिंहसूरिके शिष्य श्रीजिनचन्द्र सूरिजी द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमाका है।

पृ० १७१ में "ऋषिमण्डल वृत्ति" का रचनाकाल श्रीदेशाईके लिखे अनुसार सं० १७०५ लिखा है, किन्तु हमारे 'प्रशस्ति संग्रह' में उस ग्रन्थकी प्रशस्ति देखनेपर ज्ञात हुआ, कि उक्त ग्रन्थ सं० १७०४ में रचित है।

पृ० २२२ में "राजपूतानेके जैन वीर" के अनुसार जयपुरके राजा अभयसिंहका उल्लेख किया है, किन्तु उस समय जयपुरका अभयसिंह नामक कोई राजा नहीं था।

चित्र और फरमान पत्र—

सूरिजीके अकबर मिलनका चित्र* इस पुस्तकमें दिया गया है। उसका ब्लॉक हमें "श्री जिनकृपाचन्द्र सूरि ज्ञान भण्डार" इन्दौरसे प्राप्त हुआ है, एतदर्थ हम उक्त ज्ञान भण्डारके संरक्षक चांदमलजीको धन्यवाद देते हैं। ऐसे प्राचीन चित्र कई जगह उपलब्ध है, (देखे पृष्ठ ११० की फुटनोट) एवं दादाजीके मन्दिरोंकी दीवारोंपर भी चित्रित पाये जाते हैं। सूरिजीके विराजे हुए और उनके समक्ष सम्राट् अकबरादि हाथ जोड़े खड़े हैं—ऐसा चित्र कलकत्तेमें सुप्रसिद्ध राय बद्रीदास बहादुरके मन्दिरमें लगा हुआ है। चरित्र नायकका एक स्वतन्त्र फोटो सेठुजीके मन्दिर (बीकानेर) में भी है।

* श्रीमान् हीरविजय सूरिजीका भी ऐसा ही फोटो कइ ग्रन्थोंमें प्रकाशित हुआ है, पर उसकी प्राचीनता और प्रमाणिकताके विषयमें पुरातत्वविद श्री विद्याविजयजीसे पूछनेपर, मिती फाल्गुन शुक्ला १० (वी० सं० २४६१) पाटणसे दिये हुए कार्डमें आप इस प्रकार लिखते हैं :—

१ हीर वि० सू० और अकबरके मिलनका चित्र बनावटी है। मैंने लखनऊमें बनवाया था।

पंचनदी साधने समयका एक और चित्र श्री पूज्य जी श्री जिन-चारित्रसूरिजीके पास है।

सूरि जीकी मूर्ति, जो कि श्री ऋषभ देव जीके मन्दिरमें है और लेख पृ० १५८ में छपा है, उसका सुन्दर फोटो इस पुस्तकमें दिया गया है, किन्तु उस स्थानकी विषमताके कारण फोटोमें शिला-लेखकी प्रतिकृति न आ सकी।

आषाढी अष्टान्हिकाका मूल फरमान जो कि हमें पं० प्र० यतिवर्य सूर्यमल जीकी कृपासे प्राप्त हुआ है। उसका फोटो इसके परिशिष्टमें लगा दिया है। लखनऊके भण्डारसे प्राप्त करनेमे हम यति जीका आभार मानते हैं। दूसरा शत्रुञ्जय तीर्थ विषयक फर-मान (मूल) खोज करनेपर भी न मिला। उसका अनुवाद बीकानेर ज्ञान-भण्डारस्थ पत्रसे नकलकर परिशिष्टमें प्रकाशित किया है। सम्भव है कि मूल फरमानके मिलनेसे अच्छा प्रकाश पड़े। अन्यान्य फरमान पत्र खोज करनेपर भी प्राप्त न हुए इसके कारणोंमे एक कारण यह भी है कि सूरि जीके पश्चात् खरतर गच्छमे तीन गच्छ-भेद हो गये—(१) जिनसागर सूरि, (२) जिनरंग सूरि, (३) जिनमहेन्द्र सूरिजीसे। इससे सामग्री यत्र-तत्र बिखर गयी और उसका पता लगाना दुष्कर हो गया। राधनपुरसे श्री जिनचन्द्र सूरि जी (सं० १८३४—१८५६) के जेसलमेर उ० उदयधर्मजीको दिये हुए पत्रसे ज्ञात होता है कि उस समय तक तो कई फरमान विद्यमान थे। उस पत्रका आवश्यकीय अंश यहा उद्धृत करते हैं। यह पत्र हमारे संग्रहमें है।

"पं० क्षमाकल्याण गणि चौमास ऊनयें जेसलमेर थी। विहार करस्यै सो तुमे जेसलमेर पूठियानी थिति मरजाद सरव साचवज्यो श्री संघ नूं पिण लिख भेजसा पं० क्षमाकल्याण गणि नूं पिण लिख्यो छै सो चालना तुम नुं सुपरत करस्यै तुमे तथा पं० क्षमा कल्याण आपस में घणुं संप राखज्यो हेतमें सरव रूड़ो छै तथा गांठड़ी नी तुमे पाच पाती करी हुती ते गाठड़ीमें जूना परवाना मुसलमानी अक्खर ना हुता ते परवाना ठावड़ा करि नें पाली पहुं-चता करेज्यो पालीवाला नूं इननो लिख देज्यो राधनपुर ठावड़ा पुंहचावेज्यो पाली थी राधणपुर ठावा पहुंचस्यै वल्ला पत्र देज्यो मिती द्वितीय भाद्रवा वदि १४"

श्री जिनसागर सूरि शाखाके ज्ञान-भंडार (बीकानेर) में कइ शाही फरमान विद्यमान होनेका कहा जाता है, पर भंडार कइ वर्षोंसे वन्द है, अतः प्राप्त न हो सके। प्रयत्न चालु है, मिल गये तो द्वितीया वृत्तिके समय प्रकाशित कर दिये जाँयगे।

सूरि जीने सं० १६५४ मे भी शत्रुंजय की यात्रा की थी एवं वहां मोटी टुंक (विमलवसही) के समक्ष सभा मण्डपमें दादा श्री जिनदत्त सूरि जी और श्री जिनकुशल सूरि जीकी पादुकाएं प्रतिष्ठित की थीं। उन दोनोंके लेख सरीखे हैं अतः पाठकोंके अवलोकनार्थ एक लेख यहां देते हैं :—

सं० १६५४ वर्षे जेठ सुदि ११ रवौ दिने श्री वृहत्खरतरगच्छे श्री जिन कुशल सूरिजी पादुका श्री युगप्रधान श्री जिनचन्द सूरिभिः प्रतिष्ठितं च सं० सोना पुत्र मन्ना जगदास पुत्र सं० ठाकरसीह पुत्र संघवी सामल का० सपरिवारेण।

शत्रुंजय पर शिवा सोम जीकी टुंकमें श्री जिनचन्द्र सूर जी और श्री जिनसिंह सूरि जीकी पादुकायें श्री जिनराज सूरिजीकी प्रतिष्ठित हैं, जिनके लेख क्रमशः इस प्रकार है :—

संवत् १६८१........ ....युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि-श्वराणा पादुके कारिते डोसी गोत्रीय सं० फ०.... ....श्री कमल-लाभोपाध्याय पं० लब्धिकीतिगणि पं० राजहंस गणि पं० वा। मरुदेव विजयादि युतेन उ०(प?)देशेन तव श्रेयसे शुभं भवतु प्रतिष्ठितं बृहत्खरतर गच्छाधिराज. श्री जिनराज सूरिभि. ~

सं० १६७१ वर्षे वैशाख सुदि १३ शुक्रे काश्माराव (काश्मीराद्य ?) नार्य देश बोध विहारादि प्रचार पथार मारि प्रवर्त्तक सर्वविधान नर्त्तकी नर्त्तक जहागीर नूरदीन पातिसाहि प्रदत्त युगप्रधान पद श्री जिनसिंह सूरीणा पादुके प्रतिष्ठिते श्री जिनराज सूरिभि· मन्त्र सूरि राजाधिराजैः॥

इनके अतिरिक्त और भी तत्कालीन अनेक विद्वानोंकी चरण-पादुकाएं यहां प्रतिष्ठित हैं, जिनके प्रकाशित होनेसे बहुतसा इतिहास प्रकाशमें आ सकता है।

उपसंहार—

सम्राट अकबरके दरबारमें श्रीमान् हीरविजय सूरिजी और श्रीजिनचन्द्र सूरिजीका अच्छा प्रभाव रहा है, जिनमें हीरविजय सूरिजीकी जीवनी तो कई वर्ष पूर्व ही खोज शोध द्वारा प्रकट

* सं० १६७४ में सूरि जीकी चरणपादुकाएं जैसलमेरमें प्रतिष्ठित हैं। देखें जैसलमेर लेख संग्रह, लेखांक २५००

हो चुकी थी किन्तु ऐतिहासिक सामग्री विपुल प्रमाणमें न मिलनेके कारण श्री जिनचन्द्रसूरिजीकी जीवनी अभीतक प्रकाशमें नहीं आयी थी। श्री हीरविजय सूरिजीकी भांति इनकी चरित्र-सामग्री किसी बड़े ग्रन्थाकारमें प्राप्त न होकर "कर्मचन्द्र मन्त्रि वंश प्रबन्ध और रास द्वयके अतिरिक्त अन्य सभी अंग यत्रतत्र बिखरे पड़े थे, उनमें उपलब्ध सर्व साधनोंको एकत्र कर सम्पादन करना कितना कठिन और श्रमसाध्य कार्य है, इसे साहित्य-प्रेमी विद्वान् ही अनुभव कर सकतेहैं। यतः—

विद्वानेव विजानाति विद्वज्जन परिश्रमम्।
नहि वन्ध्या विजानाति गुर्वीं प्रसव वेदनाम्॥

५ वर्षके अनुसन्धान और परिश्रमसे यह ग्रन्थ लिखा गया है और इसे सर्वाङ्ग सुन्दर बनानेका पूर्ण प्रयत्न किया गया है। इस कार्यमें हम कैसे और कहांतक सफल हुए हैं, इसका निर्णय विज्ञ पाठकों ही पर निर्भर करते । यद्यपि हमने लापरवाहीऔर प्रमादसे बचे रहनेमें पूर्ण लक्ष्य रखा है तथापि हमारा यह प्रथम प्रयास है, अतः अनेकों त्रुटियां रह जाना सम्भव है। विद्वज्जन उनका संशोधन कर हमें सूचित करें, द्वितीयावृत्तिमें उनको दूर करनेका यथासाध्य प्रयत्न किया जायगा।

आभार प्रदर्शन—

इस ग्रन्थके निर्माण करनेमें हमें अपने अनेक इष्ट-मित्रोंसे अनेक प्रकारकी सहायता मिली है, अतएव हम अपने समस्त सहायकोंके प्रति धन्यवादपूर्वक हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं। जैन-

साहित्यके धुरन्धर लेखक श्रीयुक्त मोहनलाल दलीचन्द देसाई B A. L. L. B. (वकील हाईकोर्ट, बम्बई) का हम हार्दिक आभार मानते हैं कि *आपने हमारे अनुरोधको तत्काल स्वीकार करके अनेक कार्यों*-में व्यस्त रहते हुए भी हमें विद्वतापूर्ण विस्तृत प्रस्तावना-* लिख भेजी। राजपूत इतिहासके अमर लेखक विश्व विश्रुत श्रद्धेय महामहोपाध्याय रायबहादुर पण्डित गौरीशंकरजी हीराचन्दजी ओझा महोदयने वृद्धावस्थामें शारीरिक अस्वस्थता होते हुए भी अपनी अमूल्य सम्मति प्रदान करके हमें अनुगृहीत किया है। हम यह नहीं जानते कि इन दोनों विद्वानोंके लिये किन शब्दोंमें कृत-ज्ञता प्रकाशित करें।

यह सूचित करते हमें अपार हर्ष होता है कि विद्वद्वर्य श्री लब्धि मुनिजी महाराजने इस ग्रन्थके आधारसे सूरिजीके चरित्रका संस्कृत काव्य रचना प्रारम्भ कर दिया है, एतदर्थ आप श्री कोटिशः साधुवादके पात्र हैं।

विदुषी आर्या श्री प्रमोद श्री महाराजके उपदेशसे ग्रन्थ प्रकाशन होनेकेपूर्वसे ही आपकी स्वर्गीया गुरुवर्या श्री विमलश्रीजी महाराजकी पवित्रस्मृतिमें निःशुल्क वितरणार्थ ४०० प्रतियोंको फलोधी संघने खरीद करनेका वचन देकर ग्रन्थके प्रचार एवं प्रकाशनमें सहायता दी और हमे उत्साहितकिया। एतदर्थ हम आपका आभार मानते हैं।

---

* प्रस्तावनाका हिन्दी अनुवाद कर प्रकाशित करनेका विचार था, पर देसाइ महोदयकी उसे गुजराती भाषा, नागरी लिपिमें प्रकाशित करने की सूचना होनेसे वैसा ही किया गया है।

एवं आशा करते हैं कि इसी तरह अन्य मुनिगण भी हमें साहित्य प्रचारमें प्रोत्साहित करेंगे।

गणाधीश श्री हरिसागरजी प्रवर्तक मुनि श्री सुखसागरजी, विद्वद्वर्य श्री लब्धि मुनिजी, बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर M. A. B. L. M. R. A.S. बाबू शिखरचन्द्रजी कोचर, पं० बलदेवप्रसादजी शास्त्री आदि सभी सहायकोंका हम हृदयसे आभार मानते हैं कि जिन्होंने योग्य सूचनाएं देकर एक नहीं अनेक प्रकारसे हमारी सहायता की है।

विहार मार्गका चित्र हमें श्री० सुन्दर लालजी कोचरने प्रदान किया है इसके लिए हम आपको धन्यवाद देते हैं।

श्रीपूज्यजी श्रीजिन चारित्रसूरिजी, उ० श्री जयचन्द्रजी, यतिवर्य तिलोक मुनिजी आदि भिन्न-भिन्न ज्ञान भण्डारोंके संचालकों एवं उन सहृदय महानुभावोंको भी हम सप्रेम धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने अपने संग्रहके अमूल्य ग्रन्थोंको दिखाने एवं सहानुभूति प्रकट करनेकी कृपा की है।

निवेदक—

अगरचन्द नाहटा

भंवरलाल नाहटा

प्रस्तावना ।

ए वात खास विचारवा योग्य अने लक्ष्मां राखवा योग्य छे के 'भारतवर्ष' एटले हजारो वर्षोना इतिहासनुं एक भव्य खंडेर। ए खंडेर ना खोदाण कामनो अंत नथी, एमाथी हाथ लागती सामग्रीओ अपार छे। आर्यावर्त्त ना प्रजा जीवनपर इतिहासे उपरा उपरी एटला तो थर खडकेला[१] छे के, ए थरो उखेडनाराओनी संख्या मुकावले अल्पमात्र लेखाय। परदेशीओ ना कंइ कंइ तत्वोनो अद्भुत वणाटर आपणा प्रजा-जीवनमां थइ गयो छे, अने एना संशोधने आपणा हाथमां आपणा हास्य आंसुओनी कंइ कंइ कथाओ मुकी छे। ए थरमां थी खोदातुं एक एक न्हानुं चोसलुं[३] पण आखी ऐतिहासिक इमारतना घाट तेमज नकशी विषेनी नित्य नवी समस्याओथी आपणने चकित करे छे।

रूसियानो प्रसिद्ध लेखक मॅक्सिम गोर्की सोवियेट लेखक समुदाय सन्मुख ना भाषण मां कहे छे केः—'लेखकोने हुं कहुंछुं के रूसियानी जुनी तवारीख मां थी युगे युग ना पोपडा[४] उखेलो-उकेलो, अने हुं खात्री आपुंछुं के एमांथी तमने रस भरपूर लेखन सामग्री जडी (मली) रहेशे।' तेज प्रमाणे जैन तवारीखमां थी आ देश ना युगेयुगमा काम आवे तेवी लेखन सामग्री लेखकोने मली रहे तेमछे।

---

१ जमा हुवा, २ बनावट, ३ चौखट, ४ पड।

जैनोए देशनो इतिहास भंडार अने साहित्यनिधि साचवी राख्योछे, तेमानो घणोए अप्रगट पड्योछे, जैनोनी खुदनी तवारीख, तेना महान श्रावकोनी, प्रतिभाशाली आचार्योनी-साधुओनी, पवित्र तीर्थोनी, कलामय मंदिरोनी, गच्छोनी-संप्रदायोनी तवारीख अण-उकेली, सिलसिलाबंध अणलखेली, छिन्न भिन्न दशामां, पण छूटक छूटक प्रचुर माहिती आपनारी घणी सामग्रीवाली स्थितिमां पडी छे; तेमांथी देशना प्रजाजीवनने लगती रस भरी हकीकतो पण खूब मली आवे तेम छे।

ए सौभाग्यनो विषय छे के वर्तमान युगमां अनेकबलो पैकी५ नुं एक बल ते आपणा देशना प्राचीन इतिहास तथा संस्कृति ना प्रामाणिक अभ्यासमा उंडा उतरवानी सत्यशोधक वृत्ति जन्मी चुकी छे। केवल कपोलकल्पित दंतकथाओने भरोसे रही आपणा भूतकालने महोज्वल मान्या करवानी, अथवा तो विदेशी या अन्य इतिहासकारोए करेली केवल उपरछला ६ संशोधनपर अवलंबीने आपणा अतीतनी हीणी गणना करवानी—ए बन्ने आदतो वच्चे आ तुलनात्मक संशोधन दृष्टि इष्ट कार्य साधनारी छे।

आवी वृत्तिए केवल देश अने प्रांतनीज नहीं, पण एकेक प्राचीन नगरनी प्राचीनता तपासवानुं शरु थयुं छे अने ते उपरांत देशवीरो—धर्मवीरोना जीवनचरित्र पण लखावा मंड्या छे ए आ जमानानुं शुभ चिन्ह छे। आ पुस्तक एवो एक प्रयत्न छे।

---

५ शक्तियोंमेंसे, ६ ऊपरी, उपलक।

जैन तवारीखमां पुष्कल७ लेखन सामग्री उपलब्ध थइ शके छे, परंतु तेमां जैनेतर लेखकोए चंचु प्रवेश नथी कर्यो—ने अन्ये प्रयत्न करवानो कोइए संकल्प कर्यो होय तो ते सफल थयो नथी। आथी ते कार्य जैन लेखको, अधिकारीओ, शिक्षको, ग्रेज्युएटो अने साधुओपर आवे छे, कारणके तेमने जैन ग्रंथो अने सामग्रीनो विशेष परिचय करवानो अनुकूलता अने ओगवाइ मली शके छे।

एक विद्वान् लखेछेके:—'इतिहासने सर्जनारा तो गया, पण ए सर्जायेला इतिहासने एकठो करनारा ये नथी जागता। आपणीज माटीमां आपणा रत्नो दटायां। आपण पग नीचे चगदाया ८। एने वीणवा९ माटे दरिया पारथी टॉड आव्या फार्बस अने वाट्सन आव्या; तेओ कंइ खास इतिहास संशोधनने माटे नहोता नीमाया१० हाथमां सोंपायेला पांतोनी हाकेमी करतांज तेओने आपणी प्रेमकथाओनो अने शौर्यवार्त्ताओनो नाद लाग्यो हतो। आपणा खंडेरोमां दटायेला भूतकालनो पोकार एने काने पड्यो हतो। घोडे चडी चडीने ए इतिहासना आशको पहोंटोनी शिखरमालामां भटक्या। अखंड अने रोमांचक इतिहास आपीने आज ए इतिहासना आशको कबरमा सूता छे अने एना लख्या-भाख्यांना आज आपणे भांग्या तूट्या तरजुमा करीए छीए। आपणने-हिन्द मातानी तवारीखना मिथ्याभिमानी वारसदारोने—आपणामांथीज केम कोई टॉडके फार्बस न सांपड्यो? शौर्य तो परवार्यां पण शौर्यना पूजन--अरे स्मरण पण विसार्यां ?

'आज पण गोरा अमलदारो निर्जन, विकट, रोग भर्या प्रदेशोमां

---

७ प्रचुर, ८ कुचलाये, ९ चुगने, १० नियुक्त हुए।

उलट भेर रहे छे—नदननन सर्जे छे, अने कलम तथा केमेरो लईने पोताने वींटलायेली११ नानकडी१२ दुनियानो गाढतम परिचय करील्ये छे। कहो के पी जाय छे। हिन्दनाक हिन्दना कोई पण भागना सौराष्ट्र, गुजरात, मारवाड, मराड वगरना देशी अधिकारी बधुने आवी तालावेली१३ क्यारे लागशे ? सौराष्ट्र, मेवाडनी भूमिन तो पोपडे पोपडे इतिहास बाझ्यो१४ होवानी आपणने जाण छे, गामे गामनो इतिहास आज अधिकारी भाइओने टने१५ आवे छे। नवा युगनु शिक्षण पामेला नवयुवको हारेमी भोगवी रह्या छे। कोई पुस्तक या मासिक वाटे मली आवती असली शौर्य घटनाओने पण तेओ अत्यन्त जिज्ञासा साथ वाचे छे। तेओने जूनी तवारीख कहेनार मनुष्योने सामग्रीओ पण हाथ जोडी हाजर छे। मात्र तेओने तो कलम लईने ते बधुं टाचग१६ करवानी वृत्ति थतानीज रहे छे। अधिकारीओ ए कर्त्तव्य उपाडील्ये तो एमनी पोतानी जिन्दगीमाज नवुं दीवेल१७ रेडाय, पोताना पग तले नित्य चगदाती धरतीनी-महत्ताना दर्शन थाता ए पोतेज मानवनाना रोमाच अनुभवी रहे। देशना इतिहास भूगोलपर आवा अजवाला पाथरवा१८ होय तो आ इतिहास विमुख अने अकिंचन भूमिना देशी अधिकारी बंधुओनी सहाय बहु अगत्यनी छे।

आ दिशामा साची सुगमता जो होय तो ते प्रत्येक राज्योना केलवणी खाताने। तमा सेंकडे पोणोसो टका शिक्षको तो खचीत१९ आ वस्तुमा रस लेनारा रह्या। एने फुरसद घणी तथी गामना

---

११ घेरे हुए, १२ छोटी, १३ उत्सुकता, १४ मिला हुआ, १५ स्कन्धपर १६ उतारा, सुव्यवस्थित लेखन, १७ तेल, १८ फैलाना, १९ सचमुच ।

वृद्धो, प्रमादीओने गप्पोडीओनो डायरो एनी ओसरी२० मां मले। एमांथी केटलुं इतिहास-द्रव्य मले ?

आपणा युनीवर्सिटी नी परीक्षामां पसार थई बहार नीकलेला गेज्युएटो प्रमाद छोडी पोतानो जे काल फुरसद तरीके ओलखायछे तेनो सदुपयोग पोतानी भूमिनी माटीमां दटायेलां बेमूल जवाहिरोने शोधी काढवामां, जे कोई वीरधर्मी नी भाल२१ लागे तेनी कथा-नोंधी लेवामां गालशे, तो नूतन भूमि जन्मशे ने तेना यशोभागी पोते थशे।

आपणा मुनिओ तो दिवस ना चोवीसे कलाक सेवानुं व्रत लई गामडे गामडे, शहेरे शहेर प्रांते प्रांत विहरनारा छे। ए अप्रतिबद्ध विहारी प्रवासीओ पोताना चातुर्मास समयमां एक स्थले स्थिरवासमां अने ते सिवायना आठ मासमां अत्र तत्र थोडा निवासमां ते ते क्षेत्रनां मानव समाजनी, प्रकृति सौन्दर्यनी, धर्मजीवननी, वगेरे सर्वदेशीय माहितीओ उपरांत तेना इतिहास, कथाओ, पुरातन अवशेषो वगेरेनी नोंधों सरल छतां समतोल, अने लागणीमय२२ छतां विचारोत्पादक तेमज आल्हादक शैलिमां पूरी पाडी शके तेम छे। तेओमां प्रमादके पर प्रत्ययनेय२३ बुद्धि होवांज न घटे, एवो तेमनो शिष्ट आचार छे। तेओ तरफथी आपणा घणा मनोरथो सफल थवानो आशा छे। तेओ धारेतो जैन साहित्यमां पूर्वाचार्योना लखेला ऐतिहासिक पुस्तको, प्रबंधो, चरित्रो बहार पाड़ी शके एटलुंज नहीं पण दरेक गामना

२० बैठकखाना, २१ शोध, २२ संज्ञय; प्रयत्नमय, २३ दूसरेपर भरोसा करनेका विचार।

जिनमदिरो, प्रतिमाओ, वगेरना उत्कीर्ण२४ लेखो एकत्रित करी समग्र भारतमाना पूर्व जैनोना गौरव बनावी शक ।

जेवी रीत देशभक्ति पदा करवा माट देशनो प्राचीन इतिहास शोधावो जोइए, तेवीज रीते धर्मप्रेम तथा धर्मगौरव त त धमना मूलपुरुषोना भव्यजीवन चरित्रो, ऐतिहासिक प्रमाणोवाला बहार पाडवाथीज जामे । एमा धार्मिक दृष्टि साथे ऐतिहासिक दृष्टि सकलायेली रहेवी जोइए२५ । आवा प्रकारनो प्रयास आ जीवनचरित्र मा थयेलो छे ।

धार्मिक पुरुषोना जीवन चरित्रो ए पण एक प्रकारनु लोकोपयोगी साहित्य छे। 'साहित्यमा कोमीतडा२६ पडे ए वधु मा वधु अनिष्ट वात छे' ए कथनमा रहेलु सत्य स्वीकार्य छे, अने ए लक्षमा राखी जैन के जैनेतर-कोई पण ऐतिहासिक साहित्यमा थी जैन के जैनेतर लेखके तेज साहित्यने वलगी२७ रहीने अन्य साहित्यनी उपक्षा करवानी नथी, पण बन्ने साहित्यमा थी मलनी हकीक्तो मेलवी बन्नेने सत्य आकारमा तटस्थताथी अने व्यापक दृष्टि थी रजु२८ करवानी छे। जो के एम करवामा बधा लेखको शक्तिमान होता नथी, या सफल थता नथी, छता जे लेखक तरफ थी तत्कालीन साहित्यपर निष्पक्षपात दृष्टि राखी तेमाथी पोताना विषय पूरती सामग्री मेलवी त कालनी बीनाओ२९ नो केवल एक शुभ अखड अमिश्रित निर्देश थाय, ते लेखकने तेटले अंशे अभिनन्दन आपवु योग्य छे। आमा खास पले पले स्मरणमा राखवु आवश्यक छे के साम्प्रदायिक मोहके

---

२४ खुदे हुए, २५ चाहिये, २६ साम्प्रदायिक भेद, २७ चिपककर, २८ जाहिर करना, सामने रखना २९ हकीकते ।

कोमी दृष्टिने इतिहासनी चालणीमां चाली नाखवां जोइए—भट्टीमां गाली भस्म करवा जोइये । तेम थाय तोज सत्य देव नुं आराधन थइ शकशे ।

विक्रमनी पंदर सदी वीती गई अने सोलमीनो प्रारंभ थतां हिंदना पाटनगर दिल्हीनां सिंहासने सम्राट् अकबर विराज्यो अने तेना समयमां मोगलसत्तानो सूर्य पूर्ण-तेजथी प्रकाश्यो । ते सम्राट् अकबरने बधा धर्मोनी माहिती मेलवी ते सर्वमांथी उपयुक्त वस्तुओनी एकीकरण करी एक सर्व सामान्य धर्म काढवानी उत्कंठा थई; ते उत्कंठा तृप्त करवामाटे सर्व पैकी एक एवा जैन धर्मना ते वखते विद्यमान आचार्य श्री हीरविजयसूरिने पोतानी पासे बोलावी तेमनी साथे मन्त्रणा करी । श्री हीरविजयसूरिए श्वेताम्बर जैनना तपागच्छना आचार्य हता, अने तेमणे जैन धर्मना महात्म्यनी प्रथम झांखी सम्राट् अकबर-ने करावी । आ आचार्यनुं जीवन गुजराती भाषामां आलेखवानो सबल अने सफल प्रयत्न मुनि श्री विद्याविजयजीए 'सूरीश्वर अने सम्राट्' ए नामना पुस्तक रूपे करेलो, ते सं० १९७६ मां प्रथम प्रकट थयो, (के जेनो हिंदी अनुवाद पण त्यार पछी तेमणे बहार पाड्यो) ज्यारे पन्दर वर्षे—सं० १९९१ मां—तेज सम्राट् अकबरने थयेला परिचयनी ज्योत जालवी[३०] राखवामां सहायक खरतरगच्छ ना आचार्य श्रीजिनचन्द्रसूरिनुं जीवन हिंदी भाषामां लखी प्रकट कर-वानो सफल प्रयास बीकानेरना प्रसिद्ध नाहटा कुटुम्बना वंशजो श्रीयुत अगरचन्द अने भंवरलाल नाहटा तरफथी थयोछे ते जोई खरेखर आनन्द थाय तेम छे ।

---

३० संभालने ।

श्री हीरविजयसूरिनी प्रतिष्ठा अने गौरव जेटला तपा गच्छमा छे तेटला प्रतिष्ठा अने गौरव श्री जिनचन्द्रसूरिना खरतर गच्छ मा होय त स्वाभाविक छे।

खरतरगच्छ ए तपागच्छ थी प्राचीन छे। तपागच्छनी उत्पत्ति जगच्चन्द्र सूरिए वहु तप कर्यो तेथी तेमने 'तपा' (एटले तपस्वी) ए विरुद, कहेवाय छे के, मेवाडना ते वखत ना पाटनगर आघाट नगर-ना राजाए सं० १२८५ मा आप्युं, ते परथी ते सूरिनी शिष्य परम्परा नो गच्छ 'तपा' नामथी प्रसिद्ध थयो, ज्यारे खरतर गच्छनी उत्पत्ति गुजरातना पाटनगर अणहिलपुर पाटणमा दुर्लभसेन (राज) राजानी सभामा श्री जिनेश्वरसूरिए चैत्यवासी जैन साधुओनो आचार शास्त्र समत नथी एम बताबी आपी 'खरतर' (विशेष प्रखर-उग्र आचारवाला) विरुद प्राप्त कर्यु। ए परथी ते सूरिनी शिष्य-परम्परा खरतर गच्छना नामे ओळखावा लागी एम, जणाववामा आवे छे।

पाटणनी गादीपर गुर्जरराज दुर्लभराजे सं० १०६६ थी १०७८ एम बार वर्ष राज्य कर्यु, एम मेरुतुङ्गसूरिनी विचारश्रेणी-स्थविरावलीमा, तेमज राजावलीकोष्टकमा जणाव्युं छे अने ते श्रीमान

(१) सं० १५८२ मां थयेली खरतरगच्छ-सूरिपरम्परा-प्रशस्ति मां जणाव्युं छे केः—

तत्पट्ट पङ्केरुह राजहंसा जैनेश्वरा सूरि शिरोवतंसा ।
जयन्तु ते ये जिनशैवशासन श्रुतप्रवीणा भवनासमक्षिपन् ॥३७॥

श्री पत्तने दुर्लभराज राज्ये विजित्य वादे मठवासिसूरीन् ।
वर्षेऽब्धिपक्षाभ्रशशिप्रमाणे लेभेऽपि ये. खरतरो विरुद युग्मम् ॥३८॥

अर्थ—ते (वर्द्धमान सूरि) ना पट्टकमल पर राजहंस रूप जिनेश्वर सूरि मस्तकना आभूषण थया के जेमणे जैन शैव शासनना शास्त्रोमा प्रवीण होइ भवनासने फेंकी दीधो तेओ जय पामो। श्री पत्तनमा दुर्लभराजना राज्यमा मठवासी आचार्योने वादमा जीती जेमणे स० १०२४ ना वर्षमा 'खरतर' नामनुं विरुद युग्म (? एकज) विरुद पण मेळव्युं।

आ प्रशस्तिमा जणावेली स० १०२४ नी सालने एक संवत् १६७५ आसपासनी खरतर पट्टावली 'दस सय चिहु वीसेहीं' एटले सं० १०२४ मा।

'सुविहित गच्छ खरतर विरुद, दुलभ नरवई तिहा दियउ।
श्री वर्धमान पट्टह तिलउ, सूरि जिणेसर गह गहउ' ॥

एम कही टेको आपे छे। पण आ पुस्तकना लेखक नाहटाजी 'दस सय चिहु वीसेहीं' एनो अर्थ दशसो अने चार वीस एटले ऐंसी एवो करे छे ते खरेखर हुशियारी बतावनारो (ingenious.) छे।

(२) खरतर गच्छीय मुनि क्षमाकल्याणनी सं० १८३० नी खरतर गच्छनी पट्टावलीमा एवुं कथेलुं छे —

××एवं सुविहित पक्ष धारका. जिनेश्वर सूरयो विक्रमत. १०८० वर्षैः 'खरतर' विरद धारका आता ।

अने ते समयमा लखायेली नीजी पट्टावलीमा पण ते सूरिमाटे एम जणावेलुं छे के 'सवन् १०८० दुर्लभराज सभाया ८४ मठपतीन् जीत्वा प्राप्त खरतर बिरद ।'

आमा त्रण हकीकत आवे छे —[१] पाटणमा जिनेश्वर सूरिए दुर्लभराजना राज्यमा तेनी राज्यसभामा मठवासीने हराव्या [२] ते जय थी 'खरतर' विरद तेमणे मेलव्युं [३] ते घटना स० १०२४ मा के सं० १०८० मा बनी। आ त्रणेना सम्बन्धमा विशेप प्राचीन प्रमाणो केवा प्रकारना मले छे ते जोइए।

उक्त जिनेश्वर सूरिना पट्टधर जिनचन्द्र सूरिना शिष्य प्रसन्नचन्द सूरिना शिष्य सुमति वाचक ना शिष्य मुनि गुणचन्द्रे महावीरचरिय प्राकृत भापामा स० ११३९ मा [श्री हेमचन्द्रसूरिना त्रिपष्टिशलाकापुरप—चरितना दशमा पर्वमा आवेल संस्कृतमा महावीरचरित्र रचायुं ते पहेला] रची पूर्ण कर्युं तेमा छेल्ली प्रशस्तिमा कह्युं छे के .—वर्धमान सूरिने वे शिष्य हता। प्रथम जिनेश्वर सूरि अने वीजा बुद्धिसागर सूरि, अने

> वोहित्थोव्व समत्थो सिरि सूर जिणेसरो पढमो ।
> गुरमाराओ धवलाओ खरय(र) साहु संतइ जाया ॥
> [पाठातर] गुर माराओ धवलाओ निम्मल साहु सन्तइ जाया ॥
> हिमवताओ गंगुव्व निग्गया सयल जण पूज्जा ।
> अण्णो य पुण्णिमा चन्द सुन्दरो बुद्धिसागरो सूरी ॥
> [पीटर्सन रिपोर्ट, ३,३०६ पी० ५,३३]

अर्थ—प्रथम शिष्य जिनेश्वर सूरि बुद्धिमान् समर्थ हता, ते धवल गुरुना भारमांथी खरतर [पांठांतर-निर्मल] माधु सन्तति थई। जेम हिमवन्तमां थी सकल जनने पूज्य एवी गङ्गा नीकली तेम; बीजा शिष्य ते पूर्णिमा ना चन्द्र जेवा सुन्दर बुद्धिसागर सूरि थया।

[आ ग्रन्थ शेठ देवचन्द लालभाई जैनपुस्तकोद्धार—फण्डना ग्रन्थांक ७५ तरीके प्रकट थई गयो छे तेमां उपरनी गाथामां खरयरने बदले सुविहिया [निम्मला पु०] एम छापेलुं छे]

उक्त जिनेश्वर सूरिना शिष्य नवांगी वृत्तिकार अभयदेव सूरिना शिष्य प्रसन्नचन्द्र सूरिना शिष्य देवभद्रसूरिए प्राकृतमां पार्श्वनाथ चरिय सं० ११६८ [वसु रस रुद्र] ना वर्षमां रच्युं तेमां प्रशस्तिमां एटलुं जणाव्युं छे के

तस्सासि दोन्नि सीसा जय [ग] विक्खाया दिवायर ससिव्व।
आयरिअ जिणेसर बुद्धिसागरायरिय नामाणो ॥

[पी० ३,६४]

अर्थ—ते [वर्द्धमान सूरि] ना जयथी (जग मां) विख्यात थयेला सूर्य अने चन्द्रमानो जेवा [अनुक्रमे] बे शिष्य-आचार्य जिनेश्वर अने बुद्धिसागर आचार्य ए नामना थया ॥

[आ ग्रन्थ ने जेसलमेर जैन भाण्डागारीय ग्रन्थानां सूचीपत्रम् मां ग्रन्थाङ्क २९६ तरीके मात्र नाम आपी २२३ पत्रो जणावी ताड-पत्रीय प्रत तरीके नोंधेल छे। तेमां उपली गाथानी बीजी पंक्ति नीचे प्रमाणे छे एम श्रीयुत नाहटाजीनुं कहेवुं थाय छे :—

आयरिय जिणेसर बुद्धिसागर खरयरा णाया।

एटले खरतर [बिरुद] थी ज्ञात थयेला आचार्य जिनेश्वर अने बुद्धिसागर-एम तेमा 'खरतर' शब्द मूकेलो छे।]

स० ११७० मा लिखित कवि पाल्हे अपभ्रंश मा करेली खरतर पट्टावली* के ज 'अपभ्रंश काव्यत्रयी' ना परिशिष्टमा पृ० ११० थी ११२ मे आपी छे तेमा कहेल छे के —

देवसूरि पहु नेमिचन्दु बहुगुणिहिं पसिद्धउ।
उज्जोयणु तह वद्धमाणु खरत(?)र वर लद्धउ॥
सुगुरु जिणेसरसूरि नियमि जिणचन्दु सुसजमि।
अभयदेव सव्वगु नाणि जिणवल्लह आगमि॥
जिणदत्त सूरि ठिउ पट्टि तहि जिण उज्जोइउ जिणवयणु॥
सायरहिं परिक्खिवि परिवरिउ मुक्ति महग्घउ जिण रयणु॥

आमा खरतरनो वर जेणे लब्ध कर्यो छे ते विशेषण सामान्य-रीते उद्योतन पछी थयेल वर्द्धमानने लागु पडे, पण ते सुगुरु जिने-श्वरसूरिने लगाडवानु छे।

उपर्युक्त जिनेश्वरसूरिना जिनचन्द्रसूरि अने अभयदेवसूरि ते-मना जिनवल्लभसूरि अने तमना पट्टधर जिनदत्त सूरि [आचार्य पद स० ११६९ स्व० १२११] कृत 'सुगुरु पारतन्त्र्यम्' मा उक्त जिनेश्वरसूरि सम्बन्धी एवु दर्शाव्यु छे के —

---

* यह पट्टावली हमारी ओरसे प्रकाशित होनेवाले ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह (पृ० ३६६ से ३६८) में छप चुकी है। —(लेखक)

पुरओ दुल्लह महिवल्लहस्स अणहिल्लवाडए पयडं ।
मुक्का वि चारिऊणं सीहेण व दव्व लिंगि गया ॥१०॥
दस मच्छेर व निसि विप्फुरन्त सच्छन्द सूरि मय तिमिरं ।
सूरेण व सूरि जिणेसरेण हयमहिय दोसेण ॥११॥

अर्थ—अणहिल्लवाडामां दुर्लभ नृपति पासे 'द्रव्य लिंगी रुपी गजो, सिंहनी पेठे विदारी नांख्या अने दशमां अच्छेरा [आश्चर्य] रूपी रात्रिमां फेलायेल स्वच्छन्द रूपी सूरिना मत रूपी अंधारु जेणे सूर्यनी पेठे टाली नांख्युं एवा निर्दोष जिनेश्वर सूरि ।

तेज जिनदत्त सूरि वली पोताना गणधरसार्द्धशतक मां उक्त जिनेश्वर सूरि सम्बन्धी विशेष जणावे छे के :—

तेसिं पय पउम सेवारसिओ भमरुव्व सव्व भम रहिओ ।
ससमय-परसमय पयत्थ वित्थारण समत्थो ॥६४॥
अणहिल्लवाडए नाडइ व्व दंसिय सुपत्त सन्दोहे ।
पउर पए बहु कविदूसगे य सन्नाण गाणु गए ॥६५॥
सड्डिय दुल्लह राए सरसइ अंको व सोहिए सुहए ।
मज्झे रायसहं पविसिऊण लोयागमाणु मयं ॥६६॥
वसइहिं निवासो साहूण ठविओ ठाविओ अप्पा ॥६७॥
परिहरिय गुरु कमागय वर वत्ता ए वि गुज्जरत्ताए ।
वसहि निवासो जेहिं फुडीकओ गुज्जरत्ताए ॥६८॥

—तेमनो [वर्धमान सूरि ना] पद कमलनी सेवामां रसिक एवा भ्रमरनी पेठे सर्व भ्रमथी रहित, स्वसमय अने पर समय [शास्त्र] ना पदार्थ जेणे अर्थ सहित विस्तारेला एवा समर्थ [जिनेश्वरसूरिए

अणहिल्लवाडामां नाटकमां जेम छे तेम सुपात्रना सन्दोह जेणे देखाड्या छे एवा, प्रचुर प्रज, बहु कवि दूषक, सन्नायक ने अनुगत एवा ऋद्धिमान्-राजा दुर्लभराज सरस्वती अंकथी उपशोभित, सुखद अने सुभग राज्य करता सता तेनी लोकागमने अनुमत एवी राज्यसभामा प्रवेश करीने विचारहीन एवा नामना आचार्यो साथे विचार-विवाद करीने साधुओनो निवास वसतिमां होवो जोइए ए स्थापित कर्युं अने गुरु क्रमथी चाली आवेली वात जेणे तजी-दीधी हती एवी गूर्जरत्रा [गुजरात] मां पण जेमणे वसति निवास ते गूर्जरत्रामां स्फुट कर्यो ।

(गुजरात ए शब्द जे 'गूर्जरत्रा' शब्दमांथी फलित थयुं मनाय छे ते 'गूर्जरत्रा' बारमी सदी जेटलो तो जुनो छेज ए आ अवतरण परथी सिद्धथाय छे)

उक्त जिनेश्वर सूरिए रचेला पंचलिंगी प्रकरण पर उक्त जिनदत्त-सूरिना पट्टधर जिनचन्द्रसूरिना पट्टधर जिनपति सूरिए [सूरिपद सं० १२२३ ने स्व० सं० १२७७ वच्चे] वृत्ति रचतां तेनी आदि-मांज कहेल छे के :—

इह गूर्जर वसुधाधिप श्री दुर्लभराज सभा सभ्य समाज महा वादि चैत्यवासि कल्पित जिन भवनवास समासादित विस्तृत्वर कीर्त्ति कपूरपूर सुरभित त्रिभुवन भवनाभोग श्री जिनेश्वर सूरि विरचित पंचलिंग्याख्य प्रकरणस्य......(पी० ३ पृ० २५०)

—आ गूर्जर भूमिना राजा श्री दुर्लभराजनी सभामां सभ्य समाजमां महावादी चैत्यवासी ना कल्पित जिन मन्दिरमां वासने

निर्मूल करीने जेनी कीर्त्तिरूपी कर्पूर थी सुगन्धित थयेल त्रिभुवन रूपी भवन छे एवा श्री जिनेश्वर सूरिना रचेल पंचलिंगी नामना प्रकरणनी········

तेज भावार्थनुं उक्त जिनपति सूरिए संघपट्टकनो विवृत्तिना प्रारम्भमां जिनेश्वर सूरि सम्बन्धे कह्युं छे। जुओ अपभ्रंश काव्य-त्रयी नी पण्डित श्री लालचन्द भाई नी प्रस्तावना पृष्ट १०।

पूर्णभद्रे सं० १२८५ (के जे वखतनी आसपास तपागच्छना स्थापक जगचन्द्रसूरिए तप वडे 'तपा' नामनुं बिरुद प्राप्त कर्युं) मां धन्नाशालिभद्र चरित्र रच्युं छे तेनी प्रशस्तिनां जणाव्युं छे केः—

श्रीमद् गूर्जरभूमि भूपण मणौ श्रीपत्तने पत्तने
श्रीमद् दुर्लभराज राज पुरतो यश्चैत्यवासिद्विपान्।
निर्लोड्यागम हेतु युक्ति नखरैर्वासं गृहस्थालये
साधूनां समतिष्ठपन् मुनि मृगाधीशोऽप्रधृष्यः परैः।
सूरिः स चान्द्रकुल मानस राजहंसः
श्रीमज्जिनेश्वर इति प्रथित. पृथिव्या।

श्री भरेली गूर्जर भूमिना आभूषण मणि रूप श्रीपत्तन नामना शहेरमां श्रीमद् दुर्लभराज राजानी आगल जेणे चैत्यवासी रूपी हाथीने आगमहेतु युक्त रूपी नखथी पराजित करीने अन्यथी साधा न जाय तेवा जे मुनि रूपी सिंहे गृहस्थनी मालेकीनी जग्याए साधु-ओए वास करवो जोइए एम स्थापित कर्युं एवा चन्द्रकुल रुप मानसरोवर ना राजहंस रूपी सूरि श्रीमद् जिनेश्वरसूरि पृथ्वीमां प्रसिद्ध थया।

सं० १२९५ मां उक्त जिनपति सूरि शिष्य सुमति गणिए उपर्युक्त गणधर सार्द्ध शतक पर बृहद्वृत्ति रची छे तेमांथी जिनेश्वर जिनेश्वर सूरिनुं विशेष चरित्र मली आवशे, ते आखी वृत्ति ऐतिहासिक विगतोनो भंडार छे छतां ते प्रगट थई नथी · ए दुर्भाग्यनो विषय छे। उक्त जिनेश्वरसूरिना लीलावती तथा काव्य नो उद्धार थतां छेवटे लखेलछे के.—

"इति श्री वर्द्धमानसूरि शिष्यावतंस—वसतिमार्ग प्रकाशक प्रभुश्री जिनेश्वर सूरि विरचित—प्राकृत श्री निर्वाण लीलावती कथेति वृत्तोद्धारे लीलावती सारे जिनांके (जेसलमेर सूचीपत्र ४३ अंक ३४७)"

उपरनां प्रमाणो जिनेश्वर सूरिनी शिष्य परम्परामांना जोयां; हवे आपणे तेथी भिन्न परम्परामांनुं एक स्वतन्त्र प्रमाण लईए ते चन्द्रगच्छमांथी पछीथी थयेल राजगच्छना धनेश्वर सूरि, अजित-

* इसी वृत्तिका अन्तर्गत प्रकरण (श्रीवर्द्धमान सूरिजीसे श्रीजिनदत्त सूरिजी तकका ऐतिहासिक चरित्र) प्रकाशित हो चुका है और उसका भाषान्तर भी श्रीजिनकृपाचन्द्र सूरि ज्ञान-भण्डार इन्दौरसे प्रकाशित हो चुका है। उक्त वृत्तिमें खरतर विरुद प्राप्ति विषयक उल्लेख इस प्रकार है:—

"किं बहुनेत्थं वादं कृत्वा विपक्षान्निर्जित्य राजामात्य श्रेष्ठि सार्थवाद प्रभृति पुर प्रधानः पुरुषैः सह भट्टघट्टेषु वसति मार्ग प्रकाशन यशः पताकायमान काव्य बन्धान् दुर्जन जन कर्णशूलान् साटोपं पठत्सु सत्सु प्रविष्टा वसतौ प्राप्त खरतर विरुदा भगवन्तः श्रीजिनेश्वर सूरयः एवं गुर्ज्जरत्र देशे श्रीजिनेश्वर सूरिणा प्रथमं चक्रे",

(गणधर सार्द्ध शतकान्तर्गत प्रकरणम् पृ० ११)

(लेखक)

सिंह-शालिभद्र-श्रीचन्द्र-जिनेश्वरादि-पूर्णभद्र—चन्द्रप्रभ सूरि शिष्य प्रभानन्द सूरिए प्रभावक चरित्र संस्कृत काव्यमां संवत् १३३४ मां रच्युं छे तेमां आपेला जिनेश्वर सूरिना शिष्य अभयदेवसूरि के जेमणे नव अंगोपर संस्कृत वृत्तिओ रचीछे तेना चरित्रमाथी नीचेनी हकीकत मली आवेछेः—

'भोजना राजत्व कालमां धारानगरीमां वसना लक्ष्मीपति नामे श्रीमन्तने त्यां रहेला मध्यदेशना बे विद्वान् युवान् व ब्राह्मण पुत्रो श्रीधर अने श्रीपतिए आचार्य वर्धमान सूरि पासे दीक्षा लीधी अने तेओ जिनेश्वर अने बुद्धिसागर नामथी प्रसिद्धेया ।'

'आ वखते पाटणमां चैत्यवासीओनुं प्राबल्य हतुं, ते एटला सुधी के तेमनी सम्मति सिवाय सुविहित साधु पाटणमां रही नहोता शकता, आचार्य वर्धमान सूरिए पोताना शिष्य जिनेश्वर सूरि अने बुद्धिसागरने त्यां मोकलीने पाटणमां सुविहित साधुओनो विहार अने निवास चालु करावबानो विचार कर्यो अने पोताना उक्त बंने शिष्योने× पाटण तरफ विहार कराव्यो । ते बन्ने पाटणमां गया पण त्यां तेमने उतरवा माटे उपाश्रय मल्यो नहि; बधे फरीने तेओ त्याना सोमेश्वर नामना पुरोहितने त्यां गया अने पोतानी विद्वत्तानो परिचय आपी तेना मकानमां रह्या ज्यारे चैत्यवासीओने ए समाचार मल्या तो पोताना नियुक्त पुरुषोद्वारा तेमने पाटण छोडी जवा जणाव्युं,

× सं० १२९५ रचित गणधरसार्द्धशतक बृहद्वृत्तिमें वर्द्धमान सूरिजी भी पाटण साथ ही पधारे थे और राजसभामें भी साथ थे, स्पष्ट उल्लेख है ।

(लेखक)

पण पुरोहिते कह्युं के आ बाबतनो न्याय राजसभामां थशे। आथी चैत्यवासीओए राजानी मुलाकात लीधी ने वनराजना समयथी पाटणमा स्थपायेल चैत्यवासीओनो सार्वभौम सत्तानो इतिहास समजाव्यो, जे परथी पाटणनो नृपति दुर्लभराज पण लाचार थयो अने पोताना उपरोध थी ए साधुओने अहीं रहेवा देवा माटे आग्रह कर्यो के जे बात चैत्यवासीओए मान्य करी।

'ए पछी पुरोहिते सुविहित साधुओना उपाश्रय माटे राजाने प्रार्थना करी। राजाए ए कामनी भलामण पोताना गुरु शैवाचार्य ज्ञानदेवने करी, जे उपरथी भात बजारमां योग्य जमीन प्राप्त करीने पुरोहिते त्यां उपाश्रय कराव्यो, त्यार पछी सुविहित साधुओने माटे वसतिओ थवा मांडी।'

"जिनेश्वर सूरि ज्यारे पहेलीवार पाटणमा गया त्यारे पाटणमा दुर्लभराजनुं राज्य होवानुं आ प्रबन्धकार लखे छे। (ज्यारे उपर बताव्या प्रमाणे) जिनदत्त सूरि आदि खरतर गच्छीय आचार्यो पण गणधरसार्द्धशतक आदिमा ते वखने पाटणमां दुर्लभ राजनुं राज्य बताने छे, पण खरतरगच्छ वालाओ ए प्रसङ्ग (सं० १०२४ के सं० १०८० कोई) १०८४* मां बन्यानुं लखे छे ते बराबर लखातुं नथी, कारणके (१०२४ मां मूलराजनुं राज्य हतुं अने सं० १०८० मां के) सं० १०८४ मां पाटणमा दुर्लभराज नुं राज्य नहीं पण भीमदेवनुं राज्य हतुं।"

—इतिहास-महोदधि साक्षर मुनि श्रीकल्याणविजयजी नी प्रभावक चरितना गू० भाषां० नी प्रस्तावना।

* संवत् १०८४ नुं प्रमाण कोइए आप्युं होय एथी अमे अज्ञात छोए, छतां मुनि श्रीकल्याणविजयजी जेवा इतिहासज्ञ ते आपे छे तो तेनुं प्रमाण ते जणावशे।

तत्कालीन प्राचीन प्रमाणथी जिनेश्वरसूरिने 'खरतर' ए विरुद मल्यु अने ते मल्यु तो अमुक वर्ष मां मल्यु ए शोधी काढी बताववा मां ऐतिहासिक संशोधकोए प्रयास सेववा योग्यछे। आ विषय पर लेखक महाशयने सं० ११७० नी लखेली पट्टावली× जोवा मली छे, तेमा जिनेश्वरसूरिने 'खरतर' विरुद मल्यानो स्पष्ट उल्लेखछे अने ते विषय पर विशेष विचार लेखक महाशय एक स्वतन्त्र निबन्ध रूपे प्रगट करशे एम पृ० ११ नी टिप्पणमा पोते जणावे छे; तो आ निबन्ध प्रगट थये विशेष प्रकाश पड़वानी आशा रहे छे।

बृहत् खरतर गच्छनी पट्टावली मां श्रीमान् प्रभु महावीर थी उक्त जिनेश्वर सूरिनुं स्थान ४० मुं छे, त्यार पछी तेनी पट्ट परम्परा मां प्रस्तुत पुस्तकना नायक छट्ठा जिनचन्द्रसूरिनुं स्थान ६१ मुं छे।*

नायकना चरित्रमां बीकानेरना मन्त्री कर्मचन्द्र अगत्यनो भाग भजवे छे। तेमना द्वारा सम्राट् अकबर साथे मेलाप-परिचय, जीव-वधत्याग-अमारिनां फरमान, साहजादा सलीम तथा अमीर उमराव साथे पिछान, सलीम पादशाह थनां तेणे साधुओ प्रत्ये तिरस्कार थी—काढेल हुकमनुं रद करावनुं वगेरे अनेक बीनाओथी नायकनुं चरित्र रसभर्युं अने माहितीवालुं छे। तेने योग्य न्याय आपवा-

× यह वही पट्टावली है जिसका अवतरण देसाइ महोदयने हमारी सूचनानुसार पृ० ४२ में दे दिया है।

* पट्ट नम्बर ४०-६१ क्षमाकल्याण कृत पट्टावलीके अनुसार है। अन्य पट्टावलियोंमें नम्बरोंमें कमी बढ़ती भी है। (लेखक)

माटे लेखक महाशये घणी महेनत लई तत्कालीन साहित्यमाथी घणी विगतो एकठी करी तेने अनुक्रममा सरल अने रुचिकर भाषामा प्रयोजी एक सत्य जीवनचरित आलेखी प्रकट कर्युं छे। ते माटे लेखक महाशयने अभिनन्दन घटे छे।

कर्मचन्द्र मन्त्री सम्बन्धी, गुणविनय उपाध्यायकृत 'कर्मचन्द्र मन्त्री प्रबन्ध' गुजराती पद्यमा सं० १६५५ मा रचेलो बहार पड्यो ते परथी आपणे जाणता थया हता अने मुनि श्री विद्याविजयजीए 'सूरीश्वर अने सम्राट्'मा पृ० १५३-५४ पर टुकमा हकीकत जणावी छे। पण ते गुजराती प्रबन्ध ते गुणविनयनाज गुरु जयसोम उपाध्याये संस्कृतमा सं० १६५० मा अकबरना राज्य दिन थी ३८ मा वर्षे लाहोरमा प्रबन्ध रच्यो हतो, तेना परथी गुणविनये कर्यो हतो अने ते संस्कृत प्रबन्ध पर तेज गुणविनये संस्कृतमा व्याख्या सं० १६५६ मा श्री तोसामपुरे कर्मचन्द्र मन्त्रीना आग्रह थी रची पूरी करी हती ते प्रसिद्ध इतिहास रसिक श्रीमान् पूरणचन्दजी नाहर M, A, B L पासेथी मने प्राप्त थई हती अने ते परथी तेमज श्रीयुत उमरावसिंहजी टाक ना अंगरेजी चरितमाथी हकीगत लईने अनुक्रमे मारा 'जैन साहित्यनो संक्षिप्त इतिहास' नामना पुस्तकमा पारा ८३६ थी ८४४ मा तेमज मुनि श्री जिनविजयजी सम्पादित जैनऐतिहासिककाव्यसंचय नी प्रस्तावनामा में विशेष हकीकत आपेली छे [ते संस्कृत मूल प्रबन्ध 'कर्मचन्द्र वंशोत्कीर्त्तनक काव्यम्' ए नामे रायबहादुर गौरीशंकर ओझाजीए सम्पादित करी हिन्दी अनुवाद सहित सन १९२८ मा छपाव्योछे, पण हजु सुधी जनता समक्ष प्रकट

थयो नथी, वली खरी उपयोगी तेना उपरनी गुणविनयकृत संस्कृत टीका हजु सुधी छपाई नथी ए दुर्भाग्यनो विषयछे। जुओ जैन युग पुस्तक ५ पृ० ४६० थी ४६४]

लेखक महाशयोए विशेष शोध खोल करी उक्त कर्मचन्द्र मन्त्रीना जीवन अने वंशजनु विश्वसनीय चित्र रजु कर्यु छे ते माटे तेओ धन्यवादने पात्र छे।

सम्राट् अकबरने जैन साधुओथी आछो आछो परिचय सं० १६३६ पहेला थयो हतो, पण तेना पर प्रबल अविचल अने व्यापक असर करनार जैन तपागच्छना आचार्य श्री हरिविजयसूरि हता ए निर्विवाद छे, अने पछी ते असर कायम राखनार तमनु शिष्य मण्डल विजय-सेनसूरि, भानुचन्द्र आदिनु हतुं। तेनुं एकज दृष्टान्त बस थशे के अकबरना मित्र अने मन्त्री जेवा विद्वान अबुलफजले उर्दु भाषामा लखेला 'आइन-इ-अकबरी' नामना प्रसिद्ध पुस्तक परथी जणायछे के 'अकबर पोतानी धर्मसभाना सभ्योने पाच विभागमा विभक्त कर्या हता, ते बधामा मलीने कुल १४० सभ्यो हता। पहेला वर्गना २१ सभ्यो छे, तेमा प्रथमना चार नामो मुसलमानोना छे अने १६ मुं नाम हीरजीसूर (हीरविजय सूरि) नु छे, ने पाचमा वर्ग मा विजय-सेन अने भानुचन्द्रने मूकेला छे।

आ रीते जैनोमाथी त्रण प्रसिद्ध व्यक्तिओ बधी तपागच्छ ना साधुओ अकबर नी धर्मसभा ना सभ्यो तरीके मूकायेला छे, परन्तु खरतरगच्छना आचार्य जिनचन्द्रसूरि के अन्य प्रसिद्ध व्यक्ति तेमा दाखल करेली नथी। अबुल फजलनु नखू मलीमे (जहांगीर)

सन् १६०२ नी १२ मी ऑगष्टे (स० १६५९ मा) कराव्युं, ज्यारे तेना मरण पहेला दश वर्षे जिनचन्द्र सूरिने स० १६४६ मा लाहोरमा युगप्रधान पद मल्यु ने अकबर बादशाहनी साथे तेमनो अने तेमना शिष्य जिनसिंह सूरिनो विशेष परिचय थयो, छता ते बन्नेमा थी एकेनो तेमज समयसुन्दर आदि विद्वान् व्यक्तिनो पण समावेश आइन-इ-अकबरीमा करवामा आव्यो जणातो नथी।×

श्रीमान् जिनविजयजी प्राचीन शिलालेख सग्रहना बीजा भागमा पोताना अवलोकन पृ० ३६ मा कथे छे के —

× आइन इ-अकबरीमें चाहे उल्लेख न मिले पर उससे भी अधिक महत्त्व का उल्लेख अष्टान्हिका फरमान पत्रमें है, सम्राट् अकबर स्वयं जिनचन्द्रसूरिजी का प्रभाव इस प्रकार व्यक्त करते हैं —

"इससे पहले शुभ चिन्तक तपस्वी जिनचन्द्रसूरि खरतर, हमारी सेवामें रहता था। जब उसकी भगवद्भक्ति प्रकट हुई तब हमने उसको अपनी बडी बादशाहीकी महरबानियोंमें मिला लिया।" (इसी ग्रन्थके पृष्ट २७८)

श्रीजिनसिंह सूरिजीका उल्लेख भी सम्राट अकबर और जहांगीर दोनों इस प्रकार करते हैं —

इन दिनों आचार्य जिनसिंह उर्फ मानसिंहने अर्ज कराई कि पहले जो ऊपर लिखे अनुसार हुक्म हुआ था वह खो गया है, इसलिये हमने उस फरमानके अनुसार नया फरमान इनायत किया है। (उक्त फरमान पत्र पृ० २७९)

इन सेवड़ोंके दो पन्थ हैं। एक तपा दूसरा करतल (खरतर)। मानसिंह (जिनसिंह सूरि) करतलोंका सरदार था और बालचन्द्र (भानुचन्द्र ?) तपोंका, दोनों सदा स्वर्गवासी श्रीमान् (अकबर) की सेवामें रहते थे।

(जहांगीर नामा) ऐसह

'सं० १६३६ थी १६६० सुधी अकबरने जैन विद्वानोनो सतत सहवास रह्यो, तेमां प्रथमनां दश वर्षोमां तपागच्छनुं अने पछीना दश वर्षमां खरतरगच्छनुं विशेष वलण हतुं एम कहेवामां कांई हरकत नथी; परन्तु साथे एटलुं तो अवश्य कहेवुंज जोइए के खरतरगच्छ करतां तपागच्छने विशेष मान मल्युं हतुं। अने बादशाह पासेथी सुकृत्यो पण ए गच्छवालाओए अधिक कराव्यां हतां।'

लेखके हीरविजयसूरि सम्बन्धी टुंक उल्लेख पृ० ६४ उपर करी तेमनुं सविशेष चरित जोवा वाचकने 'सूरीश्वर अने सम्राट्' ए पुस्तकनो हवालो आपी दीधो छे।

तपागच्छाचार्य हीरविजयसूरि सं० १६३६ थी १६४२ एम त्रण वर्ष अकबर बादशाह पर प्रभाव पाडी गुजरात प्रत्ये विहारकरी गया ने पोताना केटलाक शिष्यने वखतो वखत तेना परिचयमां आव्ये जाय ते माटे राखता गया। त्यारपछी खरतरगच्छाचार्य जिनचन्द्र सूरिए सम्राटनुं कर्मचन्द्र मन्त्री द्वारा आमन्त्रण थतां लाहोर जइ अकबर बादशाहने मली पोतानो अने पोताना धर्मनो परिचय कराव्यो। (लाहोरमां प्रवेश सं० १६४८ फा० सु० १२) त्यारपछी तेमणे तथा तेमना शिष्य मण्डले—जिनसिंहसूरि आदिए ते अकबर बादशाह पर पोतानी असर चालु राखी—ए सर्वे वृत्तान्तनुं वर्णन आ पुस्तकमां मनोहर रीते करवामां आव्युं छे अत्र साथे साथे ए पण जोवानुं छे के तपागच्छना विजयसेन सूरिने आमन्त्रण मलतां तेओ पण लाहोर जइ अकबर बादशाहने मल्या। तेमनो लाहोरमां प्रवेश सं० १६४९ ज्येष्ठ सुदि १२) आवी रीते तपागच्छना हीरविजय सूरिए पोते तेमज

पोताना शिष्य प्रशिष्योए तेमज खरतर गच्छना जिनचन्द्रसूरि अने तेमना शिष्यादिए सम्राट् अकबरपर धीमे धीमे उत्तरोत्तर विशेष प्रमाणमां प्रभाव पाडी तेने जीवदयाना पूरा रंग वालो कर्यो हतो एमां किंचिन्मात्र शक नथी। ए वातनी साक्षी ते बादशाहे बहार पाडेल फरमानो (के जे पैकी केटलाक अत्यारे पण मली आवे छे ते) परथी, तेमज अबुल फजलनी, आइने अकबरी, बदाउनीना अलब-दाउनी, अकबरनामा वगेरे मुस्लिम लेखकोए लखेला ग्रन्थोपरथी पण स्पष्ट जणाय छे। (जुओ मारो 'जैन साहित्य नो संक्षिप्त इति-हास' पारा ८१०) आ प्रभाव जेवो तेवो न गणाय। तेनाथी जैन धर्मनी महत्ता समग्र हिंदमां विस्तृत थई अने बादशाहने पण ते धर्मना अनुरागी करे एवा समर्थ महापुरुषो जैन धर्ममां पण पड्या छे एम सिद्ध थयुं।

तेथी अकबर बादशाह जैनधर्मी थयो, एम मानवानुं नथी। तेणे अनेक क्रान्तिकारी फेरफारो कर्या हता ते पैकी पोताना राज्य वर्ष थी एक संवत् नामे 'सन् इलाही' चलाववानुं, अने एक सामान्य धर्म नामे 'दीन-इ-इलाही' प्रवर्त्तावबानु तेने पोताना मनमां स्फुर्युं हतुं; अने तेमां ते कटले अंशे पोताना राजत्वकालमां फलीभूत थयो, पण पोताना मरण पछी ते बंने विफल थया। पोते काढवा धारेला सामा-न्य धर्म माटेनी सामग्री मेलववा जुदा २ धर्मोना वडाओने बोलावी ते ते धर्मना मुख्य सिद्धान्तो, आचार, विधि विधानो जाणवा पुष्कल प्रयास कर्यो। ए रीते हिन्दु, जैन, पारसी, ख्रिस्ती वगेरेना धार्मिक सिद्धांत जाणवा ते ते धर्मना, अग्रणी विद्वानो आचार्योने बोलावी

तेमनी माथे पोते कलाको ना कलाको गालतो । जैन धर्मना वडा ते वखते तपागच्छमां हीरविजयसूरि अने खरतरगच्छमा जिनचंद्रसूरि हता। पहेला हीरविजयसूरिने आगरा पासे फतेपुर (सीकरी) बोलावी संवत १६३६ थी १६४२ सुधीमां तेमनो परिचय सेव्यो, ने ते सूरिए पछी पोताना शिष्यो शांतिचन्द्र, भानुचन्द्र आदिने बादशाह ना निकट समागममा वखतो वखत आवे तेम राख्या । पछी जिनचन्द्र सूरिने लाहोर बोलावी सं० १६४८ ने त्यार पछीना वर्षमां तेमनो समागम सेव्यो,ते सूरिए पण पोताना पट्टधर शिष्य जिनसिंह सूरिने तेना समागममां आवे ते माटे राख्या हता । सं० १६४९ मा हीरविजय सूरिना पट्टधर शिष्य विजयसेन सूरिने लाहोरमां बोलाव्या हता । आ रीते तपागच्छ अने खरतरगच्छ एम बंनेना अग्रगी विद्वानो पासेथी जैन धर्मना-सिद्धान्तो आदि जाणी अकबर बादशाहे जीवदया, जीववध-त्याग अमुक दिवसोए आखा देशमा पलावो जोइए ए बाबतनां, तेमना तीर्थोनी रक्षा नां, तेओने कोई अडचन न करे ए बाबतना, जीजीया वेरो बंध करवाना वगेरे अने फरमानो काढी आप्यां. ते परथी ते धर्मगुरुओनो प्रभाव केटलो थयो अकबर बादशाह पर पड्यो हतो तेनो सारो ख्याल आवी शके तेम छे, आ माटे ते बन्ने-आचार्यो हीरविजय सूरि अने जिनचन्द्र सूरिना विस्तृत जीवन-चरित्रो वाचवा जोइए ।

हवे ते बन्ने आचार्यो अने तेमना पट्टधरोनो कालक्रम आदिनी टुंक टुंक माहिती सरखामणी अर्थे नीचेना कोष्ठक रुपे जोईए —

		हीरविजय सूरि	जिनचन्द्रसूरि	विजयसेनसूरि	जिनसिंहसूरि
१	जन्म संवत्	१५८३	१५९५	१६०४	१६१५
२	जन्म स्थल	पालणपुर	तिमरी-वडली	नाडुलाई(मारवाड)	खेतासर
३	जन्म नाम	हीरजी	सुलताण	जयसिंह (जेसङ्ग)	मानसिंह
४	ज्ञाति	वीमा ओसवाल	वीमा ओसवाल	वीमा ओसवाल	वीमा ओसवाल
५	पिता	कुंरा (कुंवरजी)	श्रीवंत	कला शा	चांपा
६	माता	नाथी	सिरियादे	कोडां दे	चांपल दे
७	दीक्षा संवत्	१५९६	१६०४	१६१३	१६२३
८	दीक्षा नाम	हीरहर्ष	सुमतिधीर	जयविमल	महिमराज
९	दीक्षा गुरु	विजयदानसूरि	जिनमाणक्यसूरि	विजयदानसूरि	जिनचन्द्रसूरि
१०	गच्छ नाम	तपा	खरतर	तपा	खरतर
११	सूरिपद संवत्	१६१०	१६१२	१६२८	१६४९
१२	परिचित नृप	अकबर	अकबरअनेजहांगीर	अकबर	अकबरअनेजहाँगीर
१३	स्वर्गगमन संवत्	१६५२	१६७०	१६७२	१६७४
१४	स्वर्गगमन स्थल	उना (काठियावाड)	विलाडा (वेनातट)	खंभात-अकबरपुरा	विलाडा वेनातट
१५	पट्टधर	विजयसेनसूरि	जिनसिंहसूरि	विजयदेवसूरि	जिनराजसूरि
१६	मुख्यकृति नाम	जंबुद्वीप प्रज्ञप्ति टीका	पोषधप्रकरण वृत्ति		जिनसागरसूरि

हीरविजय सूरिना चरितमां कोई खास अगम्य चमत्कार जणातो नथी, ज्यारे जिनचन्द्र सूरिना चरितमां पञ्चनदी साधना नो चमत्कार (प्रकरण १० मुं) आपवामां आवेल छे; तेमज बीजा चमत्कार १६ मां प्रकरणमां गणाव्या छे। बंने नुं आयुष्य लगभग सरखुं ६६ अने ६५ वर्ष नुं हतुं। प्रथमनां बीजाथी वयमां १२ वर्ष महोटा हता। बंनेए अकबर बादशाह पर प्रभाव पाडी 'अमारि' नां फरमान अनुक्रमे मेलव्यां हतां अने जिनचन्द्र सूरिने आपेल ते प्रकारना फरमानमां हीरविजय सूरिने अगाउ अपायेल फरमाननो उल्लेख छे। बंनेने सम्राट् अकबरे 'जगद्गुरु' अने 'युगप्रधान' एम अनुक्रमे पद-बिरद आप्यां हतां। बंनेना पट्टधर सरखा प्रभावशाली हता। बंनेना शिष्य परिवार बहोलो हतो। बंनेना शिष्य प्रशिष्योए अनेक ग्रन्थो संस्कृत प्राकृत अने देशी भाषामां रचेला सांपडे छे। बंने शासन प्रभावक पुरुष हता। अने पोत पोताना गच्छमां प्रभावशाली अग्रणी नायक हता।

अकबर बादशाहे खुद श्री जिनचन्द्रसूरिने 'युगप्रधान' पदवी आपी हती तेथी आ ग्रन्थनुं नाम 'युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि' अन्वर्थक छे। तेमां जुदां २ प्रकरणो राखी विषयने कालानुक्रमे लेखके विशेष विकसित अने विस्तृत बनाव्यो छे। ते प्रकरणो नां नामो आ प्रमाणे छेः—

१ परिस्थिति, २ सूरिपरम्परा, ३ सूरिपरिचय, ४ पाटणमें चर्चाजय, ५ विहार और धर्म प्रभावना, ६ अकबर आमन्त्रण, ७ अकबर प्रतिबोध, ८ 'युगप्रधान' पद प्राप्ति, ६ सम्राट् पर प्रभाव,

१० पंचनदी साधना, और प्रतिष्ठाएं, ११ महान् शासन-सेवा, १२ निर्वाण, १३ विद्वन् शिष्य समुदाय, १४ आज्ञानुवर्ती साधु-संघ, १५ भक्त श्रावकगण, १६ चमत्कारिक जीवन और अवशेष घटनाएं, तदुपरान्त परिशिष्टमें दो विहार-पत्र, क्रियाउद्धार नियमपत्र, सामाचारी पत्र, दो शाही फरमान, एक परवाना, सांवत्सरिक पत्र, आदेशपत्र, प्रशस्तिपत्र, विज्ञप्तिपत्र, आचार्य कृत अष्टमद चौपाई, संस्कृतमें पंचतीर्थी स्तवन, पार्श्वनाथ स्तवन—ए उपयोगी ज्ञानव्य हकीकतो रजु करी छे। तेथी चरित्र नायक सम्बन्धिनी तात्कालिक लगभग घणी खरी बीनाओ, ते वखतनुं वातावरण, खरतरगच्छ अने ते गच्छना मुनि श्रावको आदिनां वृत्तान्त आपणने प्राप्त थाय छे।

लेखक महाशयनी लेखन प्रवृत्ति परथी कहेवुं ज पडशे के तेमणे पोते पुरातत्त्व रसिक होवाथी तेमज खरतर गच्छना अनुयायी होई ने पोताना बीकानेरमां रहेला पुस्तकभंडारो तपासवानी सगवड सुभाग्ये मलवाथी तेमांथी शोध करी ऐतिहासिक सामग्री एकत्रित करी तेने व्यवस्थित गोठववामां अने तेनो शुभ तथा यथास्थित उपयोग करवामा कोई जातनी कसर राखी नथी ए समग्र पुस्तकना पृष्ठे पृष्ठे दृग्गोचर थाय छे। पोते रह्या श्रीमन्त व्यापारी, बीकानेर, कलकत्ता, सीलहट, बोलपुर, चापड, वालुरघाट वगेरे स्थलोए पोतानी धंधानी पेढीओ अने तेने लगता व्यवसायो पोताने संभालवाना रह्या, छतां ते सर्वनो वहीवट करवानी साथे आ जातनुं साहित्य कार्य अखण्ड चालु राखे ए खरेखर तेमनां धर्मानुराग अने तदर्थे प्रीतिश्रम (Labour of love) ने आभारी छे।

ए पण नोंधवा जेवु छे के बीकानेरना घणा वखत थी बंध रहेला पुस्तक भण्डारो जोवा तपासवानी महामहेनते प्राप्त थयेली तक ऐ॰ टॉडने न मली हत, तो आ ग्रन्थनी अनेक हकीकतो प्रकाशमा आवी शकी न हत। जैन पुस्तक भण्डारो स्थले २ विद्यमान छे, पण ते एवी स्थितिमा छे के तेनो लाभ विद्वानो—पुरातत्त्वना शोधकोने पण मली शक्तो नथी ए अति शोकनो-दुर्भाग्यनो विषय छे। आ वखते अमदाबादमा एक पुस्तकालयनो पायो नाखता पुस्तकालयना मकान, व्यवस्था अने जैन संघना ग्रन्थ भण्डारोनी दशा सम्बन्धी महात्माजीए केटलीक घणी महत्त्वनी सूचनाओ करी छे—छेल्ले छेल्ले थोडो हर्ष भर्यो विनोद पण कर्यो छे। त अहीं अवतारवानु रोकी शकातु नथी। तेओ कहे छे—"गुजरातमा जैन धर्मना पुस्तकोना घणा भण्डार छे पण ते वाणीयाने घेर छे। तेओ ए पुस्तकोने सुन्दर रेशमी वस्त्रोमा वीटालीने राखे छे। पुस्तकोनी ए दशा जोई मारं हृदय रडे छे, पण जो रडवा बेसु तो हु ६३ वर्ष जीवु पण शी रीते ? पण मने तो एम थायछे के जो चोरीनो गुन्हो न गणातो होय तो ए पुस्तको हु चोरी लउं अने पछी एमने कहु के तमारे माटे ए लायक नहोता माटे में चोरी लीधा। वणिको ए ग्रन्थोने नहीं शोभावे, वणिको तो पैसा भेगा करी जाणे अने तथीज आजे जैन धर्म—जैन साहित्य जीववा छता नुशाई गया छे। धर्म पैसाना ढालामा केम पडे ? पैसो धर्मना ढालामा पडवो जोइए।"

आ परथी श्रीयुत 'सुशील' नामना सुप्रसिद्ध पत्रकार जणावेछेके "महात्मा गाधीजी जेवा सात्विक वृत्तिवाला पुरुषने जैन ग्रन्थालयो

नां रेशमी वस्त्रोथी वींटलायेला, गर्भ श्रीमन्तना लाडकवाया पुत्रनी जेम पम्पालाता ग्रन्थो चोरवानुं मन थाय ए आपणे सारु एक सरस प्रमाण पत्रज गणाय। आपणे एनी जेवी जोइए तेवी व्यवस्था करी शक्या नथी, एनाथी जगतने अने आपणने पोताने जे लाभ मलवो जोइए तेनाथी आपणे वंचितज रह्या छीए। अने एनुं कारण आपणे विद्या, साहित्य, ज्ञान करतां पण धनवैभवने विशेष अगत्यनुं आसन आप्युं छे एज छे एम तेमना कहेवानो मुख्य आशय छे। जुदा २ स्थानोए, जुदी २ मालेकीना अनेक ग्रन्थ-भण्डारो होयए तेना करतां सार्वजनिक अने मुख्य स्थले ग्रन्थसमृद्ध पुस्तकालयो होय वधु इच्छवा योग्य छे। मर्यादित द्रव्य अने शक्तिथी एनुं सुयोगपणे संरक्षण अने प्रचार पण थई शके। आवी सीधी सादी वात पण आपण व्यवहारदक्ष आगेवानोने गले हजी-उतरनी नथी।"

लेखक महानुभावोए अन्य मालेकीना पुस्तक भण्डारोनो तपासवा जेटली सगवड मेलवी तेनो वने तेटलो उपयोग करवानो उद्यम कर्यो, एटलुंज नहीं परन्तु पोते पण पोताना माटे अनेक ग्रन्थोनो जवरो संग्रह द्रव्य खरची बीकानेरमा कर्यो छे के जे जोवा आववानुं आमन्त्रण मने करताज आव्याछे। ए संग्रहनो एक सार्वजनिक संग्रह स्थान तरीके जनताने लाभ मले एवो प्रबन्ध करवानी तेमनी अभिलाषा छे ते सत्वर पार पडो !!

'सूरीश्वर अने सम्राट्' ए पुस्तकमां अकबर बादशाह तेनी साथे सम्बन्ध धरावनी अन्य व्यक्तिओ, राजवहीवट वगेरे सम्बन्धी जैनेतर

सावनो द्वारा एकत्रित करेली हकीकतो मूकवामां आवी छे तेथी आ पुस्तकमां ते सम्बन्धी निर्देश करवाथी लेखक मुक्त रह्या छे ते सुवदित छे।

जीवन चरित्र ना पुस्तकमां उपदेशात्मक विवेचनो वधु पानां रोके तो ते अन्दरना इतिहासने लगभग दाटी दईने वांचकने मुद्दानी वानथीज विमुख बनावी दे तेवी धास्ती छे। पुस्तकनो हेतु कदाच जैन धर्मनो यश प्रद्योन बनाववानो होय, तेनी फिकर नथी, परन्तु धर्मनां उपरछलां विवेचनोने लीधे पुस्तकनी ऐतिहासिक महत्ता झांखी पडे छे ए ध्यान बहार रहेवुं न जोईए।

आ पुस्तकनां लेखक तथा 'सूरीश्वर अने सम्राट्' ना लेखक मुनि पोताना ऐतिहासिक शोखने हरदम सिंचन कर्या करे अने भविष्यमां विशेष अन्धकार भेदीने एवीज साची धातु कशा मिश्रण विना आपणी समक्ष मूक्यां करें, एम इच्छीशुं।

सामान्यरीते ग्रन्थावलोकन करतां एक वाचनमां एक इतिहास-रसिक तरीके मारो भिन्न अभिप्राय सप्रमाण व्यक्त करवानुं शुद्धि तरीके नम्र पणे बनाववानुं मने प्राप्त थाय छे तो तेम करवा रजा लउं छुं।

लेखक आ ग्रन्थ ना आठमा प्रकरणमां पृ० १०३ नी टिप्पणीमां खरतरगच्छीय जयसोम उपाध्याय कृत प्रश्नोत्तर ग्रन्थ मां थी अमुक उतारो आपेल छे तेमांथी आवश्यक भाग लईए:—

"तउ तेहनां (जिनचन्द्र सूरिना) शिष्य तथा श्रावक (तेहनें) 'युगप्रधान' कहें तिहां स्यो दूषण थाइ ?×+++वली 'युगप्रधान' नामि

दुहावो ते स्युं ? आज प्रभूत वली श्री जिनशासन माहि किणइ आचार्यनइ 'जगद्गुरु' कह्या हुवइ तो तुम्हे दिखाडो ! तमारा श्रीमतीना भट्टारकनै श्रावक श्राविका 'जगतगुरु' कही गावै छै, तुम्हे साभली खुशी थाओ छो, श्री जिनचन्द्र सूरिजीना नाम 'युगप्रधान' साभली दुहवाओ ते स्युं ? जइ पातिशाह 'जगतगुरु' एह्वा नाम साभले (तउ) फजीत करे, श्री सेख अबुलफजल हजुर 'जगत् गुरु' नाम कहता-शेखे अम्ह-ः हजूर रोस करी भानुचन्द्र पन्यास नै जे बोल कह्या, ते भानुचन्द्र जाणे छे, वली लोकोना कह्या 'तपा' एह्वा नाम मानो छो एवं विचारतां तुमने ए प्रश्न अजाणपणो जणावे छे।"

आमालु लखाण सम्पूर्ण सत्यमानी लेखक तेनी नीचे एम लखवा प्रेराया छे के :—

'इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि श्रीमान् हीरविजयसूरिका 'जगतगुरु' पद उनके भक्त श्रावक श्रावकाओं द्वारा रखा हुआ गुरु भक्ति सूचक मात्र था, किन्तु सम्राट् अकबरने उन्हे 'जगत गुरु का कोई बिरुद नहीं दिया था।'

उपरना अवतरण परथी मने एम जणायछे के तपागच्छवालाओ ख० जिनचन्द्रसूरिने 'युगप्रधान' ए बिरुद अकबरे आप्युं होय, एम

आवको तेमने ए पद लगाडे छे। आवी स्थिति थई हशे त्यारे रा० जयसोमजी तपागच्छ वालाने उद्देशीने प्रत्युत्तर रूपे एम कहे के 'जगद् गुरु' ए बिरुद पण जिन शासनमां कोई आचार्यने अपायुं नथी, तेम ते पद अकबर सांभले तो फजेत करे; अबुल फजल समक्ष हजुर 'जगद् गुरु' नाम कहेतां तेणे अमारी समक्ष रीस करी भानुचन्द्रने जे बोल कह्या ते तो जाणे छे, वली लोकोनुं कहेलुं तमारुं 'तपा' नाम पण बराबर नथी-ए स्वाभाविक छे। एक बीजानुं उत्थापे एवो घाट आमां थयो लागे छे।

तपागच्छना साहित्यमां खरतरगच्छाचार्य जिनचन्द्र सूरिने अकबरे 'युगप्रधान' बिरुद आप्युं एवुं मारा जोवामां नथी आव्युं; ज्यारे तेम थयुं हतुं ए वात खरतर गच्छना तत्कालीन साहित्य थी-शिलालेखोथी जणाय छे, तेथी ते एक सत्य घटना तरीके न स्वीकारवी ? स्वीकारवी घटे। तेज प्रमाणे अकबरे तपागच्छाचार्य हीरविजयसूरिने 'जगद् गुरु' बिरुद आप्युं ए वात भले खरतर गच्छना साहित्यमां प्राप्त न थाय पण तपागच्छना तत्कालीन साहित्य थी-शिलालेखोथी स्पष्ट छे तेथी ते हकीकत सत्य तरीके अवश्य स्वीकार्य छे। तेनां उदाहरण जोइए :—

॥ संवत १६४६ मां लखायेली जेनी प्रत मले छे एवा काव्य के जेनुं नाम पण 'जगद् गुरु' परथी 'जगद् गुरुकाव्य' छे तेमां तेना कर्त्ता १६७ मां श्लोकमां कहे छे के :—

शुद्धाः सर्वपरीक्षणे गुरुवरा ज्ञात्वेति पृथ्वीपतिः।
सभ्यानां पुरतः सपर्षदि गुणांस्तेषां स्वयी शोधितान् ॥

उक्त्वा सर्वं यतीश हीरविजयाख्या नाम दद्याद् भक्तितः ।
स्वैर्वाक्यैर्विरुदं जगद्गुरुरिति स्पष्टं महः पूर्वकम् ॥१॥

सर्व परीक्षा थी गुरुवर शुद्ध छे एम जाणी बादशाहे पोतानी परिषद्‌मां सभ्योनी समक्ष स्वबुद्धिथी शोधायेला एवा तेमना गुणोने कहीने सर्व यतिओना स्वामी एवा हीरविजय नामना ने भक्तिथी। पोते उचारेला वाक्योथी महोत्सव पूर्वक 'जगद् गुरु' ए नामनुं स्पष्ट विरुद आप्युं ।

हीर सौभाग्य नामनुं महाकाव्य हीरविजय सूरिना समकालीन तेमना शिष्य परम्परानां देवविमले सं० १६४६ पहेलां रचनां आवेला तेमां १४ मा सर्गमां श्लोक २०५ मां जणाव्युं छे के—

'जेम आघाट नगरमां राजाए जगचन्द्रसूरिने वार वर्ष सुधी आचाम्ल तप करवामाटे 'तपा' विरुद आप्युं, खंभातमां दफरखाने मुनि सुन्दर सूरिने प्रेमथी 'वादि गोकुल संकट' विरुद आप्युं, तेवी रीते—

गुणश्रेणी मणीसिन्धोः श्री हीरविजय प्रभोः ।
जगद्गुरु रिदं तेन विरुदं प्रददे तदा ॥

—ते अवसरे ते (प्रमुदित अकबर शाहे) गुणश्रेणी रूप मणिना समुद्ररूप श्री हीरविजय प्रभुने आ 'जगद् गुरु' ए विरुद आप्युं ।

सं० १६४७ नो शिलालेख श्री पूरणचन्द्रजी नाहर सम्पादित 'जैन लेख-संग्रह भाग १ ला मां नं० ७१४ नो ज मात्र एकज दाखला तरीके लइए:—

॥ॐ॥ संवत् १६४७ वर्षे फाल्गुन मासे शुक्लपक्ष- पंचम्यां तिथौ गुरुवासरे श्री तपागच्छाधिराज पातशाह श्री अकबर दत्त जगद्गुरु

विरुद धारक भट्टारक श्री श्री श्री ४ हीरविजय सूरीणामुपदेशेन चतुर्मुख श्री धरणविहारे प्राग्वाट ज्ञातीय सुश्रावक सा० खेता नायकेन वर्द्धा पुत्र यशवन्तादि कुटुम्ब युतेन अष्ट चत्वारिंशन् (४८) प्रमाणानि सुवर्ण नाणकानि मुक्तानि पूर्वदिक् सत्क प्रतोली निमित्त मिति श्री अहमदावाद् पार्श्वे उसमा पुरतः ॥ श्री रस्तु ॥

आम अनेक तत्कालीन प्रमाणोथी पुरवार थाय छे के हीरविजय सूरिनुं 'जगद्गुरु' विरद पातशाह श्री अकबर दत्त हतुं। (जेम जिनचन्द्रसूरिनुं 'युगप्रधान' विरद पण अकबर दत्त हतुं तेम) अने शोध खोल थी कालक्रम विचारतां सं० १६४० मां ते 'जगद्गुरु' विरद हीरविजय सूरिने अपायुं हतुं।

जैन संघ ए एक विराट वटवृक्ष छे। तेना थडमां थी फुटेली श्वेताम्बर अने दिगम्बर नामनी बे महती शाखाओ छे, अने ए शाखाओमाथी गच्छो, सम्प्रदाय, ज्ञातिओ पेटा ज्ञातिओ नी कोइ अजब रीते पागरेली डालीओ छे, के जेथी बधी दिशाओ भराइ गइ होय तेवुं कल्पनामां आवे छे, ते विराट वृक्ष ना मूल जेटला उंडा छे तेटलीज तेनी शाखाओ हरीभरी छे, डालीए डालीए पुष्पोनी अने फलोनी बहार जमी पडी छे, ते वृक्षनी शाखाए शाखाए डालीए डालीए महा प्रभावशाली पुरुषोनी कीर्ति सुवास व्हेकी रही छे, शाखाओ डालीओ जाणेके परस्पर सात्विक स्पर्धा करती होय एम लागशे।

संघ तो अविभक्त रहेवो जोइए, ए सिद्धान्त घणो सुन्दर अने आदरणीय छे, पण प्रकृति पोते एनो विरोध करे छे, वृक्षनुं थड भले

एक अने अखण्ड होय पण एटलामांज एनुं सामर्थ समाइ जतुं नथी, शाखा ना विस्तार माज एना बल अने रसनी साची सार्थकता छे, खजूरी अने नालीयेरना झाड़ सीधा वध्ये जाय छे, पण एनी उपमा आर्य संस्कृति ना प्रतिनिधिने आपी शकाती नथी, वड तो हिन्दुस्थाननी भूमिमाज फाले फूले छे, अने आर्य संस्कृति नी विराटता तथा भव्यता पण ए वटवृक्ष दाखने छे एनुं बीज सूक्ष्म छे, पण कालनी सामे झूझवानी एना मा ताकात छे, एनो विस्तार पण एटलो असाधारण होयछे ऐनी एक एक शाखा एक वृक्ष ना विस्तार नी हरिफाइ करे छे। जैन संघ ए रीते जुदा जुदा गच्छो, सम्प्रदायोमा विस्तार पाम्यो छे एने ए बधामां जे एकज प्रकार नो रस वही रह्यो छे ते जोतां जैन संघ तत्वतः एक विराट वट वृक्ष नहीं तो बीजुं शुं छे ?

ए वटवृक्ष नी श्वेताम्बर शाखा नी त्रण मुख्य डालीओ हाल विद्यमान छे, १ खरतर २ तपा ३ अंचल, ए नामना त्रणगच्छो। आत्रणे गच्छना आचार्यों नी पट्ट परम्परा पर दृष्टिपात करीशुं तो तेना मां जैन शासननो प्रभाव प्रदर्शित करवानी प्रबल अने एकधारी भावना जाग्रत हती एम जणाशे, हजु तेमनो सलंग, सविस्तर, अने शोधखोलथी मेलवेली सामग्री वालो इतिहास लखायो नथी ए शोकनी वात छे, पण ज्यारे तेवो लखाइ बहार पडशे त्यारे जणाशे के ते एक कीर्तिवन्त इतिहास छे, आ शाखाओ डालीओ भिन्न भिन्न होवाछतां ते सर्वेनो मूल अने थडनी साथे घनिष्ट सम्बन्ध छे; छतां बीजी दृष्टिए जोइसुं तो प्रकृति ना नियम प्रमाणे विकास अने

विस्तार ए जेटला स्वाभाविक छे तेटलाज विरोध अने वैपास्य प्रत्येक शासने माटे भयंकर तेमज प्राण हानिकर छे। आपणा गच्छोना इतिहास ना ए बन्ने वस्तुओ मली आवेछे, आरम्भनो इतिहास शौर्य अने औदार्य थी अंकित होय छे, पण ए पछी जेम जेम वर्तमान कालनी नजीक आवीए छीए तेम तेम विरोध अने भेद भयंकर रूप धरता जणाय छे। मनुष्य स्वभाव जागे युद्धशील होय नहिं, तेम नानी निर्जीव वातोपर झवडा थयां कर्या छे, पुरातन वीर पुरुषो नां कथानक सांभली तथा संस्मरी आपणे आल्हाद अनुभवीए छीए पण वर्तमान स्थिति नो सामनो करवानो अवसर आवे छे त्यारे तो उछलता मारवुं गरम लोही पण जाणेके थीजी जतुं होय एम लागे छे, आपणी संघ संस्थानुं वळ छिन्न भिन्न थयुं छे अने अन्य सामान्य विरोधी ना हाथ मजबूत बन्या छे, हजुपण समाज चेतशे? अने आपस आपम ना क्लेशथी तद्दन मुक्त रहेवानुं मन वचन कायाए पाली श्रीवीतराग प्रभुना पोते साचा अनुयायी छे ए स्वतः सिद्ध करशे? सौ पोता पोताना संगठन योजे, कुप्रथाओ ना दासत्व ने दूर करे अने ज्ञानना विस्तार अर्थे कइक पण संगीन काम करी बतावे तो समुच्चये समग्र जैन संघ संगठित अने वलवान बन्या विना न रहे ए निर्विवाद छे।

भूतकाल नी भव्यतानुं संगीत दूर दूर थी आवना संगीत नी पेठे मनोरम अने कर्णप्रिय लागे छे अने माणसने मुग्ध बनावे छे, तेमांथी घणी खरी विषमता, कठोरता उडी जाय छे, दूर दूर थी वही आवता झरणनुं पाणी जेम निर्मलता पामे तेम भूतकाल ना सूर पण

अधिक निर्मल बने छे, क्षेत्र अने काल ना अन्तरमां वस्तुने विशुद्ध बनाववानु स्वाभाविक सामर्थ्य छे, इतिहासमां भमकभरी विगतो मोटे भागे भरी होय छे ए देखाय छे प्राचीन बधु भव्य लागे छे ने भूतकालनु घेन चडे छे, आ वस्तु-स्थिति थी चेतवानु छे

वली भूतकाल वर्त्तमाननी साथे संकलायेला रहे छे एने साव भूंसी नांखवानो प्रयत्न करनार गमे तेवी महान् व्यक्तिके प्रजा होय तोये ते निष्फल निवडवानी, केटलाकनी फरियाद छे के भूतकालनी अतिशयोक्तिओथी अने भूतकाल ने जे भव्य आकर्षणीय रंगोथी रंगवामां आवे छे, तेथी घणा वहेमो, पाखण्डो, अनाचारो अने दम्भो नभी रह्या छे, अने भूतकालनी भव्यता घणी वार माणसने आंजी नाखे छे, अने यथार्थ वस्तु-स्थिति समजवां मां अन्तराय रूप बने छे, राजाओ अने मोटा श्रीमंतोनी खुशामद करवां मां घणा सारा पण्डितो, कविओ अने तपस्वीओ ए पण पुरातन समयमां मोटो भाग भजव्यो छे, अने एने लीधेज भूतकाल आटलो आकर्षक बन्यो छे, भूतकाल ना ए ऐश्वर्यशालो राजाओ अने धनिकोनी नबला-इओ न होती एम बनेज नहीं, तेमणे गरीबोने चूसवामां, नबलाने जीतवां मां, सामा थनार पर जुल्म करवामां, प्रजाने पीडवामां जे कई कर्यु होय तेनो कई पण इसारो सरखो पण करवामां आवतो नथी, समाजमां रहेला अनाचार अत्याचार पण लोकाचारने नामे ओलखाता हता, अने जेमने ए जमाना ना एक महापुरुष गणी शकाय तेमणे पण ए अत्याचार सामे उंची आंगली करवानी हिम्मत नथी बताबी, एटले के जुनु एटलु बधु सारु एम गणवु के मानवु

ए सत्यनो द्रोह छे, जे लोकाचार के रीति नीति उपर 'प्राचीनता' नी छाप पडी होय ते प्रत्येक युगमा पवित्र अने उपकारक ज होय ए भ्रमणा छे।

एक विद्वान ना शब्दो मा इतिहास एटले अवनवी प्रेरणा नो प्रेरक, प्रजाआनो आत्मदर्शक, परम विशुद्धिकारक अनेक मंथनो जगावनार महाप्राण, ए महाप्राण नु हार्द लेखकोनी लेखनीओना स्पर्श थी उघडे छे, अनेक कलमो ए महाकाल ना मनोमन्दिरमा प्रवेशवा चाली छे, अने वन्य वारणानी चीराडो जोइ पाछी वली छे, गर्भद्वार मा दाखल थनारी तो विरल (छे)। इतिहास एटले हतु तेवु आलेखवु पण खरेखर केवु 'हतु' ए कहवु शक्य नथी वन्यु छता इतिहास ना कालनोले पोत पोताना युग-संस्कार ना पडदा उपर झीलवा एज इतिहास लेखक करी शके तेम छे इतिहास ना वनावो मा उडो उतरी अमृत ना अक्षरो पाडवा एटलु तेनी पासेथी इच्छीए।

जीवन चरित्र ए पण इतिहासनु एक 'अङ्ग छे, महान पुरुषोना जीवन युग ने घडे छे, तेओ युगसर्जक छे, अने युगने जोइता महा-पुरुष मली रहे छे, तेमनां जीवनमा थी तेमना युग ना इतिहास सांपडे छे, वली महापुरुषो ना जीवन प्रसगो प्रकाश पाथरती दीवा दांडीओ छे, तेनो अर्थ ए छे के पुरुषो चाल्या जाय छे पण एमना पुनित सस्म-रणो रही जाय छे, अने ए सस्मरणो प्रकाशनी गरज सारे छे सैकडो उपदेशो करता, आवा जीवन प्रसंगो श्रोताओ अने वाचकोना दिल उपर स्थायी असर करे छे, वली ए पण विचारवानु छे के धर्मना

मुख्य प्रचारको, प्रवर्त्तको अथवा पुनरुद्धारको धर्मनी प्राण शक्ति ना मूल झरण छे धर्म प्रवाहने जरूरने प्रसंगे संगठनके पुनर्विधान नां पाणि नथी मलता ते वहु लांवा कालगीसुधी टकी शे कतो नथी मोटा रण मां नानी नदीओ नां जल शोपाइ जाय तेम ते धर्मप्राण कालेकरी ने क्षीण बने छे तेथी जरूर पडथे प्रभावको, प्रचारको, युगप्रधानो अने धर्मधुरन्धरो ए वहता प्रवाहने विषे देश कालने अनुसरी पुनर्घटना ना नवा संस्कार ना प्राण पूरे छे, ए रीते धर्म सम्प्रदायो पोताना अनुयायीओ अने अनुरागीओने आलोक तेमज परलोकना कल्याणमां साधनरूप बने छे।

खरतर गच्छना एक महान् आचार्य श्री जिनचन्द सूरिनुं जीवन वृत्तान्त बहार पाडी लेखक नाहटाजीए एक सारी इतिहास सेवा करी छे। खरतरगच्छीय साधुओ ए जैन शासन अने साहित्य नी घणी सेवा वजावी छे। अने हजु सुधी कालना प्रवाहमां सदोदित रही ते गच्छ विद्यमान छे। सामान्य रीते एम कही शकाय के प्रायः गूजरातमां, पश्चिम-हिंदमां तपागच्छना साधुओनो विहार अने प्रभाव जमी रह्यो त्यारे प्रायः मेवाड मारवाड आदि राजपूतानामां अने उत्तर हिन्दमां खरतर गच्छना साधुओनो विहार अने प्रभाव थतो रह्यो। तपागच्छ वालानुं साहित्य गूजरातनां तपागच्छीय श्रावको अने संस्थाओए प्रकट करवानुं सतत जारी राख्युं, ज्यारे दुर्भाग्ये खरतरगच्छीय साहित्यने विशेष प्रमाणमां सतत बाहर पाडवा अर्थे कोइ जबरी संस्था के श्रीमन्त हजु सुधी मली शकेलीनथी तेथी तेमनुं साहित्य वहु अल्प प्रकट थयुं छे। अने ते गच्छनी शासन सेवा प्रकाशमां पूरते रीते आवी नथी।

लेखक श्री नाहटाजी खरतरगच्छ प्रत्येना अनुरागथी प्रेराइ ते गच्छनी शासनसेवा अने साहित्य सम्पत्ति जनता समक्ष मूकवाना दृढ़ अभिलाष सेवी रह्या छे। अने तेना प्रथम प्रयास रूपे ये त्रण ग्रन्थ बहार पाडी आ जीवन चरित्र अनेक प्रमाणो सहित परिश्रमपूर्वक लखी प्रकट करे छे। अने 'ऐतिहासिक जैनकाव्यसंग्रह' नाम नो संग्रह पोतानी माहिती भरपूर प्रस्तावना सहित थोडा समय पछी प्रकाशित करशे ते स्तुत्य छे। तेमनी शुभेच्छा पार पडे ए सौ कोइ इच्छशे।

मने आ प्रस्तावना लखवा माटे उद्युत करी जे तक आपी छे ते माटे श्रीयुत नाहटाजी नो हृदयपूर्वक आभार मानुं छुं २२-४-३५ ने दिने टुङ्की प्रस्तावना लखी मोकल्या पछी तेने जरा विस्तृत करवानी सूचना थता तेम में करेल छे। छताय हुं पूरतो न्याय आपी न शक्यो होउं तो ते क्षन्तव्य गणी लेवाशे एटली खात्रीभरी आशा सेवुं छुं।

तवावाला बिल्डिङग त्रीजे माले लोहारचाल मुम्बई ता० २४-६-३५	सत्पुरुष चरणेच्छु **मोहनलाल दलीचन्द देशाइ** B.A., LL.B ADVOCATE.

॥ सहायक ग्रन्थ सूची ॥

ग्रन्थ नाम — लेखक, सम्पादक और प्रकाशक — रचनाकाल

संस्कृत—

. १ कर्मचन्द्रमन्त्रि वंश प्रबन्ध उ० जयसोम गणि (सं० १६५०)

२ कर्मचन्द्रमन्त्रि वश प्रबन्ध वृत्ति उ० गुणविनय (सं० १६५६)

. ३ अष्ट लक्षी (प्रशस्ति) उ० समयसुन्दर (सं० १६४६)

. (अनेकार्थ रत्नमंजूषा में प्रकाशित)

४ समाचारी शतक उ० समयसुन्दर (सं० १६७२)

५ कल्पलता (प्रशस्ति) उ० समयसुन्दर (सं० १६८५)

६ मध्यान्ह व्याख्यान पद्धति वादी हर्षनन्दन (स० १६७३)

. ७ जैन लेख संग्रह भाग १ बाबू पूरणचन्द्र नाहर M. A. B L

. ८ जैन लेख संग्रह भाग २ बाबू पूरणचन्द्र नाहर M A. B L.

. ६ जैन लेख संग्रह भाग ३ बाबू पूरणचन्द्र नाहर M A. B L.

. १० खरतरगच्छ पट्टावली संग्रह सं० श्री जिनविजयजी।

. ११ प्राचीन जैन लेख संग्रह भाग द्वितीय सं० श्री जिनविजयजी।

. १२ जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भाग १ सं०श्री बुद्धिसागर सूरिजी

. १३ जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भाग २ सं०श्री बुद्धिसागर सूरिजी

. यह चिन्ह प्रकाशित ग्रन्थोंका सूचक है, इस चिन्ह बिनाके ग्रन्थ अप्रकट हैं।

१४ बीकानेर जैन लेख संग्रह संपादक—अगरचन्द भंवरलाल
१५ अपभ्रंश काव्यत्रयी सं० लालचन्द भ० गांधी
१६ भानुचन्द्र चरित्र सिद्धिचन्द्रजी
१७ विजय प्रशस्ति काव्य मू० हेमविजय टी०गुणविजय(सं०१६८८)
१८ प्रशस्ति संग्रह द्वय P. C. हरिसागरजी
१९ आचार दिनकर प्रशस्ति हर्षनंदन (१६६६)
२० षट्स्थान प्रकरण प्रस्तावना खर० जिनवृद्धि मंगलसागरजी
२१ पञ्चनदी साधन विधिः (हमारे संग्रहमें)

प्राकृत—

२२ पार्श्वनाथ चरित्र (प्रशस्ति) देवभद्राचार्य (सं० ११६८)

हिन्दी—

२३ ओसवाल जातिका इतिहास, प्र० ओसवाल हिस्ट्री पब्लिशिंग हाउस।
२४ राजपूतानेके जैन वीर अयोध्याप्रसाद गोयलीय
२५ सूरीश्वर और सम्राट् मुनि विद्याविजयजी
(मूल गुजराती, अनुवाद हिन्दी)
२६ विजय प्रशस्ति सार मुनि विद्याविजयजी
२७ कृपारस कोष श्री जिनविजयजी
२८ गणधर सार्धशतक (भाषान्तर) सं०श्री जयसागर सूरिजी
२९ श्रीजिनदत्तसूरि चरित्र भाग द्वि० श्री जयसागर सूरिजी
३० महाजनवंश मुक्तावली महो० रामलालजी

.३१ ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह सं० अगरचंद भंवरलाल नाहटा
.३२ यतीन्द्र विहार दिग्दर्शन यतीन्द्रविजयजी
.३३ विज्ञप्ति त्रिवेणी सं० जिनविजयजी
.३४ अकबरी-दरबार प्र० नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।
.३५ जहाँगीर नामा मुन्शी देवीप्रसादजी
.३६ खानखाना नामा मुन्शी देवीप्रसादजी
.३७ बीकानेर राज्यका इतिहास प्र० वैंकटेश्वर प्रेस, ले०-कन्हैयालाल
.३८ भारतके प्राचीन राजवंश विश्वेश्वरप्रसाद रेऊ
.३९ सरस्वती (मासिक) सन् १९१२
.४० नागरी प्रचारिणी पत्रिका सं० १९८१

गुजराती ग्रन्थ—

.४१ जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास मोहनलाल द० देसाई B. A., LL. B.,
.४२ जैन गूर्जर कविओ, भाग १ मोहनलाल द० देसाई B. A., LL B ,
.४३ जैन गूर्जर कविओ, भाग २ मोहनलाल द० देसाइ B. A., LL B.,
.४४ जैन ऐतिहासिक गूर्जर काव्य संचय, श्री जिनविजयजी
.४५ ऐतिहासिक (जैन)रास संग्रह भाग ३ सं० श्री विजयधर्मसूरिजी
.४६ ऐतिहासिक(जैन)रास संग्रह भाग ४ सं० श्री विद्याविजयजी
.४७ प्रचीन तीर्थमाला संग्रह सं० श्री विजयधर्मसूरिजी
.४८ श्री जिनचन्द्र सूरिजी संक्षिप्त जीवन-चरित्र, प्र०श्री जिनदत्त-सूरि ज्ञान भण्डार बम्बई।

. ४६ मवा-सोमा — गोकुलदास द्वारकादास रायचुरा
. ५० आनन्द काव्य महोदधि मौ० ७ प्र० देवचंद लाल० पुस्तकोद्धार फंड सूरत।
. ५१ धर्म देशना — विजयधर्मसूरिजी
. ५२ समेत शिखिर स्पेशल ट्रेन स्मरणांक प्र० वड़वाजैनमित्रमंडल
. ५३ जैनयुग
. ५४ आत्मानन्द प्रकाश, (मासिक)
. ५५ "जैन" (साप्ताहिक पत्र) रौप्य महोत्सव अंक
. ५६ कॉन्फरेन्स हेरल्ड (इतिहास-साहित्य अंक)
. ५७ जैन साहित्य संशोधक (त्रैमासिक)

प्राचीन भाषा—

. ५८ श्री जिनचन्द्रसूरि अकबर-प्रतिबोध रास लब्धि कल्लोल (सं० १६५८) प्र० ए०- जैन का०स०
. ५६ युगप्रधान निर्वाण रास — समयप्रमोद „
. ६० श्रीपूज्य वाहण गीत — कुशललाभ „
. ६१ श्री जिनचन्द्र सूरि गीत नं० १०८ अनेकों सुकवि (हमारे सं०में)
. ६२ श्री जिनसिंह सूरि गीत ३१ — अनेकों सुकवि (हमारे सं० मे)
. ६३ श्री जिनराज सूरि रास — श्रीसार (सं० १६८१) „
. ६४ श्री जिनसागर सूरि रास — धर्मकीर्ति (सं० १६८१) „
. ६५ श्री निर्वाण रास — सुमतिवल्लभ (सं०१७२०) „
. ६६ श्री हीरविजय सूरि रास कवि ऋषभदास (सं० १६८५) प्र० आ० का० महो० मौ० ५वां

६७ प्रश्नोत्तर ग्रन्थ (विचार रत्न संग्रह) उ० जयसोमजी
६८ वेगड (खरतर) शाखा पट्टावली हमारे संग्रहमे
६९ खरतरगच्छ पट्टावली श्री जिन कृपाचन्द्र सुरि ज्ञान भण्डार
७० खरतर गच्छ पट्टावलियें बड़ा उपासरा, बृहत् ज्ञान भंडार
७१ जइत पद वेलि कनकसोम (सं० १६२५)
७२ शत्रुञ्जय यात्रा परिपाटी स्तवन गुणरङ्ग (सं० १६१६)
७३ शत्रुञ्जय यात्रा परिपाटी स्तवन गुणविनय (सं० १६४४)
७४ शत्रुञ्जय यात्रा परिपाटी स्तवन हर्षनन्दन (सं० १६७४)
७५ " " " " ....
७६ वच्छावत (पद्य) वंशावली हमारे संग्रहमे
७७ वच्छावत (गद्य) वंशावली "
७८ " " वंश ख्यात श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभंडार
७९ वासुपूज्य स्तवन समयराज
८० " अपूर्ण
८१ प्रशस्ति संग्रह संग्राहक—अगरचन्द, भंवरलाल नाहटा

English—

८२ Ain-i-Akabari, Trans. by H. Blochmann
८३ Akabar Nama
८४ Akbar the Great Moghul by Vincent A smith.
८५ A short History of Muslim Rule in India.
८६ Al-Badaoni.
८७ The Jain teachers of Akabar by Vincent A. Smith. (Commemoration Vollum)

बंगला—

८८ जहांगीरेर आत्म जीवनी कुमुदिनी मित्र

हस्त लिखित जैन ग्रन्थोंकी सूचियें—

८९ जैसलमेर भाण्डागारीय ग्रन्थानां सूचि सं० लालचंद भ० गांधी
९० लींबड़ी भंडार सूचि प्र० आगमोदयसमिती
९१ जैन ग्रन्थावली प्र० जैन श्वेताम्बर कॉन्फरेन्स
९२ जैन ग्रन्थानां सूचि कलकत्ता संस्कृत कालेज
९३ बीकानेर वृहत् ज्ञानभंडारसूचि अष्टकम् सू० अगरचन्द नाहटा
(१) जिनहर्षसूरि (२) महिमा भक्ति (३) दानसागर (४) अभयसिंह
(५) अबीरचंदजी (६) महरचंदजी (७) पनालालजी (८)....
९४ श्रीपूज्य जिनचारित्र सूरि संग्रह सू० अगरचंद नाहटा
९५ उपाध्याय क्षमाकल्याणजी भंडार सू० श्रीगणाधीश हरि-सागरजी, संशो० अगरचंद नाहटा
९६ श्री जिन कृपाचंद्रसूरि ज्ञानभंडार सू० अगरचंद नाहटा
९७ उपा० जयचन्द्रजी भंडार (लक्ष्मीमोहन शाला) बीकानेर
९८ बिकानेर स्टेट लायब्रेरी
९९ सोठिया लायब्रेरी (अगरचन्द भैरूंदान)
१०० बोरायसेरी खरतर गच्छ भंडार सू० भंवरलाल नाहटा
१०१ अभयजैन पुस्तकालय सू० अगरचंद भंवरलाल
१०२ कुशलचंद्र सूरि पुस्तकालय
१०३ हेमचंद्र सूरि पुस्तकालय
१०४ चुन्नीलालजी यति संग्रह अवलोकन नोटस्
१०५ पुनमचंद्रजी यति संग्रह० सू० अगरचंद नाहटा
१०६ जयपुर पंचायती भंडार (खरतर) सू० गणाधीश हरिसागरजी

१०७ हरिसागरजी पुस्तकालय, लोहावट
१०८ कोटा खरतर पंचायती भंडार सू० वीरपुत्र आनन्दसागरजी
१०९ वीरपुत्र आनंदसागरजी पुस्तकालय कोटा,
११० अंबाला भंडार सूचि सू० प्रो० बनारसीदासजी जैन, M A,
१११ गुलाब कुमारी लायब्रेरी (P. C.) सूचि कलकत्ता
११२ नित्य मणि विनय जैन लायब्रेरी सूचि कलकत्ता
११३ रायबद्रीदासजी म्युजियम,,—अवलोकन नोटस् *
११४ पं० प्र० सूर्यमलजी यति संग्रह, कलकत्ता
११५ रोयल एसोटिक सोसायटी (जैन ग्रन्थ सूचि)
११६ नेमिचंद्राचार्य—भंडार सूचि, काशी
११७ नेमिनाथजी भंडार सूचि, अजीमगंज
११८ ज्ञानचंद्रजी यति संग्रह (अजीमगंज) अवलोकन नोटस्
११९ फतेसिंहजी कोठारी संग्रह (अजीमगंज) अवलोकन नोटस्
१२० जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार सूचि० सूरत
१२१ भक्तिविजयजी भंडार—भावनगर (आत्मानंद सभा)
१२२ जैनधर्मप्रसारक सभा पुस्तकालय
१२३ आणंदजी कल्याणजी भंडार, पालीताना
१२४ हेमचंद्र सूरिपाठशाला पुस्तकालय, पालीताना
१२५ नरोत्तमदासजी M.A., संग्रह—अवलोकन नोटस्

और भी अनेकों हस्तलिखित ग्रन्थों, उनकी प्रशस्तियों, पट्टावलियों, विकीर्ण पत्रों, डा० भांडारकर, पीटर्सन, बुल्हर आदि छप रिपोर्टों आदि प्रकाशित अप्रकाशित सैकड़ों ग्रन्थोंके अवलोकन, अध्ययन और सहायसे इस ग्रन्थका संकलन किया गया है।

* जिनकी सचियें बनी हुई नहीं हैं।

॥ सांकेतिक अक्षरोंका स्पष्टीकरण ॥

अ०—अपूर्ण
आ०—आचार्य
आ०-आषाढ़,आश्विन
इ०—ईस्वी
उ०—उपाध्याय
उपा०—उपाध्याय
ऋ०—ऋषिमती (तपा)
ऐ०—ऐतिहासिक
कौं०—कोंकरिया
का०—कार्त्तिक
का०—कारितम्
कृ०—कृष्णपक्ष
कृपा०-कृपाचन्द्रसूरि
ख०—खरतर
गा०—गाथा
गु०—गुटका
च०—चउमास
चै०—चैत्र
चौ०—चौपइ

जय०—जयचन्दजी यति (बीकानेर)
जे०—जेठ (ज्येष्ट)
जे० भ० सूचि०—जेसलमेर भाण्डागारीय ग्रन्थानां सूचि
जै० गु० क०—जैन गूर्जर कविओ
ठि०—ठिकाना
डा०—डाबडा
डॉ०—डाक्टर
नं०—नम्बर
प०—पत्र
प्र०—प्रति
प्र०—प्रथम
प्र०—प्रतिष्ठितम्
प्र०—परिवार
प्रत्ये०—प्रत्येक बुद्ध
प्रा०—प्राकृत
पु०—पुस्तक

पृ०—पृष्ट
प्र०—प्रकाशित
प्रो०—प्रोफेसर
पं०—पंडित
फा०—फाल्गुन
बाला०—बालावबोध
बालाव०— ,,
बु०—बुधवार
भा०—भार्या
भा०—भाग
भं०—भंडार
महो०—महोपाध्याय
मा०—माघ
मि०—मिगसर
मुं०—मुंहता
मु०—मुकाम
मू०—मूल
मो०—मोहनलाल
द०—दलीचंद देसाइ
मौ०—मौक्तिक

मं०—मन्त्री
यु०—युगप्रधान
र०—रविवार
ला०—लाइब्रेरी
लि०—लिखित
व०—वदि
व्या०—व्याख्या
व्या०—व्याख्यान
वा०—वाचक
वि०—विक्रम
वै०—वैशाख

श्रा०—श्रावक
श्रा०—श्राविका
श्रा०—श्रावण
शि०—शिष्य
श्री०—श्रीमान्
श्री पूज्यजी०—जिन-चारित्रसूरि (बीकानेर)
शु०—शुक्ल पक्ष
स०—सन्
सा०—साह
स्त०—स्तवन

सु०—सुदि
सू०—सूचिकर्त्ता
सं०—संवत्
सं०—संघपति
सं०—संस्कृत
सं०—संग्रहमें
संशो०—संशोधक
सं०—सम्पादक
हि०—हिजरी
ज्ञान—ज्ञानभंडार

अनुक्रमणिका ।

ग्रन्थ-प्रवेश

चित्र सूची

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि मूर्ति (परिचय पृ० १५७-८)

* ॐ *

युग-प्रधान श्रीजिन-चन्द्रसूरि

पहला प्रकरण
परिस्थिति

रतवर्षका प्राचीन इतिहास अतिशय उज्ज्वल और गौरवमय है। क्या धार्मिक, क्या सामाजिक और क्या राजनैतिक सभी क्षेत्रों में इस देशका अतीत गौरव—सर्वोपरि है! भगवान महावीर और बुद्ध जैसे प्रातः स्मरणीय परम तत्त्ववेत्ता महापुरुष इसी रत्नगर्भा भारत-वसुन्धरामें अवतीर्ण हुए हैं। जिनके गहन तत्वज्ञान के अध्ययनसे विज्ञान और शिक्षाके सर्वोपरि धुरंधर पाश्चात्य विद्वान भी चकित और मुग्ध हो जाते हैं। जिन आधुनिक आविष्कारोंको गहन तत्त्व-चिन्तन और निरन्तर परिश्रमसे पाश्चात्य विद्वानोंने आविष्कृत कर समस्त संसारको चमत्कृत किया है, उनका अस्तित्व, भारतके प्राचीन साहित्य में हजारों वर्ष पहिले ही

से इस देशमें होनेके प्रमाण मिलते हैं। अध्यात्म-तत्वकी चिन्तामें यह देश इतना समुन्नत था कि जिसकी समता करनेका सौभाग्य किसी भी देशको अद्यावधि प्राप्त नहीं हुवा है। आज भी उस विषयका भारतीय साहित्य इतना विपुल और गहन है कि जिसको पूर्णत. समझनेके लिये पाश्चात्य धुरन्धर विद्वान् भी असमर्थसे ज्ञात होते हैं।

आध्यात्मिक एवं धार्मिक तत्व चिन्ताकी इतनी समुन्नतिके साथ साथ यहां का सामाजिक उत्कर्ष भी किसी प्रकार न्यून नहीं था। शिशुपालन, शिक्षा, गृहस्थ-जीवन, कौटुम्बिक सम्बन्ध, पारस्परिक व्यवहार और सामाजिक संगठन बहुत ही सुव्यवस्थित था। मानव जीवनकी सफलताके प्रत्येक अङ्गोंका सौन्दर्य्य पूर्ण विकसित था। आचार विचारोंकी पवित्रता आदि भारतकी सामाजिक उन्नतिका उज्ज्वल अतीत गौरव इतिहासके पृष्ठोंमे स्वर्णाक्षरोंसे अङ्कित है।

राजनैतिक क्षेत्रमें भारत भूमिके उज्वल रत्न सम्राट चन्द्रगुप्त, अशोक, सम्प्रति, विक्रमादित्य, भोज, कुमारपाल आदि प्रजावत्सल नृपतियोंका उच्च स्थान है। कौटिल्यके अर्थ-शास्त्र आदि भारतीय प्राचीन राजनैतिक ग्रन्थोंमे राज्यमर्य्यादा, राजनीति, राज्यव्यवस्था, युद्ध नीति, अधिकारियोंका कर्त्तव्य, जन समुदायके सुखके प्रति लक्ष्य आदि राजकीय सभी अङ्गोंके सुव्यवस्थित होनेके उल्लेख पाये जाते हैं।

"किसीके सब दिन सरखे न होई" यह कहावत भी भारतवर्ष पर पूर्णतः चरितार्थ हुई। कालचक्रके प्रबल झकोरोंने पारस्परिक फूट आदि दुर्गुण पैदाकर इस देशकी उन्नतिको दिनों दिन हीयमान करना

प्रारम्भ किया और क्रमशः देशकी शक्ति इतनी क्षीण हो गई कि जिससे उसपर विदेशी लोगोंने आक्रमणकर अपना आधिपत्य जमा लिया।

जबसे रत्नगर्भा भारत-वसुन्धराकी राज्य सत्ता आर्य्य-शासकोंसे नष्ट होकर यवनोंके हाथमें चली गई तबसे भारतकी प्राचीन संस्कृति में विकृति-सूचक गहरा परिवर्त्तन होने लगा। मुसलमान बादशाहोंने अपनी कठोर राजनीति और असहिष्णुवृत्ति से भारतकी अनुपम स्थापत्य कला और विशिष्ट-विशाल साहित्यपर कल्पनातीत वज्राघातके साथ-साथ भारतवासी लोगोंको असह्य यंत्रणाएं देना प्रारम्भ कर दिया था।

इस्लाम धर्मकी एकमात्र वृद्धिके अभिलाषी अत्याचारी म्लेच्छोंने अपनी अन्याय प्रवृत्तिको चरम सीमा तक पहुंचा दी थी। इस्लाम धर्म अस्वीकार करनेवाले आर्योंपर नाना प्रकारके कर लगा दियेगये थे। उनमेंसे जजिया नामका कर बड़ा ही भयानक और अन्यायपूर्ण था। इस करको न देनेवाली आर्य्य-प्रजाके प्राण तक ले लिये जाते थे। जगह्-जगह पर मुसलमानोंने आर्य्योंके देव मन्दिरोंको तुड़वा कर उनके स्थान पर * मस्जिदें स्थापनकर आर्य्य प्रजाके हृदयमे मार्मिक वेदना उत्पन्न कर दी थी।

जिस साहित्यके बिना समाजकी अवस्थिति भी संदेहपूर्ण है, उस सैकड़ों वर्षोंसे संचित प्राचीन साहित्य और धर्म-ग्रन्थोंको इतनी प्रचुर-संख्यामें जलाकर व कुओंमें डालकर नष्ट कर दिया कि जिनके

* इसके प्रमाण-स्वरूप आज भी कई मस्जिदोंमें आर्य्य मन्दिरोंके खण्ड-स्तम्भ, और ध्वस्त-शिलालेख दिवारोंमें लगे हुये पाये जाते हैं।

नाम भी अवशेष नहीं रहे। साहित्य प्रेमियोंसे यह छिपा नहीं है कि सैकड़ों ग्रन्थोंके अस्तित्वके प्रमाण मिलनेपर भी वे ग्रन्थ अब नहीं मिलते।

आदर्श और उन्नत शिल्पकला के आगार हजारों देवमन्दिर तुड़वाकर छिन्न-भिन्न कर दिये गये। जिनका ध्वंसावशेष अब भी कहीं २ अपनी प्राचीन गौरवगाथाका परिचय दे रहा है। उनके धराशायी होनेके एकमात्र कारण मुसलमान अधिकारी ही थे। यह अन्याय प्रवृत्ति पठान शासकोंके समयमें तो बहुत ही बढ़ चुकी थी, जिसका वर्णन श्रीयुक्त बंकिमचन्द्र लाहिड़ी अपनी पुस्तक "सम्राट अकबर" में इस प्रकार करते हैं :—

"পাঠানদিগের অত্যাচারে ভারত শ্মশান অবস্থায় প্রাপ্ত হইল, যে সাহিত্য কানন নিত্য নব নব কুসুমের সৌন্দর্য্য ও সুগন্ধে আমোদিত থাকিত তাহাও বিশুষ্ক হইল, স্বদেশ হিতৈষিতা, নিস্বার্থপরতা, জ্ঞান ও ধর্ম্ম সকলই ভারত হইতে অন্তর্হিত হইল, সমগ্র দেশ বিষাদ ও অনুৎসাহের কৃষ্ণ ছায়ায় আবৃত হইল।"

अर्थात्—पठानोंके अत्याचारसे भारत श्मशान अवस्थाको प्राप्त हो गया, जो साहित्य वाटिका सर्वदा नये नये पुष्पोंके सौन्दर्य और सुगन्धिसे प्रफुल्लित रहती थी वह भी सूख गई। स्वदेश-हितैषिता, निःस्वार्थ परायणता, ज्ञान और धर्म ये सब भारतवर्षसे अलग हो गये। सारा देश विषाद और अनुत्साहकी काली घटाओंसे आच्छादित हो गया।

एक तो आर्य्य लोग पठानोंके त्राससे त्रस्त हो ही चुके थे दूसरे

तैमूरलङ्गके भयङ्कर आक्रमणसे तो भारतवर्ष को इतनी क्षति पहुंची कि जिसका वर्णन किया जाय तो एक छोटा-मोटा ग्रन्थ बन जाय।

संक्षेपमें इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि उन्होंने अपनी पाशविक लोभ और काम वृत्तिको पूरी करनेके लिये जनहत्या, लूटपाट, और स्त्रियोंका सतीत्व भंग आदि अमानुषिक दुष्कृत्य करके भारतीय प्रजाको अत्यन्त कष्ट पहुंचानेमें कोई कसर नहीं रखी। तैमूरके इस उपद्रवसे पठानोंको राज्य-सत्ताको धक्का अवश्य ही पहुंचा, किन्तु तो भी उन्होंने अपना जाति-स्वभाव न छोडा।

सिकन्दर लोदी आदि बादशाहोंने मन्दिरोंको नष्ट करनेका काम चालू ही रखा। कविवर लावण्यसमय ने क्या ही मार्मिक शब्दोंमें कहा है :—

जिहा जिहा जाणइ हिन्दू नाम, तिहां तिहा देश उजाडइ गाम।
हिन्दू नो अनतरियउ काल, जू चालि तू करि संभाल॥

(सं० १५६९ में रचित "विमल प्रबन्ध")

उसके पश्चात् मुगल बादशाहों के समयमें भी यह अत्याचार ज्योंका त्यों बना रहा। सन् १५३० ई० में बाबरका देहान्त होजाने से उसका पुत्र हुमायूँ बाईस वर्षकी अवस्थामें दिल्लीकी राज-गद्दी पर बैठा, किन्तु अभागे भारतमें तो अशान्ति ही रही। और तो दूर रहा स्वयं हुमायूं भी कितने ही वर्षों तक पदच्युत होकर देश-देशमें भटकता फिरा इस प्रवासमें उसके एक तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम उसने "जलालुद्दीन अकबर" रखा। कुछ समयके पश्चात् हुमायूँ ने युद्ध करके दिल्लीका राज्य फिरसे ले लिया।

उसकी मृत्युके पीछे अकबर राज-गद्दी पर बैठा, परन्तु इसकी बाल्यावस्था होनेके कारण कुछ वर्षों तक तो राज्यमें अशान्ति ही रही। क्योंकि उसके विश्वस्त पुरुष बैरम खां के हाथमें ही राज्य व्यवस्थाकी सारी बागडोर थी। वह बडा क्रूर और अन्यायी था, इससे प्रजाको सुख मिलना तो दूर ही रहा, स्वयं अकबर ही के विरुद्ध उसने षड्यंत्रकी रचना की थी, परन्तु अकबरको मालुम हो जाने से उसने अपने सेनापति मुनीम खाँ को युद्धके लिये पंजाब भेजकर सन् १५६० ई० में बैरम खाँ को कैद करवाया।

अब दिल्लीका निष्कण्टक राज्य अकबरके हाथ आ गया। वह लगभग बारह वर्षों तक युद्ध करके अधिकांश भारतका स्वामी होकर सुखपूर्वक राज्य करने लगा। शताब्दियोंके कष्टसे ऊबी हुई भारत-जनताको इस समय कुछ शान्ति मिली।

भारतकी मध्यकालीन राजनैतिक परिस्थितिके विषयमें ऊपर संक्षिप्त प्रकाश डाला गया है। राजनैतिक और सामाजिक विषयमें परस्पर घनिष्टता होनेके कारणसे उस समयकी सामाजिक परिस्थिति भी अति शोचनीय और बिकट हो गयी थी। अपने पूर्वजोंके गौरवकी रक्षा करना तो दूर रहा, किन्तु अपना जीवन-निर्वाह भी करना आर्य्य प्रजाके लिये दुष्वार हो गया था। साहित्य रचनादिका कार्य तो मन्द गतिसे होता ही रहा, लेकिन आचार-विचारोंमें वह प्राचीन पवित्रता न रह सकी। अपने-अपने धन, कुटुम्ब और धर्मकी रक्षामें ही जब वे समर्थ न हो सके, तब पारस्परिक प्रेम, संगठन, शिक्षादि आवश्यकीय बातोंका ह्रास होना

स्वाभाविक ही था। बाल-विवाह, पर्देकी प्रथा आदि कतिपय घातक कुरीतियाँ भी इसी समयमें प्रचलित हुई थीं, जिनका स्रोत अद्यावधि अविच्छिन्न गतिसे चलता आ रहा है।

इस संकटावस्थामें वास्तविक धार्मिकता मुरझा गयी थी। ऊपरोपरि कष्टोंको सहन करते समय आध्यात्मिक-तत्व-चिन्ताका तो अवकाश ही कहां था? धार्मिक * फिर्काबन्दियोंने बेहद सत्ता जमा ली थी। शुष्क क्रियाकाण्ड और व्यर्थके आडम्बरोंमें सच्ची धार्मिकता समझी जाने लगी। साधुओंके कठिन आचार-विचारोंमें भी क्रमशः शिथिलताने प्रवेशकर अपना अड्डा जमा लिया था।

अवनतिके पश्चात् उन्नतिका होना, यह सहज स्वाभाविक नियम है; इसी अटल नियमके अनुसार समय-समयपर विकृत-परिस्थितिको सुधारनेके लिये महापुरुषोंका जन्म हुआ करता है। आवश्यकतानुसार उस समय भी कई महापुरुष अवतीर्ण हुए, जिनमें प्रातःस्मरणीय, पूज्यपाद, महोपकारी असाधारण प्रतिभासम्पन्न हमारे चरित्र-नायक स्वनामधन्य श्री जिनचन्द्रसूरिजी महाराजका एक उल्लेखनीय अग्र-स्थान है।

आर्य्य-प्रजाके सुखके हेतु ही आपका मङ्गलमय जन्म हुआ था। आपने मात्र नौ वर्षकी अवस्थामें वैराग्यवासित होकर, भागवती-

---

* श्रीयुक्त मोहनलालजी देसाई बी० ए० एल-एल० बी० अपने 'जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास' में इस प्रकार लिखते हैं:—

एकंदरे दरेक दर्शन मां—सम्प्रदाय मां भांग तोड़—भिन्नता-विच्छिन्नता थएल्छे। मुसलमानी काल हतो, लोकमां अनेक जात ना खल्भलाट बधु-बधु थया करता, राजस्थिति, व्यापार, रहणी करणी विगेरे बदलाया।'

दीक्षा ग्रहण की ; सतरह वर्षकी अवस्थामें गच्छनायक आचार्य-पद प्राप्तकर शीघ्र ही क्रिया-उद्धार करके दुष्कर चरित्रपालकोंमे अग्रणोय हुए। सूरीश्वरने अपने अमित प्रभावसे खरतर गच्छके साधुओंकी शिथिलताको दूर हटाकर दूसरोंके लिये आदर्श-मार्ग प्रकाशित किया।

जैन शासनकी प्रभावनाके हेतु सम्राट अकबरके विनीत-आमन्त्रणसे सूरि महाराज लाहौर पधारे, वहा सम्राट्पर अपने सदुपदेशोंसे अलौकिक प्रभाव डालकर समस्त भारतीय प्रजाको सुखी बनाया। सम्राट्के द्वारा अमारि फरमान प्रकाशित कराकर हिंसा-प्रधान यवन-राजमें भी अहिंसा धर्मका अकथनीय प्रचार करके मूक प्राणियोंका हितसाधन किया, बिचारे जलचर और स्थलचर पशु भी निर्भय होकर सूरि महाराजका अन्तरङ्ग भावोंसे यशोगान करने लगे।

आपने अपने लोकोत्तर प्रभावके कारण उस बिगड़े हुए समयमें युगान्तर-सा उपस्थित कर दिया ; इसीसे आपके सद्गुणोंपर मुग्ध होकर सम्राट् अकबरने आपको *"युग-प्रधान"* पदसे अलंकृत किया। जैन तीर्थोंकी रक्षाके निमित्त सम्राट्से फरमानपत्र प्रकाशित करवाकर जैन-शासनकी अनुपम सेवा की। आपके जीवनकी उल्लेखनीय घटना एक यह भी है कि सं०१६६६ मे सम्राट् जहांगीरने जब साधु विहार-प्रतिबन्धक एक फरमान जारी किया, तब आप ही ने आगरे पधारकर उस घातक फरमानको रद करवाके जैन शासनकी अभूतपूर्व प्रभावना की थी। पाठकोंको इन सब बातोंका परिचय आपकी इस जीवनोसे भली भांति मिल जायगा।

दूसरा प्रकरण

×सूरि-परम्परा

भगवान महावीरकी अविच्छिन्न परम्परामें प्रभावक आचार्य श्री उद्योतन सूरिजी हुए। कहा जाता है कि एक समय उत्तम मुहूर्त देखकर आपने अपने पासमें रहे हुए चौरासी शिष्योंको एक ही समयमें आचार्य पद दिया। उन चौरासी आचार्योंसे चौरासी गच्छोंकी स्थापना हुई। सूरिजीके विनयी शिष्य श्री वर्द्धमान सूरिजी थे। उन्होंने सं० १०५५ में

× इस प्रकरणमें सूरि-परम्परा बहुत ही संक्षिप्त लिखी गयी है क्योंकि इसका हेतु केवल चरित्र-नायककी गुरुपरम्परा बतलानेका ही है। अतः इस प्रकरणमें उल्लिखित आचार्योंका विशेष परिचय "खरतरगच्छपट्टावली संग्रह", से कर लेना चाहिये। श्री वर्द्धमानसूरिजीसे श्रीजिनदत्तसूरिजी पर्य्यंतका सविशेष वर्णन 'गणधरसार्द्ध-शतक बृहद्वृत्ति' में है, इसी ग्रंथसे उद्धृत श्री जिन वल्लभ सूरिजी और श्री जिनदत्त सूरिजीका जीवनचरित्र अपभ्रंश काव्यत्रयी में विशेष ज्ञातव्यके साथ प्रकाशित हो चुका है। श्री जिनदत्त सूरिजीके पश्चात् श्री जिनचन्द्र सूरिजीसे जिनपद्म सूरिजी तकका प्रामाणिक विस्तृत जीवन हमें उपलब्ध पत्र ८६ की पट्टावलीमें है। उस ग्रन्थसे सार

उपदेशपद टीका बनाई और गिरिराज आबूपर मन्त्रीश्वर विमल शाहके कराये हुए भव्य मन्दिरोंकी स० १०८८ मे प्रतिष्ठा की। आपके जिनेश्वर सूरिजी और बुद्धिसागर सूरिजी नामक दो विद्वान शिष्य थे। एक समय आप अपने शिष्य-मण्डलके साथ अणहिल्लपुर पत्तनमे पधारे। वहा * चैत्य-वासियोका विशेष प्राबल्य

मात्र परिचय हमारे तरफसे प्रकाशित 'ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह' में देखना चाहिये। श्री जिन भद्रसूरिजीका विशेष परिचय 'विज्ञप्ति-त्रिवेणी' और 'जेसलमेर-भाण्डागारीय-ग्रन्थानां-सूचि' में प्रकाशित हो चुका है। नवाङ्गीवृत्ति कारक श्री अभयदेव सूरिजीका जीवन-चरित्र प्रभावक चरित्रमें भी पठनीय है। भाषाग्रंथोंमें श्री जिनदत्त सूरि जीवन-चरित्रके दो भाग और 'गणधरसार्द्धशतक भाषान्तर' रत्नसागर भाग दूसरा, 'जैन-गूर्जर-कविओ भाग दूसरा आदि ग्रन्थ भी खरतर गच्छके आचार्योंके चरित्र जाननेमें सहायक है।

इस प्रकरणमें उल्लिखित आचार्योंके 'पदस्थापना' और स्वर्गवास-सवत् आदि कई बातोंमें पाठान्तर पाये जाते है, लेकिन हमने ऐतिहासिक दृष्टिसे जिसे तथ्य समझा है, उसे ही लिखा है। विशेष उहापोह और उचित सशोधन भविष्यमें खरतर गच्छके विशाल इतिहास सम्पादनके समय करनेकी शुभाकाक्षा है।

भगवान महावीरसे श्री उद्योतनसूरिजी तकके आचार्योंके विषयमें गणधर-सार्द्ध-शतक बृहद् वृत्ति और पट्टावलियोंसे देखना चाहिये। इस परम्पराके आचार्योंके नाम, क्रम और संख्यामें पाठान्तर होनेके कारण हमने नहीं लिखा है। विद्वान लोग इसे विशेष खोज-शोध करके उद्योतन सूरिजी तक की परम्परामें उचित संशोधन करे।

* जिन मन्दिरोंमे ही रहनेवाले, देवद्रव्य उपभोगी, पान खाना आदि साध्वाचारसे विपरीत आचरण करनेवाले थे। इनके विशेष परिचयके लिये देखो संघ पट्टक वृत्ति और सम्बोध सत्तरी प्रकरण।

था, सुविहित साधुओंको वहाँ ठहरनेके लिये स्थान तक नहीं मिलता था। सूरिजी समुदाय सहित राज पुरोहितके यहां ठहरे, किन्तु वहा भी उन्हे न ठहरानेके लिये चैत्यवासियोंने राजाज्ञा प्राप्त की। सूरिजीके पाण्डित्य और सद्गुणोंसे पुरोहितजी मुग्ध हो चुके थे। अतः उन्होंने दुर्लभ राजाको सूरिजीके कठिन साध्वाचार का वर्णन करते हुए उनके गुणोंसे परिचित कराया। नृपवर्य्यने वास्तविक साधुताका निर्णय करनेके लिये चैत्यवासियोंके साथ सूरि महाराजका शास्त्रार्थ कराना निश्चय किया।

सं० १०८० में राजसभामे जिनेश्वर सूरिजीका चैत्यवासियोंके साथ शास्त्रार्थ हुआ। फलतः चैत्यवासियोंकी पराजय हुई, क्योंकि शास्त्रोक्त विधिको पालन करनेमें वे असमर्थ थे, उनका चारित्र जैनागमोंसे विरुद्ध और दूषित था और सत्यकी विजय सब कालमें सुनिश्चित है। इससे महाराज दुर्लभने 'श्रीजिनेश्वर सूरिजीका पक्ष खरा' अर्थात सत्य प्रमाणित किया, तभीसे उनका समुदाय-* खरतर गच्छके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

जिनेश्वर सूरिजी और बुद्धिसागर सूरिजी कठिन चारित्रवान् होनेके साथ साथ प्रकाण्ड विद्वान भी थे। श्रीजिनेश्वरसूरिजीने

* खरतर गच्छकी उत्पत्तिका समय कई लोग सं० १२०४ लिखते हैं, लेकिन सं० ११६८ में रचित पार्श्वनाथ चरित्र (देवभद्रसूरिकृत) की प्रशस्ति (जैसलमेर भण्डारमें ताडपत्रीय ग्रन्थांक २९६)और सं० ११७० की लिखित पट्टावलीमें जिनेश्वर सूरिजीको खरतर विरद मिलनेका स्पष्ट उल्लेख है। इस विषयपर विशेष विचार हम एक स्वतन्त्र निबन्धके रूपमें प्रगट करेंगे।

हरिभद्र सूरिकृत अष्टककी वृत्ति (रचना सं १०८० जालोर) और प्रमाणलक्षण सवृत्ति, कथा-कोष, लीलावती, पंचलिङ्गी प्रकरण, षट् स्थानक प्रकरण आदि ग्रन्थोंको रचना की और बुद्धिसागराचार्यने सं० १०८० में पंच-ग्रन्थी नामक व्याकरण ग्रन्थ बनाया।

जिनेश्वर सूरिजीके पट्टधर श्रीजिनचन्द्रसूरिजी हुए, जिन्होंने "संवेग रंग शाला" "श्रावक विधि" * पंचपरमेष्टि नमस्कार फलकुलक आदि ग्रन्थ बनाए। आपके स्वर्गवासके अनन्तर आपके कनिष्ट गुरु भ्राता श्रीअभयदेवसूरिजी पट्टधर हुए, जिन्होंने नव अंगोंकी वृत्ति (रचना समय ११२०-२८) पंचाशक वृत्ति, उववाई वृत्ति प्रज्ञापना तृतीय पद संग्रहणी, षट्स्थान भाष्य, आराधनाकुलक आगम-अष्टोत्तरी जयतिहुअण वीर स्तव आदि ग्रन्थोंको रचना की और श्रीस्थंभनक पार्श्वनाथ प्रभुकी सातिशय प्रतिमा प्रकट की उनके पट्टधर विद्वत् शिरोमणि श्रीजिनवल्लभ सूरिजी हुए, जिन्हें श्रीअभयदेव सूरिजीकी आज्ञासे देवभद्र सूरिजीने सं ११६७ आषाढ शुक्ल ६ को चित्तौड़में आचार्य पद दिया। बागड देशमें विहार करके आपने १०००० दस हजार अजैनोंको प्रतिबोध देकर जैन धर्मोपासक बनाये। आपने अपने तेजोमय चारित्र-बलसे चित्तौडमें चामुण्डा देवीको प्रतिबोध दिया। एवं पिण्ड-विशुद्धि प्रकरण षड् शीति कर्म-ग्रन्थ, संघ-पट्टक, सूक्ष्मार्थ-विचारसार, पौषध-विधि प्रकरण, धर्मशिक्षा, द्वादश कुलक, प्रश्नोत्तर शतक, प्रतिक्रमणसमा-

* यह कुलक बीकानेरके उपाध्याय जयचन्द्रजीके ज्ञान-भण्डारमें सुरक्षित है।

चारी, अष्टसप्ततिका, शृंगारशतक और स्वप्नाष्टक विचार आदि ग्रन्थों और बहुतसे स्तोत्रोंकी रचना की, जिनसे आपका प्रकाण्ड विद्वान् होना भली भाँति सिद्ध है। धारानगरीके राजा नरवर्म को अपनी लोकोत्तर प्रतिभासे आपने ही रंजित किया था। सं० ११६७ के कार्तिक कृष्णा १२ की रात्रिके चौथे प्रहरमे आपका देह विलय हुवा।

आपके पट्टधर प्रकट-प्रभावी दादा श्रीजिनदत्त सूरिजी हुवे। जिन्होंने अनेक अजैनोको जैन बनाकर जैन शासनकी महती प्रभावना की आपका चरित्र सर्वत्र सुप्रसिद्ध है अत. विशेष यहाँ न लिख कर उनकी जीवनी स्वतत्र पुस्तकमे लिखी जायगी। आपने सन्देह-दोलावली, गणधरसार्धशतक, गणधर सप्तति, कालस्वरूप-कुलक चैत्य-वन्दन-कुलक × अवस्था (?) कुलक, उपदेश रसायन, विंशिका और चर्चरी आदि अनेक ग्रन्थोंकी रचना की थी। आपका स्वर्गवास स० १२११ आषाढ शुक्ला ११ को अजमेरमे हुवा। अपने पट्टपर नरमणि मण्डित भालस्थल श्रीजिनचन्द्र सूरिजीको आपने स्थापित किया था। वे मणिधारीजी नामसे प्रसिद्ध हुवे छोटी उम्रमे ही आप बडे प्रतिभाशाली आचार्य हुवे हैं। आपका स्वर्गवास दिल्लीमे सं० १२२३ मे भादवा बदी १४ को हुवा। श्रीतीर्थ पावापुरीजीके शिला लेख और कई पट्टावलियोंसे ज्ञात होता है कि आप ही ने महतियाण जातिकी स्थापना की थी। इस जातिकी बहुत उन्नति हुई, पूर्वदेशीय पावापुरीजी,

× सम्भवत: यह व्यवस्था कुलक ही होगा, जो श्री जिनचन्द्रसूरिजी कृत जैसलमेर और बीकानेरके भण्डारमें उपलब्ध है।

राजगृह आदि तीर्थोंके मन्दिर इसी भाग्यशाली महतियाण संघ द्वारा बनाये व जीर्णोद्धार कराये गए थे। आपने व्यवस्था कुलक (चतुर्विध संघ शिक्षा) गा० ६६, नामक ग्रन्थकी रचना की थी।

आपका प्रभाव-शाली शुभनाम खरतर गच्छमें सदा अमर रखनेके लिये चतुर्थ पाटपर यही नाम देनेकी प्रथा प्रचलित की गई। श्रीजय-देवाचार्यने आपके स्वर्गवासके अनन्तर श्रीजिनपतिसूरिजीको पट्टपर आचार्य बनाया। विद्वतामें आपकी प्रतिभा बहुत बढ़ी चढी थी। छतीस ३६ शास्त्रार्थोमें आपने विजय प्राप्त की थी। वादियोंको युक्ति व प्रमाण पुरस्सर निरुत्तर करनेमें आप साक्षात "सरस्वती पुत्र" ही थे। आपकी * जीवनी विस्तार पूर्वक आपके शिष्य विद्वद्रत्न श्रीजिनपालोपाध्यायने बनाई है। जिसको पढ़कर आपकी अपूर्व मेधा और पाण्डित्यका परिचय मिलता है। आपनेसंघपट्टक वृत्ति, वादस्थल और समाचारी आदि ग्रन्थोंकी रचना की।

संवत् १२७७ आषाढ़ शुक्ला १० को पाल्हणपुर में आपके स्वर्गवासी होनेके पश्चात् मरोट वास्तव्य धर्मिष्ट भाण्डागारिक नेमिचन्द्र (षष्टिशतक व जिनवल्लभ गीत कर्त्ता) के पुत्र श्रीजिनेश्वर सूरि जी पट्टाधिकारी हुवे। आपने अनेक शिष्योंको दीक्षा दी और

* बीकानेरके श्रीक्षमाकल्याणजी ज्ञानभण्डारमें प्राचीन पट्टावली पत्र ८६ की है, उसी गुर्वावलीमें यह जीवनी है। इसके अतिरिक्त उसमें श्रीजिन-पदम सूरिजी तकका ऐतिहासिक वर्णन है। ऐतिहासिक साहित्यमें इस गुर्वावलीकी समता करने वाला कोई भी ग्रन्थ देखनेमें नहीं आया। इस प्रमाणिक गुर्वावलीको सानुवाद प्रकाशित करनेकी हमारी शुभेच्छा है।

जिनालयोंमें जिन बिम्बोंकी प्रतिष्ठायें की। आपने सं० १३१३ मे पाल्हणपुर में "श्रावक धर्मविधि" नामक ग्रन्थ बनाया। सं० १३३१ आश्विन कृष्णा ६ के दिन आपका स्वर्गवास हुवा।

आपके पट्टपर श्रीजिनप्रबोध सूरिजी हुवे। इन्होंने सं०१३२० में आचार्य पद पानेके पूर्व "संदेह दोलावली" बृहद्वृत्ति बनाई। और सं० १३२८ में कातंत्र व्याकरण पर दुर्ग पद प्रबोध नामक वृत्ति रची इनके पट्टधर श्री जिनचन्द्र सूरि हुवे जिन्होंने कई राजाओंको प्रतिबोध देकर "कलिकाल केवली विरद" प्राप्त किया। और सम्राट् कुतुबुद्दीनको अपने गुणोंसे रञ्जित किया। सं० १३७६ में आपका स्वर्गवास होजाने से श्रीराजेन्द्राचार्यजी ने सं० १३७७ ज्येष्ठ कृष्णा ११ को श्रीजिन कुशल सूरिजीको आपका पट्टधर बनाया। उन्होंने भी सिन्धु और मारवाड़ देशमें विहार करके जैन धर्म की महती प्रभावना की। सं० १३८६ फाल्गुण कृष्णा १५ को देरावरमे आपका स्वर्गवास हुवा, आप दादाजीके नामसे सर्वत्र सुप्रसिद्ध हैं। सं० १३८३ में आपने चैत्यवंदन कुलक वृत्ति भी रची थी। आपकी चरण-पादुकायें हजारों स्थानोंमें बड़े भक्ति भावसे पूजी जाती हैं। आप बड़े चमत्कारी और भक्तों की मनोवाञ्छा पूर्ण करनेमें सुरतरु के समान हैं। आपके समयमें खरतर गच्छ मे ७०० साधु और २४०० साध्वियाँ आपके आज्ञानुवर्ती होनेका उल्लेख धर्मकलश कृत "श्रीजिनकुशलसूरि रास" में मिलता है। आपके पट्टपर षड़ावश्यक-बालावबोध कर्त्ता श्रीतरुणप्रभसूरिने लघुवयस्क श्रीजिनपद्मसूरिजी को सं० १३९० ज्येष्ठ शुक्ला ६ के दिन स्थापित किया। बाल्यावस्था

में ही आपके पुण्य प्रभावसे सरस्वती देवी प्रसन्न हुई, जिससे आपकी "बाल-धवल-कुर्चाल सरस्वती" विरुदसे प्रसिद्धि हुई। आपका स्वर्गवास सं० १४०० के वैसाख शुक्ला १४ के दिन पाटणमें हुवा। आपकी कृतियोंमें "स्थूलिभद्र फाग" उपलब्ध है।

उनके पश्चात् गच्छनायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी हुवे। सं० १४१५ में स्थंभनक तीर्थमें आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पट्टपर श्रीतरुण प्रभाचार्यने जिनोदयसूरिजीको स्थापित किया। इन्होंने अनेक जिनालयोंमें जिन-बिम्बोंकी प्रतिष्ठायें की और कई स्थानोंमें अमारि-उद्घोषणा कराके जैन-शासनकी महती प्रभावना की।

उनके पट्टधर श्रीजिनराज सूरिजी हुवे, जो न्याय-शास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान थे। श्रीस्वर्णप्रभाचार्य, भुवनरत्नाचार्य और *सागरचन्द्राचार्यको आचार्य पद भी आप ही ने दिया था। सं० १४६१ में देवलवाड़ामें आपका स्वर्गवास हुवा। आपके पट्टपर नार-चन्द्र टिप्पन कर्त्ता सागरचन्द्राचार्यने × श्रीजिनवर्द्धन सूरिजीको स्थापन किया जिनपर दैवी प्रकोप हो जानेके कारण संघकी आज्ञासे गच्छस्थिति रक्षणार्थ सं० १४७५ में श्रीजिनभद्र सूरिजीको गच्छनायक बनाया।

---

*इनकी परम्परामें अभी तक यतिवर्य्य सुमेरमलजी और ऋद्धिकरणजी आदि हैं।

×खरतर गच्छकी पिप्पलक शाखाके स्थापक आप ही थे। आपको सं० १४७४ में रचित सप्तपदार्थी वृत्ति और दूसरा ग्रन्थ वाग्भटालङ्कार वृत्ति भी मिलती है।

श्रीजिनभद्रसूरिजी एक प्रतिभाशाली विद्वान व जैन साहित्यकी रक्षा और अभिवृद्धि करनेमें अग्रगण्य आचार्य हुवे हैं। आपने जैसलमेर, जालोर, देवगिरि, नागौर, पाटण, मांडवगढ़, आशापल्ली, कर्णावती, खम्भात आदि स्थानोंपर हजारों प्राचीन ग्रन्थ और हजारों नवीन ग्रन्थ लिखा करके भण्डारोंमें सुरक्षित किये, जिनके लिए केवल जैन समाज ही नहीं किन्तु सारा साहित्य-संसार भी चिरकृतज्ञ रहेगा। आपने जिन-बिम्बोंकी प्रतिष्ठा प्रचुर प्रमाणमें की थी, उनमें से सैकड़ों अब भी विद्यमान हैं।

इनका बनाया हुआ जिनसत्तरीप्रकरण (गा २२०) प्राकृत भाषा का उपलब्ध है। इनकी हस्तलिखित सुन्दर "योग-विधि"की प्रति श्रीपूज्यजी (बीकानेर) के संग्रहमें है। सं० १५०१ में तपारत्न कृत षष्टिशतक-वृत्ति का आप ही ने संशोधन किया था।

श्रीभावप्रभाचार्य और कीर्तिरत्नाचार्य को आपने ही आचार्य पदसे अलंकृत किया था। सं १५१४ मिगसर कृष्ण ६ को कुम्भल-मेरमें आपका स्वर्गवास हुआ।

आपके पट्टपर श्रीकीर्तिरत्नाचार्य * ने श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको स्थापित किया। श्रीधर्मरत्नसूरि, गुणरत्नसूरि आदिको इन्होंने ही

* आचार्य पद प्राप्तिके पूर्व आपका नाम कीर्तिराज उपाध्याय था। सं० १४९५ (?)में आपने "नेमिनाथ महाकाव्य"बनाया। आपकी जीवनीके विषयमें हमारी ओरसे प्रकाशित "ऐतिहासिक-जैन-काव्य-संग्रह" देखें! आपकी परम्परामें परम गीतार्थ वयोवृद्ध आचार्य श्रीजिनकृपाचन्द्र सूरिजी आदि विद्यमान हैं।

आचार्य पद दिया। स० १५३० मे जैसलमेरमे आपका स्वर्गवास हुआ। इन्होने अपने पट्टपर स्वहस्तसे श्रीजिनसमुद्रसूरिजीको स्थापन किया। उन्होने पञ्च-नदी साधन आदि करके खरतर गच्छकी उन्नति की। स० १५३६ मे जैसलमेरके श्रीअष्टापदप्रासादमे प्रतिष्ठा की। स० १५५५ अहमदाबादमे इनका स्वर्गवास हुआ। इनके पश्चात् गच्छनायक श्रीजिनहससूरिजी हुए, जिन्होने सं०१५७३ मे बीकानेर मे "आचाराग दीपिका" बनाई। सिकन्दर लोदी बादशाहको चमत्कृत कर पाचसौ (५००) बन्दीजनोको कारागारसे मुक्त करवाया था। इनका स्वर्गवास सं० १५८२ मे पाटणमे हुआ। अपने पट्टपर इन्होने श्रीजिनमाणिक्यसूरिजीको स्थापित किया। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :—

इनका जन्म सं० १५४९ मे कूकड चोपडा गोत्रीय संघपति राउलदेकी धर्म-पत्नी रयणादेवीकी कुक्षिसे हुआ। सं० १५६० मे दीक्षा ग्रहण करके शास्त्राभ्यास किया। इनकी विद्वत्ता और योग्यताको देखकर गच्छनायक श्रीजिनहससूरिजीने सं०१५८२ मिती माघ शुक्ला ५ को बालाहिक गोत्रीय शाह देवराज कृत नन्दी महोत्सव पूर्वक आचार्य पद देकर अपने पट्टपर स्थापन किया। इन्होंने गूर्जर, पूर्व, सिन्धु-देश और मारवाडमे विहार किया। सं० १५९३ माघ शुक्ला १ गुरुवारको बीकानेरके मन्त्रीश्वर कर्मसिंहके बनवाये हुए श्रीनमिनाथ स्वामीके मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। सिन्धु देशमे शाह धनपति कृत महोत्सवसे पञ्च नदीके पाच पीर आदिको साधन किया।

उस समय गच्छके साधुओंमें शिथिलाचार बढ़ गया था। आपको यह असह्य हुआ। और परिग्रह त्यागकर क्रियोद्धार करनेकी तीव्र उत्कण्ठा आपके हृदयमें जागृत हुई। बीकानेरके मन्त्रीश्वर संग्रामसिंह जी बच्छावतको भी गच्छकी इस परिस्थितिसे महान् असन्तोष था, इसलिये उन्होंने भी सूरि-महाराजको बीकानेर पधारकर गच्छकी सुव्यवस्था करनेके लिये विनती पत्र* भेजा। मन्त्रीश्वरकी इस नम्र-प्रेरणाने सोनेमें सुगन्धका-सा काम किया। श्री जिनमाणिक्य-सूरिजीने भावसे क्रियोद्धार करके यह सोचा कि पहले देरावर जाकर दादा श्री जिनकुशलसूरिजीकी यात्रा करके समस्त परिग्रह

---

* आपके आज्ञानुवर्ती उपाध्याय कनकतिलक जी आदिने सं० १६०६ में क्रिया-उद्धार किया था। परन्तु इससे गच्छके अन्य साधुओंपर प्रभाव न पड़ा। अत: संग्रामसिंह मन्त्रीने सारे गच्छकी स्थिति सुधारनेके लिये ही सूरिजीको विनतीपत्र भेजा था।

श्री कनकतिलकोपाध्यायजीका क्रियोद्धार-नियम-पत्र हमें उपलब्ध हुआ है। जिसका आवश्यकीय अंश इस प्रकार है:—

'संवत् १६०६ वर्षे दीवाली दिने श्री विक्रमनगरे ए सुविहित गच्छ -साधु मार्ग नो स्थिति सूत्र उपरि कीधो, ते समस्त ऋषिश्वरे प्रमाण करवो ॥'

'उपा० कनक तिलक वा० भावहर्षगणि वा० श्रीशुभवर्द्धनगणिइ घइसी साध्वाचार कीधो छै।'

इसके बाद बावन बोलोंका वर्णन है, जिसमें साध्वाचारकी कठिन क्रिया व्यवस्था लिखी है। उन बोलों को अमान्य करे, उसे 'पासत्था' नामसे सम्बोधन किया है। यह पत्र जर्जरित होकर, एवं कई स्थानोंमें फटकर नष्ट हो गया है, इससे यहां सम्पूर्ण नकल न दे सके। यह जीर्ण पत्र मास्हू साल शाह गोपा परमश्रावकके पठनार्थ लिखा गया था और हमारे संग्रहमें है।

त्याग करूंगा और मेरे आज्ञानुयायी साधु-वर्ग को भी शुद्ध साध्वाचार पालन करने को बाध्य करूंगा। प्रकट प्रभावी दादा कुशलसूरि जी मुझे इस कार्यमें सफलता दें। इस हेतुसे देरावर पधारे, वहां गुरु दर्शन कर जेसलमेरको ओर वापिस आते हुए मार्गमें पिपासा-परिसह उत्पन्न हुआ, उस दिन आपके पञ्चमीका उपवास था। किन्तु उस प्रान्तमें जलका बहुत अभाव होनेके कारण वहीं भी जल न मिला। सन्ध्या हो गई, उसके पश्चात् थोड़ा-सा जल मिला। लोगोंने कहा महाराज! इसे ग्रहणकर अपनी पिपासा शान्त करें। उत्तरमें आपने दृढ़ताके साथ कहा—वर्षों तक किये हुए चउविहार व्रतको क्या एक दिनके लिये भङ्ग कर दूं? यह कदापि नहीं हो सकता। आयुष्य घटाने बढ़ानेकी शक्ति तो किसीमें भी नहीं है, जो भावी भाव सर्वज्ञ प्रभुने देखा है, वही होगा।

इस प्रकार शुभ अध्यवसायों द्वारा व्रत भङ्ग न करके स्वय अनशन कर लिया। स १६१२ मिती आषाढ़ शुक्ला ५ को उपवासके दिन गुरु महाराज स्वर्ग पधारे। जिस स्थानमें आपका अग्नि-संस्कार हुआ, वहांपर जैनसङ्घने एक सुन्दर स्तूप* बनवाया था, जिसका अब कुछ पता नहीं चलता।

हमारे चरित्रनायक श्री जिनचन्द्रसूरिजी आप के ही शिष्य-रत्न थे। जिनका यथाज्ञात जीवन चरित्र अगले प्रकरणोंमें लिखा जायगा।

---

* इस स्तूपका उल्लेख पद्मराज कृत 'पंच नदी साधन जिनचन्द्रसूरि गीत" में है सो आगेके प्रकरणमें दिया जायगा। एक पट्टावलीमें आपका स्वर्गवास देरावरसे २६ कोश लिखा है। अत इस स्थानकी खोज शोध करनेकी आवश्यकता है।

तीसरा प्रकरण

सूरि-परिचय

मारवाड़ प्रान्तके जोधपुर राज्यमें खेतसर* नामक एक रमणीय ग्राम है। वहां ओसवाल जातीय रीहड़ गोत्रवाले श्रीवन्तशाह नामक श्रेष्ठि निवास करते थे। उनकी सुशीला धर्म-पत्नीका नाम श्रियादेवी था। आनन्द पूर्वक श्रावकधर्म पालन करते हुये, श्रिया देवीकी रत्नगर्भा कुक्षिमें एक पुण्य-

---

* खरतर गच्छकी अधिकांश पट्टावलियोंमें श्रीवन्त शाहका निवास-स्थान तिमरीके पार्श्व-वर्त्ती वड़ली ग्राम लिखा है, किन्तु उनसे भी अधिक प्राचीन, कवि कनकसोमकृत "श्रीजिनचन्द्रसूरि गीत," जो कि सं० १६२८ में कविके द्वारा लिखित उपलब्ध है ; उसमें इस प्रकार लिखा है—

"मारवाडि देश उदार, जिहां धरमको विस्तार, तिहां खेतसर मझारि।
ओस वंश कउ सिणगार, सिरवन्तशाह उदार, तउ सिरिय देवी नार ॥२॥
सुख विलसतां दिन-दिन्न, पुण्यवन्त गरभ उत्पन्न नव मास जिहाँ पड़िपुन्न
जनमियां पुत्र रतन्न, तिहां खरचिया बहु धन्न, सब लोक कहइ धन धन्न॥३

इसमें खेतसर नाम स्पष्ट लिखा है। प्राचीन होनेसे हमने भी खेतसर का ही उल्लेख किया है।

वान् जीव उत्तम गतिसे च्यवन करके अवतीर्ण हुआ। गर्भकाल व्यतीत होनेपर सम्वत् १५६५ के मिती *चैत्र कृष्णा १२ के दिन शुभ लग्नमे कामदेवके सदृश रूप-लावण्य वाला, सूर्यके समान तेजस्वी, शुभ लक्षणयुक्त एक पुत्ररत्न जन्मा। इस शुभ अवसरके उपलक्षमें श्रेष्ठिने बहुतसा द्रव्य व्यय करके आनन्द उत्सव मनाया। दसवें दिन उस बालकका नाम "सुलतान कुमार"† रखा गया। ये 'सुलतान कुमार" दिन पर दिन शुक्ल पक्षके चन्द्रमाकी भांति बढ़ने लगे। माता-पिताने इन्हे बाल्यकाल ही मे सकल कलाओका अभ्यास कराके निपुण बनाया।

वि० स० १६०४× मे खरतर-गच्छनायक श्रीजिनमाणिक्य सूरिजी महाराज अपने शिष्य समुदायके साथ वहा पधारे। उनके पधारनेसे खेतसरमे धर्मकी अच्छी जागृति हुई। वहाके श्रावक दत्त-चित्त होकर धर्मकार्यमे प्रवृत्त हुए। उनका उपदेश वचनामृत श्रवण कर "सुलतान-कुमार"के निर्मल चित्तमे वैराग्य भावना जागृत हुई। वे ससारके सुखोकी असारताको जानने लगे और उन्होने सच्चे सुखको देनेवाले चारित्र धर्मका पालन करनेके लिये दीक्षा लेनेका दृढ निश्चय कर लिया।

* विहार पत्र न० २ में मिती वैसाख शुक्ला १२ लिखा है।

† नाम थापना सुलतान, नित नित चढतइ वान, जगमें अमली मान।
(स० १६२८ लि० कनकसोम कृत जिनचन्द्रसूरिगीत)

× विहार-पत्र नं० २ में सं० १६०२ लिखा है, किन्तु रत्ननिधान कृत गीत, युगप्रधाननिर्वाण रास आदिमे सर्वत्र ही स० १६०४ लिखा है, अत यही ठीक है। सं० १६०२ लेखककी भूलसे ही लिखा गया ज्ञात होता है।

अब सुलतान कुमार माताके पास आकर दीक्षा लेनेकी आज्ञा मांगने लगे। उन्होंने निवेदन किया "माताजी ! यह संसार असार है। समस्त पौद्गलिक सुख क्षणभंगुर हैं ; इसलिए सच्चा आत्मिक सुख प्राप्त करनेके लिए मैं श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी महाराजके पास दीक्षा लेकर साधु हूँगा। अतएव आप कृपा कर अनुमति दीजिये !" माताने कहा—"बेटा अभी तुम बालक हो ! यौवनावस्थामें प्रवेश करना है, चारित्रका पालन करना महान् दुर्द्धर्ष है ; बड़े होकर पीछे चारित्र ले लेना," इत्यादि वचनोंसे साधु मार्गकी कठिनता बतलाई और दीक्षा लेनेकी मनाही की, किन्तु वैराग्य वासित हृदयवाले सुलतानकुमार कब माननेवाले थे। उन्होंने युक्तियोंसे माताके कथनोंका उत्तर देकर अन्तमें अनुमति ले ही ली।

सुलतान कुमारने सं० १६०४ मे श्रीजिनमाणिक्य सूरिजी के पास दीक्षा ली उनका दीक्षा-नाम गुरुमहाराज ने सुमतिधीर रखा। उस समय उनकी अवस्था केवल ९ ही वर्ष की थी, किन्तु विलक्षण बुद्धिवाले और गुरुभक्त होनेके कारण वे अल्पकाल ही में ११ अंगादि पढ़कर सकल शास्त्रोंके पारंगत हुवे। शास्त्रवाद व्याख्यान कलादिमें निपुण होकर अपने गुरु श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के साथ देश विदेशमें विचरने लगे।

देराउरसे जेसलमेर आते हुए सं० १६१२ मिती आषाढ शुक्ला पञ्चमी को श्री जिनमाणिक्य सूरिजी का देहान्त हो जानेसे अन्य साधुओंके साथ विहार करके श्री सुमतिधीरजी जेसलमेर पधारे। अन्त समयमें श्री जिनमाणिक्य सूरिजी के साथ २४ शिष्य थे परन्तु

वे संयोगवश किसीको अपने पट्ट पर स्थापित न कर सके थे। जैसलमेर आनेके पश्चात् इस विषयमें परस्पर मतभेद हुआ, अन्तमें समस्त संघ और वहांके राउल श्रीमालदेवजी (राजकाल सं० १६०७ से १६१८ तक) ने वेगड़ गच्छके श्रीपूज्य * श्रीगुणप्रभ सूरिजी की

---

* श्रीगुणप्रभसूरि—खरतर गच्छकी वेगड़ शाखाके श्रीजिनमेरुसूरिके शिष्य थे। इनके विषयमें उक्त शाखाकी पट्टावलीमें निम्नलिखित वर्णन लिखा है :—

तत्पट्टे ६१ वां श्रीगुणप्रभसूरि, तेविग महागोत्रारय थया, सवा करोड़ रुपीया खरची गांगा गुणदत्त राजवीई पद दवणो दियो, याचकाँ नै चूड़ा नै चूनड़ी पहिरायां, पांच सोनैरी पुस्तक, पांच रूपेरी पुस्तक लिखाबी गुराँ ने विहराव्या एकदा जेसलमेर रा राउल हरराजकी राणी हरषम दे तेहनइ पुत्र कोइ नहीं, तिवारैं गुराँ आगैं आवी, दिन ३ दठ झाली बैठी, तिवारैं तीजे दिन गुरे ओथानी दसो (फलो) दोधी, कह्यो, जा पुत्र थास्यै! जिण नाम "भीम" दीजै तिवारैं राणीई उठतां लोभ वशैं बीजो फली तोड़ी लीधी तिवारइ गुरे कह्यो, मांगी लेत तो रूड़ी पण अम्हारी दमी खाली नहीं जायइ पुत्र थास्यै नाम अर्जुन दीजइ, आठ वर्ष जीवस्यइ। हिवइं भी- पहिलो जायो एकदा परणवा गयो तिवारइ परणी पातिस्याह पासइं आव्यो, पातस्या कह्यो राणो नवरोजें मेलिइ! तिवारइ भीमे न मोकली यतः

> "भीम न मूकी भाटिइ, नवरोजें नारी।
> बीजाठाकुर बापड़ा करमूके दारी॥"

एहवो भीम अवतारीक थयो ए प्रथमज अवदात। हिवइं एकदा श्रीजिन-माणिक्य सूरि देराउरनी यात्राइं गया, बाटइ काल प्रापति थया, चेला सायइ वडवीस हुँवा पण पाट थापी सक्या नहीं, तिवारइ चेला पाछा आव्या, वाद करवा लागा, तिवारइ सङ्घ मिली गुणप्रभ सूर पासे आव्यो

सम्मतिसे श्री सुमतिधीरजी को ही आचार्य पद के सर्वथा योग्य समझ कर उन्हें ही इस पद पर स्थापित करना निश्चित किया। राउल श्रीमालदेवजो खरतर गच्छके अनन्य भक्त थे, इसलिए उन्होंने

कहयौ जेहनइ तुम्हे पाट थापस्यौ ते प्रमाण! तिवारइ गुरे लहुड़ौ चेलौ सुल-तान नामि जाति रीहड सेहनइ थाप्यउ, नाम जिनचंदसूरि दीधउ। तिवारइ बडौ चेलौ धननउ नीसर्यौ जाइ, पातिस्याह नइ मिली जेशलमेर ओलखी देखाड़ी, तदा जेशलमेर कागल आयौ तिवारइ रावल सहु सर्व आवी गुरौं नइ कह्यौ। गुरौं कह्यौ "आंबिल तप घर घरि करउ अनइ ए जाप जपउ" "आंबिल अमृत वाणी, धम्नो हुओ धूल धाणी" ते तिमज धूल धाणी हुओ, ए बीजो अवदात। हिवें एकदा श्रीजेसलमेरइ तीन वरसी दुकाल पड्यौ, तिवारै राउल भीमइं गुरु वीनव्या, तिवारइ गुरे तीन उपवास करी वाम पदांगुष्ट धारइ करी कायोत्सर्ग करी २२००) रुपइया रौ दीप धूप होम जाग करायौ, तीजै दिन धरणेन्द्र प्रत्यक्ष थयौ, वर मांगि! कह्यौ मेह कीजइ तिवारइ धरणेन्द्र कहै सवा पुहर दिन चढतै मेह आविस्यइ काइ निरखी राखिजो पारणौ करीजौ, गुरु कह्यौ काछली भरियै गढिसर भरियै ए सकेत छै। इम कही देवता विसरज्यौ हिवइ प्रमाते पारणौ कीधो, सवा पुहर दिन चढते वादलां उपड्या गाज बीज घटा करि मूसलधार बरसवा लागौ गुरे चेलो १ अने १ श्रावक हाथे काछली देइ बैसाड्या इम आधी काछली थइ, काछली नांखि पाछर उतरया हैवति खमि न सकै'गढीसर'दौढ वरस रो पाणी आयो, तिवारइ रावल भीम गुरां नेतेडी पटोलो पन्च शब्दौ पचोल दीधौ कह्यौ जे वेगडां विना पटोली करणी बीजो कोइ करण न पावै पन्च शब्दां बजावण न पावइ इम मान महत्व दीधउ एहवा प्रभाविक सं० १५८९ पाटपतियया सं० १६९९ स्वर्ग हुयां।"

स्वय बडे समारोहके साथ नदी महोत्सव कराने * श्री सुमतिधीरजी को स० १६१२ भादवा शुक्ला ६ गुरुवारके दिन आचार्य पद दिलाया। वेगड़ गच्छके आचार्य श्री गुणप्रभ सूरिजी ने इन्हे सूरि मन्त्र दिया। श्री जिनहंससूरिजी के विद्वान शिष्य महोपाध्याय श्री पुण्यसागरजी ने सूरि पदके योग, तप आदि कराये इसका उल्लेख एक प्राचीन पत्र मे है —

स्वस्ति श्री ॥ श्री पूज्य जी नउ कागल १ हिवणाइज आव्यउ कागल १ श्रीसघ भणी आव्यउ। वाच्या, समाचार जाण्या। तत्र लिख्या जे पद स्थापना विधि लिखी मूकीज्यो। तप विगरि ॥ श्री पूज्य श्री जिनचन्द्रसूरि भणी भाद्रवा माहे जेसलमेरु रइ धणी सूरि मन्त्र दिवराव्यउ। पछइ तप उपाध्याय श्री पुण्यसागरजी पासे वह्या ए वात बडॉ पासे साभली छइ ॥ पर हिवणा तत्र देश मॉहे रहता भला नहीं छइ। हिवणा इज। राजनगर थी राजा पासइ ब्राह्मण १ सावलदास रउ मूकिउ लहणा लेवा भणी आयोछइ तियइ कहिउ। सावलदासइ अहम्मदाबाद रा भट्टारिकिया श्रावक तेडि नइ कह्यो। गच्छ मेलो करउ सु गच्छ मेलउ करिस्यइ। आ वात थे पण साभलि हुस्यइ। अत्र लिखो नहीं सु किम। इस्या वाता भलया नहीं तुरत विनती करिस्यइ। चउमास उतरो पछइ जोरावरी करी तुह्या नइ

* स० १६२८ लिखित "कनकसोम" कृत गीतमें लिखा है—

"सोलहसइ सवत बार, जिन माणिक्यसूरि पद धार, जिन सूरिमन्त्र उच्चार।

हीरकलशकृत गहूँलीमें भी —

"भादवा सुदि नवमी दिनइ, जसलमेर मझारु हे
संघ सयल गुरु आइसइ, थापइ नाम अपारु हे ॥३॥"

राव्या तउ कुण आडो आवस्यइ। ते भई आ पिण तत्र आवी विरूप कीधउ तउ किम थास्यइ। विचार पहिलउ कीजइ तउ भलां छइ। मारवाड़ि माँहें। कोई एक श्रावक पद ठवणा कराविवा वालउ मिलाइज करिस्यइ। चउमास माहे नहीं वोलइ। चउमास उतरी तुरत विरूप करिस्यइ। थांरा भाग्य छइ भला थास्यइ। परं अम्हा-' नइ घणा मामला पड्या छइ। म्हे वोहां छां। तथा सूरि मन्त्र कियइ पासि तत्र लेस्यउ। अश्वकीय (?) भट्टारक। आचार्य। इयां पासइ आपां नइ लेनां भलउ नहीं। वीजउ कुण देस्यइ। ते पिण समाचार देज्यो। विधि लिपनां वेला काइ नहीं लागनो॥ विधिप्रपा माँहि विधि वात रूप लिखी छइ॥ डोढ पत्र छइ॥ पं० हर्षसोम योग्यम्। पण्डित होज्यो। जउ जोरावरि मांडइ तउ ठाणा २२ श्री पूज्यां भणी चलाइ देज्यो। पछइ थे चालिज्यो। रखे ढीला थाउं। इनरा सीम आवज्यो। तथा थे लिख्या जे फागुण चौमासा पछी आदेश देस्यां। तत्रार्थे। अत्र आयां पछी जोग्या जोग्य विचारी आदेशरी वात करज्यो पं० भाव प्रमोद भणी तेड़ाविज्यो। ते सर्व रूडी परइ जाणिइ छइ। मइ पिण कागल दीधउ छइ। जाणां छां पारणइ तुहां पासि आवस्यइ। सदा वंदना जाणिज्यो॥ सावचेत रहिज्यो॥ तथा तुहां नइ गच्छ मांहे जियइ यति रउ कागल नथी आव्यउ। जियइ संघ रउ पिण नहीं आयो। ते लिखिज्यो। मारवाड़ि वेगा पधारिज्यो। कागलरा समाचार उत्तर सहु लिखिज्यो। सर्वोपि साधुवर्गोऽनुनम्यः॥ गुजरात रा जती गुजरात माँहिज राखिज्यो। साथि मत आणउ॥ संघाड़ा ७ छै॥

आचार्यपद प्राप्तिके अनन्तर हमारे चरित्र नायक सुमतिधीरजी श्रीजिनचन्द्रसूरि नामसे प्रसिद्ध हुवे। जिसदिन उन्हें आचार्यपद मिला उसी रात्रिको उनके गुरु श्री जिनमाणिक्य सूरिजी ने स्वप्नमें प्रत्यक्ष दर्शन दिया और समवसरणको * पुस्तकमें रहे हुए साम्नाय सूरि मंत्र पत्रकी ओर संकेत करके अदृश्य हो गये। सं० १६१२ का चतुर्मास जैसलमेर हुआ। मंत्री श्री संग्रामसिंह बच्छावत ने सूरिजी को बीकानेर पधारनेके लिये विनती भेजी।

चतुर्मास पूर्ण हो जानेसे सूरिजी जैसलमेरसे विहार करके बीकानेर पधारे। सं० १६१३ का चतुर्मास वहीं किया। बीकानेर का प्राचीन×उपाश्रय शिथिलाचारी यतियोंके द्वारा रोका हुवा देखकर मंत्रीश्वर ने अपनी अश्वशालामें ही सूरिजी का चतुर्मास कराया। वह स्थान आजकल रांघड़ी चोकमें बड़ा उपाश्रयके नामसे प्रसिद्ध है।

सूरि जी गच्छमें फैले हुवे शिथिलाचारको देखकर सहम गये। जिस आत्म-सिद्धिके उद्देश्यसे चारित्र धर्मका वेष ग्रहण किया गया, उस आदर्शको यथावत् न पालना यह लोक-वञ्चनाके साथ-साथ आत्म-वञ्चना भी है। गच्छका सुधार करनेके लिये गच्छनायकको क्रिया उद्धार करना अनिवार्य है। इत्यादि विचार करते हुवे उनमें

---

* देखो क्षमाकल्याणजी कृत खरतर गच्छ पट्टावली आदि।

× यह उपाश्रय, बाजारमें श्री चिन्तामणिजीके मन्दिरके पास था, जहां आजकल मथेरण लोग निवास करते हैं। कहा जाता है कि (१) चिन्तामणिजीके मन्दिर (२) उपाश्रय और (३) बीकानेरके पुराने किलेकी नींव एक साथ डाली गयी थी।

आत्मबल और चारित्रकी अमोघ शक्तियोंका उल्लास होने लगा। अन्त में उनके हृदयमें क्रियोद्धार करनेकी प्रबल भावना जागृत हुई, उन्होंने सोचा त्यागके बिना सफलता नहीं है। शुद्ध चरित्र पालन करनेसे ही इष्ट ध्येयकी सिद्धि हो सकती है। परिग्रह धारी रहनेवाला व्यक्ति कभी स्वतंत्र सत्योपदेश नहीं दे सकता। और न जनता पर प्रभाव ही जमा सकता है, उसे सदैव स्वार्थ-वश दबना पड़ता है। अतएव मुझे समस्त प्रकारसे सुख और कल्याणका दायक क्रियोद्धार करना ही श्रेय है। इत्यादि विचार करके सं० १६१४*मिती चैत्र(कृष्णा)७ को क्रियोद्धार किया। इस शुभ अवसर पर मंत्रीश्वर श्रीसंग्रामसिंह बच्छावत ने बहुतसा द्रव्य व्यय करके उत्सव किया। उस समय बीकानेरमें ३०० गृही-यति † थे, जिनमें से १६ शिष्यों ने सर्वथा परिग्रह त्यागकर सूरिजी के पास पच महाव्रत धारण किये, बाकी सब मथेरण × गृहस्थ मथे (मस्तकपर) अग (पगड़ी धारण की) अर्थात चारित्र पालनेमें असमर्थ=मथेरण हुवे। वे अबतक लेखक और चित्रकारका काम करते हैं, किन्तु खेद है उनमेंसे कई लोग जैन धर्म छोड़कर विधर्मी भी हो गए हैं। सं० १६१४ का चतुर्मास सूरिजी ने बीकानेरमें ही किया; उस समय गच्छकी सुव्यवस्था और साधुओंको उत्कृष्ट-चारित्र पालनेके लिये कई कठोर नियम बनाये उनका अवलोकन करनेसे तत्कालीन साधुओंका चारित्र कितना उत्कृष्ट था यह भलीभांति ज्ञात हो जाता है। *

* खरतरगच्छ पट्टावली नं० १ में क्रियोद्धारका सं० १६१३ लिखते हैं, संभव है कि कर्त्ताने गुजराती पट्टावलीका अनुकरण किया हो, विहारपत्रमें तो सं० १६१४ लिखा है।

† ऐसा श्री जिन कृपाचन्द्र सूरिजी महाराजका कथन है।

× ये लोग अपनेको मथेन या महात्मा लिखते हैं

चतुर्मास पूर्ण हो जानेसे वहाँ से विहार करके आप महेवा पधारे। सं० १६१५ का चतुर्मास वहीं किया। विहार पत्र नं० २ में "तिहां छम्मासी तप" लिखा है, संभव है कि सूरि महाराज या और किसीने छम्मासी तप किया हो। सं० १६१६ का चतुर्मास जैसलमेरमें किया। विहार पत्र नं० २ में "बीदा०" लिखा है, इसका आशय हमारी समझमें नहीं आता। चतुर्मास पूर्ण हो जाने पर वहासे विहार करके आप गुजरात देशमें पधारे।

सं० १६१६ में माघ शुक्ला ११ को बीकानेरसे निकले हुवे यात्री-संघने महातीर्थ श्रीशत्रुञ्जयकी यात्रा करके वापस लौटते हुवे पाटण में श्री जिनचन्द्र सूरिजी महाराजके पुनीत दर्शन किये थे। जिसका उल्लेख कविगुणरंगकृत "चैत्य-परिपाटी स्तवन" में इस प्रकार है:--

"वडली नयर मझारि, दुइ चेइ नम्या पेरवउ पाटण सिर तिलउ ए ॥२३॥ तिहि जिणिवर ना वृन्द, देहरासर पुनि, चर्च्या चित्त चोसइ करी ए। तिहां श्रीजिन चन्द्रसूरि, विहरन्ता गुरु वंद्या मनह उच्छव धरी ए ॥"

सं० १६१७ का चतुर्मास सूरि-महाराजने पाटणमें किया, इस चतुर्मास में एक महत्वकी घटना हुई, जिसका वर्णन अगले प्रकरणमें किया जायगा।

चौथा प्रकरण

पाटणमें चर्चा-जय

पाटण नगर गुजरात प्रान्तकी प्राचीन राजधानी है। इस नगरको बसानेका श्रेय नरपति वनराज चावड़ाको है। गुजरातके इतिहासमें इस नगरका बहुत ऊंचा स्थान है। धर्मिष्ट महाराज दुर्लभराजके समक्ष श्रीजिनेश्वर-सूरिजी ने चैत्य-वासियोंको शास्त्रार्थमें जीत कर "खरतर" विरुद भी इसी नगरमें प्राप्त किया था, जिसका वर्णन दूसरे प्रकरणमें किया जा चुका है। सम्वत् १६१७ में हमारे चरित्र नायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी महाराज ने पाटणमें चातुर्मास किया। उस समय तप गच्छीय कदाग्रही-शिरोमणि, और उग्र-स्वभावी उ० धर्मसागरजी* ने लोगोंके समक्ष

---

* श्री मोहनलाल द० देसाई B.A.L.L.B. अपने ग्रन्थ "जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहासके, पृ० ५६२ में इस प्रकार लिखते हैं:--"तेओ घणा विद्वान पण अति उग्र स्वभावी अने दृढ़ आग्रही (प्रखर स्वसम्प्रदायी) हता।" धर्मसागरे तपा गच्छ साचो नै बीजा गच्छो खोटा जणावी तेमना

कहा कि नवाङ्गी-वृत्ति कर्त्ता श्रीअभयदेव सूरिजी खरतर गच्छमें नहीं हुए हैं, इस गच्छकी तो उत्पत्ति ही सं० १२०४ मे हुई है।" उन्होंने केवल यह कहा ही नहीं बल्कि खरतर गच्छ वालोंको उत्सूत्र-भाषी सिद्ध करनेके लिये "औष्ट्रिक-मतोत्सूत्र दीपिका" व "तत्त्व-तरङ्गिणी वृत्ति" (कुमति-कंद-कुदाल) आदि खंडनात्मक विषैला-साहित्य बना कर जैन-शासनमें कलहका विष बीज अंकुरित किया।

इससे पहले* किसीने यह बात नहीं सुनी थी कि अभयदेवसूरि जी खरतर गच्छमे नहीं हुए। धर्मसागरजी के इस कुचेष्टा-पूर्ण अभूतपूर्व प्रतिपादनसे सारे जैन-शासनमें भारी हलचल मच गई। चारों तरफसे इसके प्रतिवाद होने लगे, सबके हृदयमें इस विष-वृक्षको

पर घणा प्रहारो उग्र-भाषा मां ग्रन्थोनामे तत्वतरंगिणी, प्रवचन परीक्षा—कुमति मत कुद्दाल रची कर्यां खरतरो साथे पाटण मां सं० १६१७ मां अभयदेव सूरि खरतर गच्छना न हता—एवोप्रबल, वाद कर्यों ते वर्षे तेमने श्वेताम्बर सम्प्रदाय ना जुदा जुदा गच्छना आचार्यो ए उत्सूत्र प्ररूपणा ना कारणे जिन शासन थी बहिष्कृत कर्यां। तपागच्छ ना नायक, विजयदान सूरि ए 'कुमति-मत-कुद्दाल' ने जल-शरण कराव्यो अने जाहिरनामु काढी सात बोलनी आज्ञा काढी। एक बीजा मन घालाने वाद विवादनो अयडा-मण करता अटकाव्या" "धर्म सागरे सूरि श्री ने चतुर्विधि संघ समक्ष मिच्छामि-दुक्कड़ आप्यो, तेमनो माफी मांगी।"

* उस समय तक श्री अभयदेव सूरिजीको "खरतरगच्छीय" ही सब गच्छवाले मानते थे। दूसरोंकी बात ही क्या ? स्वयं तपा-गच्छीय आचार्योंने ही अपने ग्रन्थोंमें श्री अभय देव सूरिजीको स्पष्ट खरतर गच्छीय सम्बोधित कर गुणावदात गाये हैं। यथा:—

उच्छेद करनेकी महत्वाकांक्षा लगी, ताकि भविष्यमें भगवान वीरकी सन्ततिमें परस्पर द्वेष, कलह और असन्तोष न फैले।

हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी को खरतर गच्छका सारा उत्तरदायित्व था, अतः खरतर गच्छके प्रति किये हुए,

---

संवत् १६०३ तपागच्छीय सोमधर्म गणि विरचित उपदेश सत्तरीमें—

पुरा श्री पत्तने राज्यं, कुर्वाणे भीम भूपतौ।
अभूवन् भूतले ख्याताः, श्रीजिनेश्वरसूरयः ॥२॥
सूरयोऽभयदेवाख्यास्तेषां पट्टे दिवं गते।
तेभ्यः प्रतिष्ठामापन्नो गच्छः खरतराभिधः ॥३॥

तपागच्छीय कृत कल्पान्तर्वाच्यमें:—

"नवांगी वृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजी ये स्थम्मणइ सेढो नदी नइ उपकण्ठि श्री पार्श्वनाथ तणी स्तुति करी धरणेन्द्र प्रत्यक्ष कीधउ। शरीर तणउ उत्कृष्ट रोग उपशमाव्यो। तत्शिष्य श्रीजिनवल्लभ सूरि हुवा। चारित्र निर्मल अनेक ग्रंथ तणउ निर्माण कीधउ। इणि अनुक्रमि खरतर पक्षइ सूरिवर अनेक हूया सातिशय।"

तप गच्छके आचार्य श्री विजयदान सुरिजी और श्री हीरविजय सुरि भी श्रीअभयदेवसूरिजीको खरतर गच्छमें हुए मानते थे। और इसके लिए लिखित सम्मति भी देनेको प्रस्तुत हुए, किन्तु पीछे से धर्मसागरके कपट-प्रपञ्चमें आकर उन्होंने खरतर गच्छवालोंको लिखित सम्मति देना अस्वीकार कर दिया। इस आशयको धर्मसागरजीके किसी शिष्यने इस प्रकार व्यक्त किया है:—

"हे पूज्य! श्री अभयदेव सूरि कुण गच्छ मध्ये हुआ? विचारइ श्री पूज्यजी आम कीधुं जे प्रघोषइ तो खरतर कहवरावइ छइ, ते सांभली खर-

धर्मसागरके अनुचित आक्षेपोका निराकरण करना उन्हे परमावश्यक जान पडा। क्योंकि ऐसे प्रसङ्गमे मौन रहनेसे भविष्यमें विशेष अहित होना सुनिश्चित था। इसीलिये मिती कार्तिक शुक्ला ४ के

तर बोल्या जे पूज्य! पुतलुं लिखि आपउ। जेम दद नासइ इम कही कागल आप्यउ तिवारइ आचार्य श्रीहीरविजयसूरि नइ श्रीपूज्यजीइ आज्ञा दीधी जे लिखि आपो, तिवारइ श्री आचार्यजी ए कह्युं जे हिवणा तउ व्याख्यान वयसइ छु मध्यान्ह पछी लिखि आपसुं इम कही पाछुया वाल्या पछइ मध्यान्ह पछी वलि सर्व खरतर मिलि आव्या श्री पूज्य श्री आचार्यजी पासे जे अम्हनइ लिखि आपउ एहवइ समइ सं० उदयकरण व० पासदत्त प्रमुख श्रावक पूछवा लागा भगवन्‌जी स्युं लिखि आपो छो? तिवारइ श्री पूज्यजी कहिवा लागा जे पाटण माँहि खरतर अनइ श्री उपाध्याय धर्मसागर गणिनइ माँहो माँहे चरचा अभय देवसूरि सम्बन्धी चरचा थाई छइ अनइ इहा मा खरतर लिख्यु मागइ छइ अनइ प्रघोषइं श्री अभयदेव सूरि खरतर कहवावइ छइ ते लिख्यु मागइ छइ।"

× × × × श्री उपाध्यायजी (धर्मसागर) नौ नफरइ देख आव्यो × × श्री अभय देव सूरि खरतर नथी कहा × × श्रीपूज्य श्रीविजयदान सूरि आचार्य श्रीहीरविजय सूरिए वाच्या पछइ विचार कीधो × × × × खरतर नइ लिखि न आपवु॥

[आत्मानन्द प्रकाश वर्ष १९ अक ३—४ पृ० ८७।८८]

धर्मसागरकी नवीन प्ररूपणाके कारण अब भी कई लोग श्री अभयदेव सूरिजी खरतर गच्छमें नहीं हुए ऐसा मानते हैं उनका नि सार युक्ति यह है कि "श्री अभयदेव सूरिजीने अपने ग्रंथोंमें अपना गच्छ खरतर नहीं

उन आपने पाटणमे स्थित सभो गच्छोंके आचार्य व साधुओंको एकत्र किया। वहा शास्त्रार्थ × के लिये धर्मसागरजी को बुलाया

लिखा"। किन्तु इस युक्तिसे उनका खरतर गच्छमें होना निषेध नहीं हो सकता ! क्योंकि तपागच्छके देवेन्द्र सूरिजी आदिने भी अपने ग्रंथोंमें अपने गच्छका नाम तप गच्छ नहीं लिखकर चित्रवाल-गच्छ लिखा है। क्या तप गच्छवाले इन्हें तपागच्छीय नहीं मानते ? सं० ११६८ में अभयदेव सूरिजीके प्रशिष्य देव भद्र सूरिजीने जिनेश्वर सूरिजीको खरतर विरुद मिला लिखा है। तब श्री जिनेश्वर सूरिजीके शिष्य श्री अभयदेव सूरिजीका खरतर गच्छमें होना स्वतः सिद्ध है।

× संवत सोल सतोतरइ, पाटण नगर मझार।
श्रीगुरु पहुता विहरता, सहु भवियण मन हर्ष अपार ॥ ७ ॥
केइ कुमति कलकिया, बोलइ सूत्र अरथ विपरीत।
निज गुरु भाषित ओलवइ तिहां, कणि श्रीगुरु पाम्यो जीत ॥ ८ ॥
कंकाली मही मूलगो पण्डित तणो धरै अभिमान।
सागर छीलर सम थयो, जिहि उदयो खरतर गुरु भाण ॥ ९ ॥
[विधि-स्थानक चौपइ]

संवत सोल सतोतरइ, पाटण नयर मझार।
मेलि दरशन बहु सम्मत, ग्रन्थनी साखि साधार ॥५॥
पूरव विहर उजवालियउ, साखि दाखइ सहु लोक रे।
तेज खरतर सहगुरु तणउ, ऋषिमति ते थयउ फोक रे ॥६॥
ऋषि मति जे हुतो ककलो, बलतो आल पपाल रे।
पट्ट कीधो खरतर गुरे, जाणइ बाल गोपाल रे ॥७॥
(जिनचन्द्र सूरि गीत गा० ९ से)

पाटण सोल सतोतरइ च्यार असो गच्छ साखि रे।
खरतर विरुद दीपावियउ आगम अक्षर दाखि रे ॥७॥

गया, किन्तु वे नहीं आये, उपाश्रयके द्वार बन्द करके × छिप गये।

मिती कार्तिक शुक्ला ७ शुक्रवार को फिर सभा एकत्र हुई, धर्मसागरजी को बुलाया गया किन्तु 'चोर रा पग कच्चा हुवे" की कहावतके अनुसार वे कब आनेको थे! आखिर एकत्र महानुभावोंके समक्ष श्रीजिनचन्द्र सूरिजी ने यह प्रश्न रखा कि "अभयदेव सूरिजी किस गच्छमें हुवे हैं? आपलोग निर्णय करें। उपस्थित विद्वत् मण्डलीने ४१ प्राचीन ग्रन्थोंके प्रमाणसे यही निश्चय किया कि जिन महान् प्रभावक आचार्यको चौरासी गच्छ वाले पूज्य दृष्टिसे देखते हैं, वे नवाङ्गी वृत्ति कर्त्ता व स्थम्भनक पार्श्वनाथ प्रतिमा प्रकट करने वाले श्री अभयदेव सूरिजी खरतर गच्छमे ही हुए हैं।"

इस निर्णयका एक मत-पत्र लिखा गया, जिसमे समस्त आचार्यों तथा मुनियोंके हस्ताक्षर हुए। मिती कार्तिक शुक्ला १३ को सब गच्छवालों ने मिलकर धर्मसागरजी को असत्य, उत्सूत्र भाषी समझ कर निन्हव प्रमाणित किया, और वे जैन संघसे बहिष्कृत कर दिये गये।

उपरोक्त आशयके मत-पत्र की नकल यहा दी जाती है, जिससे इन बातों का भलीभांति परिचय मिल जायगा।

× पाटण माँहि पधासरउ, पाडा पाखलि जे पोसाल।
पौल देइ पैसी रहउ, जे मुखि लावत आल पपाल ॥१०॥
गच्छ चौरासी मेल्वी, पंच शास्त्र नी साखि उद्दार।
जीत्यउ खरतर राजियउ, एह हु को जाणइ ससार ॥११॥
(विधिस्थानक चौपाई गा० १७ से)

॥ मत-पत्रमिदम् ॥ *

स्वस्ति श्री संवत् १६१७ वर्षे कार्तिक सुदी ७ सप्तमी दिने शुक्रवारे श्री पाटण महानगरे श्री खरतर गच्छ नायक वादि-कंद कुद्दाल भट्टारक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी चउमासी कीधी (रह्या हुंता) तिवारइ ऋषिमती धर्मसागरे कूड़ी चरचा माँडी जउ श्रीअभयदेव सूरि नवाङ्गी-वृत्ति कारक श्री स्थंभना-पार्श्वनाथ प्रकटकर्त्ता, ते खरतर गच्छि न हुवा। एहवी वात सांभली तिवारइ खरतर श्री जिनचन्द्र सूरि, (ए विचारी वात) समस्त दर्शन एकठा कीधा पछइ समस्त दर्शन नइ पूछ्यो जे श्री अभयदेव सूरि नवाङ्गी-वृत्ति-कर्त्ता स्थम्भणइ पार्श्वनाथ प्रकट-कर्त्ता कियइ (किसइ) गच्छइ हुवा ? तिवारइ समस्त दर्शन मिली अनइ घणा ग्रन्थ जोई पछइ (ए वात विचारि नइ) इम कह्या जे श्री अभयदेव सूरि (नवाङ्गी-वृत्तिकारक, स्थम्भणइ पार्श्वनाथ प्रकट-कारक) खरतर गच्छे हुवा। सही। सत्यं समस्त दर्शन घणा ग्रन्थ जोइ नइ सही कीधी। सहीरवार१०८

---

* इसी प्रकार/स्तम्भतीर्थ (खंभात) में भी इसी आशयका एक मत-पत्र लिखा गया था। जिसकी नकल इस प्रकार है :—

स्वस्ति श्री स्थम्भनाधीशं नत्वा श्री स्थम्भ तीर्थ मध्ये समस्त दर्शन लिखितं श्रीअभयदेव सुरि नवांगी-वृत्तिकारक श्री स्थंभणउ पार्श्वप्रगटकारक खरतर गच्छि हुवा। केइ एक एम नथी सद्दहता, राग द्वेष ना वाह्या कुबुद्धि लागा (वाह्या) ते बापड़ा गाढा दुखिया थास्यै (हुस्यै) सही सही १०८

सिद्धान्त नइ मेलि नवाङ्गी वृत्ति नइ मेलि वृद्ध सम्प्रदाय अनुसारइ (नइ मेलि) जेह न मानइ ते घणा कूड़ा पड़े छै।

अत्र साखि भट्टारक कर्म्मसुन्दरसूरि मतं १
,, ,, सिद्धान्तिया वड़गच्छा श्री थिरचन्द्र सूरि मतं २
,, ,, जावड़िया गच्छे श्रीहर्षविनय मतं ३
,, ,, निगमिया तपा गच्छे श्री भ० कल्याणरत्नसूरि मतं ४
,, ,, बृहत् तपा गच्छे श्रीसिद्धसूरि मतं ५
,, ,, विवंदणीक वारेजिया खड़खड़ता तपा गच्छे श्रीपरमाणन्द-
सूरि मतं ६
,, ,, (सिद्धान्तिया) वड़ गच्छा श्रीमहीसागरसूरि मतं ७
,, ,, काछेला पुनमिया गच्छे श्रीउदयरत्नसूरि मतं ८
,, ,, पीपलिया गच्छे विमलचन्द्रसूरि मतं ६

समस्त दर्शन (जैन) बड़सी नवांगीवृत्ति प्रशस्ति जोइ वृद्ध सम्प्रदाय जोइ नइ बीजा पणि विचारकर सही कीधी । जे श्री अभयदेव सूरि खरतर गच्छि हुवा सही सही ।

अत्र साख ओसवाल गच्छे पं० सींहा मतम् १
,, ,, अम्बल गच्छे पं० लक्ष्मीनिधान मतम् २
,, ,, वृद्ध शालीय तपा गच्छनायक श्री सौभाग्यरत्नसूरि मतम् ३
,, ,, बड़ा गच्छे उ० विनयकुशल मतम् ४
,, ,, कोरंटवाल गच्छे पं० पद्मशेखर मतम् ५
,, ,, पूर्णिमा गच्छे पं० रत्नधीर मतम् ६
,, ,, मलभच्छा (तपागच्छे) पं० रत्नसागर मतम् ७
,, ,, मलधार गच्छे क्षमासुन्दर मतम् ८
,, ,, अञ्चलिया पूर्णचन्द्र मतम् ९
,, ,, संडेरा समयरत्न मतम् १०

अत्र साखि त्रांगड़िया पुनमिया गच्छे श्रीविद्याप्रभ सूरि मतं १०
" " ढंढेरिया पुनमिया गच्छे श्रीसंयमसागरसूरि मतं ११
" " कुतबपुरा तपागच्छे श्रीविनयतिलकसूरि मतं १२
" " वोकड़िया गच्छे श्रीदेवानन्द सूरि मतं १३
" " सिद्धान्तिया गच्छे पन्यास प्रमोदहंस मतं १४
" " पाल्हणपुरा गच्छे वा० विनयकीर्त्ति मतं १५
" " पाल्हणपुरी साखा तपा गच्छे वा० रंगनिधान मतं १६

अत्र साख आगमिया गच्छे ऋषि रामा मतम् ११
" " धर्मघोष गच्छे ऋषि रत्नसागर मतम् १२
" " कडुआमती पोमसी मतम् १३

श्री खरतर गच्छ अभयदेव सूरि सं० ११११ श्री स्थम्भणउ पार्श्वनाथ प्रगट कीधउ। सं० ११२० वर्षे नवांगीवृत्ति कीधी। सं० १२०४ रुद्रपल्लीय अभयदेवसूरिजी बीजा हुवा। न मानइ ते अभागीया (उत्सूत्र-भाषी कूड़ा थका धर्मनिगमी संसार मध्ये रूलस्यै सही सही) खोटुं बोली नइ चारित्र गमाड़े छै। तथा केई कदाग्रही इम कहें जे श्री अभयदेवसूरि नवांगी वृत्तिकर्त्ता श्रीस्थम्भणउ पार्श्व प्रकट कारक खरतर गच्छे न हुवा ते महा उत्सूत्रवादी जाणिवा। जिणे कारणे तपागच्छनायक श्रीसोमसुन्दर सूरि नी कीधी उपदेश सत्तरी ते मांहें बारमइ उपदेशि, ते कालना गीतार्थ संवेगी हुवा तिणइ खरतर गच्छी कह्या छइ ते हुण्डी लिखीजइछे (इसके बाद संस्कृतके २१ श्लोक उपरोक्त ग्रंथसे उद्धृत किये हैं, उन्हें यहां अनावश्यक समझकर हमने नहीं लिखा)

इत्यादि वृत्तान्त जाणी करी जे संवेगी गीतार्थ छइ ते समस्त सूधा कहिस्यै। उत्सूत्र थी बीहता थका बीजाइ पूर्वाचार्ये अनेरइ गच्छे हुवा

अत्र साखि अंचल गच्छे पण्डित भावरत्न मतं १७
,, ,, छापरिया पुनमिया गच्छे पण्डित उदयराज मतं १८
,, ,, साधु पुनमिया गच्छे वा० नगामतं १९
,, ,, मलधारा गच्छे पण्डित गुणतिलक मतं २०
,, ,, ओसवाल गच्छे पण्डित रत्नहर्ष मतं २१
,, ,, धवल पर्चीया आचलिया (आगमिया) पण्डित रंगा मतं२२
,, ,, चित्रवाल गच्छे वा० क्षेमा मत २३
,, ,, चिन्तामणियापाड़ा वा० गुण माणिक्य मतं २४
,, ,, आगमिया उ० सुमतिसेखर मतं २५
,, ,, वेगड़ा खरतर पण्डित पद्ममाणिक्य मतं २६
(उ०धर्म मेरु मतं)
,, ,, वृहत्खरतर वा० मुनिरत्न मतं २७
,, ,, चित्रवाल जोगीवाड़इ पं०राजा मतं(मुनि जयराज मतं)२८
,, ,, कोरण्टवाल गच्छे चेला हांसा मतं २९
,, ,, विवन्दणीक खिराडुआ (चेला मोकल) मतं ३०
,, ,, आगमिया मोकल मतं ३१
,, ,, खरतर उपाध्याय जयलाभ मतं ३२

एवं काती सुदि ४ दिने (काती सुदि ७ शुक्रवारे) सर्व दर्शन मिलि (.सर्व सङ्घ समुदाये) मजलस कीधी। धर्मसागर ऋषि-मती तेडाव्यउ पुणि धर्मसागर दर्शन मॉहिन आव्यउ वार तीन मजलस करी

तेही इम कह्या जे श्री अभयदेव सूरि नवांगी-वृत्तिकर्ता स्थम्भना पार्श्वनाथ प्रकट करणहार जयतिहुअण बत्तीसी कारक श्रीखरतरगच्छि हुवा सही सही ॥ सन्देह नहीं ॥

तेडाव्यो पठइ छिपि रह्यो (ते स्याम मुख करिनइ) पण नावइ त्रिवारइ काती सुदि १३ दिने सर्व-दर्शन मिलि नइ चर्चायइ खोटो (कूड़ो, झूठउ) जाणीनइ (सर्वथा) निन्हव थाप्यो। जिन दर्शनि बाहिर कीधउ सही मही १०८ सर्व दर्शन सम्मत श्री अभयदेवसूरि नवाङ्गी वृत्तिकर्ता स्थभणा पार्श्व प्रकट कर्ता ते खरतर गच्छइ हुवा। पत्तनीय समस्त दर्शन विचारी मतं लिखनं ॥*

अथ ग्रन्थ × साक्षि लिख्यते —

१ श्री तपागच्छीय श्री हेमहंससूरि कृत कल्पान्तर वाच्ये।

२ भावड़हरा कृत गुरुपर्व प्रभावक ग्रन्थे।

३ तपागच्छीय कृत आचारप्रदीपे।

४ तपागच्छीय कृत लघुशालीय पट्टावल्याम्।

५ सन्देह दोलावली खरतर ग्रन्थ प्रामाण्य साधकत्वेन।

६ कुमारगिरि स्थित तपा सामग्री साधु पट्टावल्याम्।

७ श्रीजिनवल्लभ सूरि कृत सार्द्ध शतक (डोढसया) कर्मग्रन्थ मध्ये

८ चित्रवाल गच्छीय धनेश्वरसूरि कृता वृत्ति परम्परा साधकत्वेन

९ तपा कल्याणरत्नसूरि कृत चरित्र टिप्पनक द्वये।

(कल्याणरत्नसूरि प्रबन्ध ग्रन्थ)

---

* महोपाध्याय श्रीजयसोमजी कृत "प्रश्नोत्तर-विचारसार" और महोपाध्याय श्रीसमयसुन्दरजी कृत "समाचारी शतक" से यहां प्रकाशित किया गया है। इस मत-पत्रसे उस समयके गच्छ और आचार्योंके विषयमें अच्छा ज्ञातव्य मिलता है।

× इन ग्रन्थोंमेंसे अभी कई ग्रन्थ अनुपलब्ध हैं। उनकी खोज-शोधकी पूर्ण आवश्यकता है।

१० छापरिया पुनमिया पट्टावल्याम्।

११ साधुपुनमिया पट्टावल्याम्।

१२ गुरु पर्वावली ग्रन्थे।

१३ प्रभावक चरित्र १५ (१३) सर्गे श्लोक ५५ थी ६५ पर्यन्त श्रीअभयदेवसूरि चरित्रे।

१४ पल्लीवाल गच्छीय भ० आमदेवसूरिकृत प्रभावक चरित्रे (गद्यमये)।

१५ पीपलिया उदयरत्नसूरि प्रारम्भेण जीवानुशासन वृत्तिः।

१६ तथा श्रीसोमसुन्दरसूरि राज्ये कृतोपदेश-सत्तरी ग्रन्थे।

किम्बहुना ४१ ग्रन्थ मध्ये हुण्डी, खरतर गच्छीय श्रीअभयदेव सूरि नवाङ्गीवृत्ति-कारक स्थंभना पार्श्वनाथ प्रकटकर्त्ता थया (बभूव) मूलगा (लि) खत सर्व दर्शनि (जैन रा मता) पाटण रा भण्डार माहि मूक्या छै। ते उपरि ए परत लिखिछइ, जे न मानै ते निन्हव जाणिवा।

उस समयके तप-गच्छके आचार्य श्रीविजयदानसूरिजी भी परस्पर पूर्ववत् गच्छोंमें प्रेम बना रहे, और उत्सूत्र-प्ररूपणाकी वृद्धि न हो इसलिये धर्मसागरजीके बनाये हुए उत्सूत्र-कंद-कुद्दाल और तत्वतरङ्गिणी ग्रन्थोंको जलशरण करवाया। और धर्मसागरजीको अपने गच्छसे बहिष्कृत कर दिया।

इन ग्रन्थोंको अमान्य ठहरानेके लिये सात बोल सर्वत्र प्रसिद्ध कर दिये, जिससे भविष्यमें कोई भी उन ग्रन्थोंको प्रमाणिक न समझे।

ग्रन्थोंको जल शरण करनेका उल्लेख तपगच्छकी पुस्तकोंमें इस प्रकार है :—

"संवत सोल सतातरइ निसुणी अवदात रे।"

× . . × ×

"धर्मसागर ते पण्डित लगइ, कर्यो नवो एक ग्रन्थ रे।
नाम थी कुमति कुदालड़ो, मांडी अभिनवउ पन्थ रे ॥१५५॥
आप वखाण करइ घणा निन्दइ पर तणउ धर्म रे।
एम अनेक विपरीत पणु, ग्रन्थ मांहि घणा मर्म रे ॥१५६॥
मांडी तेणइ तेह परुपणा, सुणी गच्छपतिरायरे।
वीसलनयरि विजयदानसूरि, आवी करइ उपाय रे ॥१५७॥
पाणी आणि कहइ श्री गुरु ग्रन्थ बोलावउ (डुबाओ) एह रे।
नयर बहु सहुनी साखि सुं, ग्रन्थ बोलियउ तेह रे ॥१५८॥
श्रीगुरू आण लही सही सूरचन्द्र पन्यारु रे।
हाथिस्युं ग्रन्थ जलि बोलियउ, राखि परम्परा अंश रे ॥१५९॥
ग्रन्थ बोलि सागर वहनइ (कन्हइ?) लोधुं लिखित तस एक रे।
नवि एह ग्रंथ प्ररूपणा, नवि धरवी धरि टेक रे ॥१६०॥"

(दर्शनविजय कृत विजयतिलकसूरि रास)

सुण्यो सरड न पोतइ सागर, रांक तणी परि रोल्या।
कुमति-कुदाल नइ तत्व तरङ्गिणी, संधि पाणी मांहे बोल्या ॥२४॥

(सिद्धविजय कृत सागर-बावनी सं० १६७३)

उ० धर्मसागरने भी स्वयं उन बोलोंको स्वीकार करके अपनी की हुई उत्सूत्र-प्ररूपणाका "मिच्छामि-दुक्कडम्" देकर अपने ग्रन्थ

सागरके उत्सूत्रका निराकरण करनेके लिये १२ बोल निकाले थे, उसमें भी १० वां बोल यह है:—

"तथा श्रीविजयदानसुरि बहुजन समक्ष जलशरण जे कीधुं उत्सूत्र-कंद-कुद्दाल ग्रन्थ तेह माँहिलुं जे असम्मत अर्थ बीजा कोई ग्रन्थ माँहि आण्यउ हुवइ, तउ ते तिहाँ अर्थ अप्रमाण जाणिवउ।"

और श्रीविजयसेनसूरिने भी १० बोल प्रकट किये थे, जो कि "जैनयुग" में छप चुके हैं।

इस प्रकार पाटणमें उ० धर्मसागरको परास्तकर श्रीजिनचन्द्र-सूरिजीने खरतर गच्छकी महान् सेवा की। इसी चातुर्मासमें आपने "पौषध-विधि प्रकरण" पर एक विशिष्ट वृत्ति रची, जिससे आपकी प्रकाण्ड-विद्वत्ताका भली भांति परिचय मिलता है। उक्त ग्रंथकी प्रशस्तिका आवश्यक अंश यह है:—

आदि:—

> गोऽव्दधलक्ष्य मुपलक्षित मात्र लक्षं,
> जाग्रत् प्रभाव विदितं कनकावदानम्।
> दान्तेन्द्रिय द्विरद वृन्दममंद वाचं,
> पार्श्वप्रभेन मनिशं स्मरतादि देवं ॥ १ ॥

कीय, अमान्य, अप्रमाणिक सिद्ध कर दिया था और स्वयं धर्मसागरने जिसे स्वीकृत कर "मिच्छामि-दुक्कडम्" (दुष्कृतको मिथ्या स्वीकारकर उसकी आलोचना करना) दिया था, आज उन्हींकी परम्परावाले उनग्रन्थोंको क्यों उपादेय समझ प्रकाशित कर कलङ्कित हो रहे हैं !!!

कुमति (उत्सूत्र) कद कुद्दाल को अश्रद्धेय, अमान्य, अप्रमाणिक रूपसे प्रसिद्धि की थी। उस पत्र की नकल मासिक 'जैन युग' वर्ष ५, पृ० ४८३ से लेकर यहां उद्धृत करते हैं —

'स्वस्ति श्री शान्ति जिन प्रणम्य ॥ तिरवाडा नगरत परम गुरु श्रीविजयदानसूरि सेवी उ० श्रीधर्मसागर गणि लिखति समस्त नगर साधु-साध्वी श्रावक श्राविका योग्यम् ॥ आज पछी अमे पाच निन्हव न कहउ पाच †निन्हव कह्या हुइ ते' मिच्छामि दुक्कडम्" ॥ उत्सूत्र-कद-कुद्दाल ग्रन्थ न सद्दहउ, पूर्वइ सद्दह्यउ हुई ते "मिच्छामि-दुक्कडम्" ॥ पट् पर्वी। चतु पर्वी आश्री जिम श्री पूज्य आसि (आदेश) देइ छइ ते प्रमाण ॥ छ ॥ सात बोल जिम भगवत आसि यइ छइ ते प्रमाण ॥ चतुर्विध संघ नी आसातना कीधी हुई ते "मिच्छामि-दुक्कडम्" ॥ आज पछी पाच ना चैत्य वादवा ॥ तिरवाडा माँहि श्री पूज्य परम-गुरु श्रीविजयदानसूरि नइ "मिच्छामि-दुक्कडम्" ॥ दीधउ छइ सघ समक्ष ए बोल आश्री जिणइ खोटो सद्दह्यउ हुवइ ते "मिच्छामि दुक्कडम्" देज्यो ॥ छ ॥"*

विजयदानसूरिजीके पट्टधर श्री हीरविजय सूरिजीने भी धर्म-

---

† पूनमिया, खरतर, आचलिया, साढ पूनमिया और आगमिया ये पाच (देख ऐतिहासिक रास सग्रह भा ४ पृ ७)

* धर्मसागरके अप्रमाणिक ग्रन्थोंका आश्रय लेकर आज भी कई महा-कदाग्रही गच्छोंमें परस्पर वैमनस्य-वृद्धि कर रहे हैं, यह एक परम दु खकी बात है। उस समयके प्रभावक तपागच्छीय आचार्य श्रीविजयदानसूरि, श्रीहीरविजयसूरि, विजयसेनसूरि आदिने जिन ग्रन्थोंको सर्वथा असद्द-

सागरके उत्सूत्रका निराकरण करनेके लिये १२ बोल निकाले थे, उसमे भी १० वां बोल यह है:—

"तथा श्रीविजयदानसूरि बहुजन समक्ष जलशरण जे कीधुं उत्सूत्र-कंद-कुदाल ग्रन्थ तेह माँहिलुं जे असम्मत अर्थ बीजा कोई ग्रन्थ माँहि आण्यउ हुवइ, तउ ते तिहाँ अर्थ अप्रमाण जाणिवउ।"

और श्रीविजयसेनसूरिने भी १० बोल प्रकट किये थे, जो कि "जैनयुग" में छप चुके हैं।

इस प्रकार पाटणमे उ० धर्मसागरको परास्तकर श्रीजिनचन्द्र-सूरिजीने खरतर गच्छकी महान् सेवा की। इसी चातुर्मासमे आपने "पौषध-विधि प्रकरण" पर एक विशिष्ट वृत्ति रची, जिससे आपकी प्रकाण्ड-विद्वत्ताका भली भांति परिचय मिलता है। उक्त ग्रंथकी प्रशस्तिका आवश्यक अंश यह है:—

आदि:—

गोलक्ष्यलक्ष्य मुपलक्षित भाव लक्षं,
जाग्रत् प्रभाव विदितं कनकावदानम्।
दान्तेन्द्रिय द्विरद वृन्दममद वाचं,
वाचंयमेन मनिशं स्मरतादि देव ॥ १ ॥

नीय, अमान्य, अप्रमाणिक सिद्ध कर दिया था और स्वयं धर्मसागरने जिसे स्वीकृत कर "मिच्छामि-दुक्कडम्" (दुष्कृतको मिथ्या स्वीकारकर उसकी आलोचना करना) दिया था, आज उन्हींकी परम्परावाले उनग्रन्थोंको क्यों उपादेय समझ प्रकाशित कर कलङ्कित हो रहे हैं !!!

× × ×

अंत्य प्रशस्तिः—

तेषां गुरूणां शिष्येण, श्रीजिनचन्द्रसूरिणा
श्री पौषध विधेर्वृत्ति श्चक्रे स्वेष्ट प्रसादतः ॥ २४ ॥
संयोज्य वृत्ति चूर्णी समाचारी विलोक्य सद्दृष्ट्या
पुनरपि तत्शास्त्र भावं मत्वातत्संन्द यम्पि ॥ २५ ॥
श्री पुण्यसागर महोपाध्यायैः पाठकोद्दघनराजैः
अपि साधुकीर्ति गणिना, सुशोधिना दीर्घ दृष्टेयम् ॥२६॥
मुनि शशि विद्यादेवी प्रमिते वर्षेऽणहिल्लपुर नगरे ।
आश्विन विजयदशम्यां सुमुहूर्ते पुण्य संयोगेन ॥ २७ ॥
प्रत्यक्षर गणनेन त्रिसहस्री पञ्चशतक संयुक्ता ।
चतुरधिकैः पंचाशत् श्लोकैरस्याः प्रम णमिदम् ॥ २८ ॥

इति पौषध विधि प्रकरण वृत्ति समाप्ता ग्र० ३५५४ पत्र ६७

[तत्कालीन प्रति, बीकानेर बृहद्ज्ञानभण्डारान्तर्गत श्रीजिनहर्षसूरि भण्डार]

पाँचवाँ प्रकरण

"विहार और धर्म-प्रभावना"

खंभात संघके मुख्य श्रावक, वच्छराजका पुत्र कम्मा शाह आदि सूरिजीको चतुर्मास खंभातमे करनेके लिये आमन्त्रित करने आये। उनके विशेष आग्रहसे सूरि-महाराज खंभात पधारे, स्तम्भ-तीर्थकी यात्रा की और संघ-आग्रहसे सं० १६१८ का चातुर्मास खम्भातमे किया, वहाँकी धर्म-प्रभावनाका वर्णन कवि "कुशललाभ" ने अपने "श्रीपूज्य वाहण गीत" में इस प्रकार किया है—

'धर्ममार्ग उपदेशना करता विचइ विहार रे।
आव्याजी नगर त्रम्बावती श्रीसंघ हर्ष अपार रे ॥ ३५ ॥
पूज्य आव्या ते आशा फली, श्री खरतर गच्छ गणधार रे।
श्रीजिनचन्द्र सूरि वांदियइ साथइ साधु परिवार रे ॥३६॥

× × ×

"प्रभु पाटि ए चउवीसमइं श्री पूज्य जिनचन्द्रसूरि।
उद्योतकारी अभिनवउ, उदयउ पुण्य अंकूर ॥ ५५ ॥

शाह (श्रावक) भण्डारी वीरजी, शाह राका नइ गुरु राग।
वर्द्धमान शाह विनयइ घणउ, शाह नागजी अधिक सोभागरे ॥५६॥
शाह वच्छा शाह पदमसी, देवजी नइ जैत शाह।
श्रावक हरसा हीरजी, भाणजी अधिक उच्छाह ॥५७॥
भण्डारी माडण नइ भगत्ति घणी शाह जावड़ नइ घणउ भाव।
शाह मनुवा नइ शाह सहजिया, भंडारी अमियउ अधिक उच्छाह ॥५८
नित मिलइ श्रावक श्राविका, संभलइ पूज्य वखाण।
हियड़उ उलटइ उलसइ एम जीयउ जनम प्रमाण ॥५६॥
आग्रह देखि श्रीसंघ नउ पुज्यजी रह्या चउमास।
धर्म नउ मारग उपदिसइ इम पहुंती मननी आश ॥६०॥
प्रतिमा प्रतिष्ठा थापना दीक्षा दियइ गुरु राज।
इम सफल नर भव तेहनउ जे करइ सुकृत ना काज ॥६१॥"

इस प्रकार खंभातमें जिन बिम्ब-प्रतिष्ठा, शिष्य-दीक्षा आदि बहुतसे धर्मकृत्य हुए। वहांसे ग्रामानुग्राम विहार करते हुए सम्वत् १६१६ मे श्री जिनचन्द्र सूरिजी महाराज "राजनगर" पधारे। वहा एक महाविद्वान् भट्ट अपनी विद्वताके अभिमानमें चूर हुआ फिरता था। उसे मंत्रीश्वर "सारंगधर सत्यवादी" * उपाश्रयमें सूरि महाराजके पास लाया। सूरिजीने उसकी समस्या पूर्ण कर पराजित किया, जिसका वर्णन बीकानेर ज्ञान भण्डारकी एक १८ वीं शताब्दी मे लिखित पट्टावलीमें इस प्रकार है:—

---

*इनका नाम जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर ग्रंथमें आता है, ये खरतर गच्छ के परमभक्त और प्रतिभाशाली पुरुष थे। इनको संघपतिकी पदवी थी।

"वली सं० १६१६ राजनगरइ एक भट्ट महा विद्यावन्त नगर मइ फिरइ, माथे अंकुश पेटइ पटो बांध्यउ, एक चाकर रे माथे वड़ो पाणी रो बीजा रै माथि खड़ रो पूलो एहवउ अहङ्कार धरी नइ फिरइ। तरइ सत्यवादी सारंगधर मन्त्री उपासरइ लेइ आयउ, पहिली जनियां सु वादका, बोल्यां थाग न लाभइ; तरइ समस्या कही:—

* "मक्षिका पादघातेन कम्पितं जगतः त्रयम्"

एह समस्या नउ अर्थ (पूर्ति) भाग्य नइ जोगइ युगप्रधानजी ए कह्यो :—

÷ "समभित्तौ लिखितं चित्रं, वारिणा कुण्ड पूरितम्

मक्षिका पादघातेन, कम्पितं जगतः त्रयम् ॥"

एम कही भट्ट नइ हरायउ (भट्ट) पगे लाग्यउ।

वहांसे विहार करके सूरि महाराज पाटण पधारे, सं० १६१६ का चतुर्मास वहीं किया। सं० १६२० में आपका चातुर्मास बीसल नगर*

---

* "मक्षिकाके पैरों के आघात से तीन जगत कांपने लगा।"

÷ "समान भींत (दिवार) पर तीन जगतको चित्रित करके, उसके नीचे जलसे भरा हुआ कुण्ड-पात्र रखा। उसमें त्रि-जगतके चित्रकी छाया पड़ने लगी, उस पानीके ऊपर मक्षिका के बैठनेसे पानी हिलने लगा। पानी हिलनेके साथ साथ तीन जगत की प्रति-छाया (प्रति बिम्ब) भी हिलने लगी, इससे "मक्षिका के पैरों के आघात से तीन जगत कांपने लगा।

* विहार पत्र नं० २ में बीसलनगरके स्थानपर बीकानेर लिखा है, किन्तु हमें बीसलनगर ही ठीक प्रतीत होता है।

हुआ। वहा से, बीकानेरके मन्त्रीश्वर श्री संग्राम सिंह बच्छावतके आग्रहसे बीकानेर पधारे। सं० १६२१ का चातुर्मास बीकानेरमे किया।

बीकानेरके श्रीवासुपूज्यजीके मन्दिरमे श्री सुपार्श्वनाथजी की पञ्चतीर्थी धातु प्रतिमा सं० १६२२ बैसाख शुक्ला ३ के दिन सूरिजीके कर कमलासे प्रतिष्ठित है जिसके लेखकी नकल इस प्रकार है —

"संवत १६२२ वर्षे बैसाख सुदि ३ सोमवारे उपकेश वंशे। राखेचा गोत्रे शाह आपू तत्पुत्र साह भाडकेन पुत्र सा० नींबा साडू मेघा। हेमराज धनु। श्री सुपार्श्व बिम्बं कारापितम्। खरतर गच्छे श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टाधिप श्री जिनचन्द्र सूरिभि प्रतिष्ठितम्॥ शुभ भवतु॥"

यदि सूरिजीने उपरोक्त प्रतिमाजीकी प्रतिष्ठा बीकानेरमे की हो तब तो यह निस्सन्देह कहा जा सकता है कि सूरिजी अक्षय-तृतीयाके पश्चात् ही बीकानेरसे विहार करके जेसलमेर पधारे। सं० १६२२ का चतुर्मास जैसलमेर किया। विहार पत्र नं० २ मे लिखा है "त्रिचिनागोर हसनकुलीखान जयलाभ पइसारउ" इसका आशय हमारे समझमें पूरा नहा आया किन्तु अनुमान किया जाता है कि सूरिजी बीकानेरसे जेसलमेर जाते या आते समय नागौर पधारे। वहापर "हसनकुली खान"* ने किसी युद्धादिके जयके लाभसे

* "हसन कुली खान" का नाम कर्मचन्द्रमन्त्री वंश प्रबन्ध वृत्तिमें आता है। मन्त्रीश्वर संग्रामसिंहजीने इसके साथ सन्धि की थी। उपरोक्त विहारपत्रके "जयलाभ" का आशय सम्भव है, इसी छलहसे हो?

लाभान्वित होकर सम्मान पूर्वक सूरि-महाराजका नगरमें प्रवेश कराया हो।

सम्वत् १६२२ का चतुर्मास जैसलमेर करके सूरिजी बीकानेर पधारे। सम्वत् १६२३ का चतुर्मास यहीं किया। खेतासर ग्राममें रहनेवाले चोपडा गोत्रीय सा० चापसीकी भार्या चापल देवी× के पुत्र-रत्न मानसिंहको मिती मार्गशीर्ष कृष्णा ५ को दीक्षा दी, उनका दीक्षा नाम "महिमराज"— रखा।

वहांसे विहार करके "नाडोलाइ" पधारे, स० १६२४ का चतुर्मास वहीं हुआ। विहार-पत्र न० २ मे लिखा है "लष्करनउ भय काती सुदी १० निवर्त्यउ" इसका स्पष्टीकरण एक "बीकानेर ज्ञान-भण्डार" की पट्टावलीमें किया हुआ है——मुगल सेना उस नगर के बहुत ही निकट आ गई थी, लूटपाट और मारकाट के भयसे

× उपा० श्री क्षमाकल्याणजीगणि कृत खरतर गच्छ पट्टावलीमें मान सिंहजीकी माताका नाम "चतुरङ्ग दे" लिखा है, किन्तु उ० श्री शिव-निधान और लब्धिकल्लोल आदि कृत प्राचीन गहूलियां और श्री जिनकृपा-चन्द्रसूरि ज्ञान भण्डारस्थ तत्कालीन लिखित 'खरतर गच्छ पट्टावली" में माताका नाम चापल देवी लिखा है। प्राचीन होनेसे यही ठीक प्रतीत होता है।

— ये महिमराजजी (श्रीजिनसिंहसूरि) बड़े प्रभावक और निर्मल चारित्रवान् प्रकाण्ड पण्डित हुए। सम्राट अकबरने इनके गुणोंसे मुग्ध होकर सूरिजीसे इन्हें "आचार्य-पद" दिलाया था। इसके विषयमें यथा-स्थान आगेके प्रकरणमें लिखा जायगा।

व्याकुल होकर वहाके लोग चारो तरफ भागने लगे। संघने मिलकर सूरि-महाराजसे भी निवेदन किया, किन्तु महापुरुष स्वयं निर्भय और दूसरोंके लिये भी अभयकारक हुआ करते हैं। सारा नगर खाली हो गया, परन्तु सूरि महाराज साधारण जनताको भाँति सम्भ्रान्त न होकर उपाश्रयमें ही निश्चल ध्यान लगाके बैठे रहे। उनके ध्यान-बल से मुगल-सेना मार्ग भूल कर अन्यत्र चली गई। सब लोग प्रसन्नता पूर्वक अपने अपने घर आये, सूरिजीके योग बलसे चमत्कृत होकर उनकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे।

उपरोक्त पट्टावलीमे इसका वर्णन इस प्रकार किया है :—

"वलि जियइ नडुलाई नगर माँहि श्रीपूज्य जी हुता, सघ मिली गुरु वीनव्या गुरु जी! मुगल नउ भय साभलियइ छइ। गुरे कह्यो महानुभाव! काइ विशेष नहीं। इम करता मुगल ढूकडा आव्या, तिवारइ सर्वलोक जीव लेइ दसोदिस नाठा (गयउ) पर श्रीपूज्यजी उपासरा माँहि थी हाल्या नहीं ध्यान बइठा, गुणना नइ प्रभावि मुगला नउ कटक मारग थकी चूकउ, बीजी ठामि गयउ। सर्वलोक आप आपणा घरे आव्या सघ मिली उपासरइ आवि देखइ तउ गुरुजी ध्यान करइ छइ। सघ वादी, पूजी स्तवना करिवी माडी, सर्वलोक हर्षित थयउ ठाम ठाम शोभा थई।

वहासे विहार करके सूरिजो बापडाऊ (? बापेउ, बीकानेर से ४४ मील) पधारे। सं० १६२५ का चतुर्मास संघके विनीत आग्रहसे वहीं किया। चातुर्मास पूर्णकर वहासे ग्रामानुग्राम विचरते हुए बीकानेर पधारे। सं० १६२६ का चातुर्मास बीकानेर किया।

सं० १६२७ का चातुर्मास महिम किया, वहांसे साधु-विहार करते हुए मेवात देशमें होकर आगरा पधारे। विहारपत्रों में लिखा है :— "सं० १६२७ महिम—शां० कुं० अ० म० थूंभ। चन्द्र० मू० स्थु० नेमि चैत्य विचि सौरीपुर यात्रा, चन्द्रवाड़ि हथिणाउरि पछइ आव्या।" इससे हस्तिनापुरमें शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरिनाथ और मल्लिनाथजी के स्तूपों की और चन्द्रवाड़में श्री चन्द्रप्रभु भगवानकी यात्रा करना निश्चित है।

आगरेमें बहुतसे धर्मकार्य हुए वहां १ महीनेका मास-कल्प स्थिति करके आप सौरीपुर पधारे। वहांपर श्री नेमिनाथ स्वामीकी यात्रा की, और चन्द्रवाड़ि हस्तिनापुरकी यात्रा करके वापिस आगरे पधारे। वहांसे चातुर्मास करनेके लिये ग्वालेर जाते थे परन्तु आगराके श्रीसंघके विशेष आग्रहसे सं० १६२८ का चतुर्मास वहीं किया। पर्यूषणा पर्व, धर्म ध्यान करते हुए सुख-पूर्वक व्यतीत हो जानेके पश्चात् सूरिजी ने एक पत्र "सांभलि-नगर" के संघको दिया। यह असली मूल पत्र हमारे संग्रहमें है, इसमें उपरोक्त तीर्थ-पर्य्यटन, विहार और धर्म कार्योंका भी थोड़ा वर्णन है। उस पत्रकी नक़ल इस प्रकार है :—

॥६०॥ स्वस्तिश्री शान्ति जिनं प्रणम्यः। श्रीआगरा नगरात्''' श्रीजिनचन्द्र सूरयः पं० आणंदोदय गणि पं० वीरोदय मुनि पं० भक्तिरंग गणि पं० सकलचंद्र गणि पं० नयविलास मुनि पं० हर्ष-विमल पं० कल्याणकमल पं० महिमराज पं० समयराज पं० धर्म-निधान पं० रत्ननिधान श्रीपाल प्रमुख साधु १६ विहितोपास्नयः

श्री माभलि स्थाने श्रीदेव गुरु भक्तिकारक श्री जिनाज्ञा प्रतिपालक सा० मूला० सा० सामीदास सा० पूरू सा० पदू सा० वस्तू सा० गागू नाथू धर्म्मू पूरू टक्कू प्रमुख श्रीसंघ समुदायक सादर धर्मलाभ पर्वक ममादिशति श्रेयोत्र श्रीदेव गुरु प्रसादात्। उपदेशो यथा॥ धम्मो मगल मुक्किठ, अहिंसा सजमो तवो। देवावि त नमसति जस्स धम्म सयामणो ॥१॥ इत्यादि धर्मोपदेश जाणी धर्मोद्यम करता लाभ छइ तथा महिम हुती विहार करी साधु विहार करता मेवात देश माहि थइ नइ अत्र आव्या घणा धर्म ना लाभ थया। पछइ मास कल्प क (री नइ ?) सौरीपुर श्रीनेमिनाथनो यात्रा करी नइ अत्र आ (व्या) पछइ चउमासि उपरि ग्वालेर नइ चालता हुता प (र श्रीस) घनइ आग्रहइ अनेज रह्या। धर्म ध्यान करता करावता श्री पर्यूषणा पर्व आव्यइ सा० श्रीवच्छ सा० लक्ष्मीदासादि सपरिवारइ विधि पूर्वक पुस्तक वचा०या वाचना प्रभावनादि धर्म करणी घणी हुई पोसदृता ९५१ हुया बीजाइ दान शील तप भावनादि धर्म करणी हुई एव जाणी तुहे अनुमोदिवा। आ सामग्री साधु साध्वी विशेषइ चिंता करवी। तथा तुम्हारा कागल आव्या समाचार परीछ्या। तुहे उत्तम सुश्रावक छइ सगली सामग्री आवइ तउ राखेज्यो ज्यु धर्म निर्वहइ एव समस्त सघ माहि धर्मलाभ कहेज्यो। एव परीछे॰ पारणइ पूर्व दिशइ तीर्थ यात्रा भणी विहार (करवाना भा ?) व छइ वली वर्तमान जोगि जाणिस्यइ॥ समस्त श्रावक श्राविका नइ धर्मलाभ कहेजो॥

इस पत्रके अनुसार यदि चतुर्मास पूर्णकर सूरिजी पूर्व देशीय

तीर्थोंकी यात्रा करने गये हों तब तो यथा-संभव सम्मेत शिखरजी, पावापुरीजी, चंपापुरीजी, राजगृह आदि तीर्थोंके दर्शनकर आये होंगे। तत्पश्चात् सं० १६२६ का चातुर्मास रुस्तक (रोहतक, दिल्लीके निकटवर्ती) किया। चातुर्मास पूर्णकर सूरि-महाराज ग्रामानुग्राम विचरते हुए बीकानेर पधारे। यहांके श्री ऋषभदेव भगवानके मन्दिरमें सूरिजीके कर कमलोंसे प्रतिष्ठित श्रीअजितनाथ स्वामीकी धातु-प्रतिमा विद्यमान है; जिसपर निम्नोक्त लेख है :—

"संवत् १६३० वर्षे माह सुदि १० दिने श्री उपकेश वंशे छाजहड़ गोत्रे सा० झठा चा (?) तत्पुत्र सा० अमरसीकेन कारितं श्रीअजितनाथ बिम्बं प्रतिष्ठितं खरतर गच्छे श्रीजिनचन्द्र सूरिभिः।"

फाल्गुन मासमें "नयणा" नामक श्राविकाने सूरिजीसे बारह व्रत ग्रहण किये थे। तब साधुवर्द्धनके शिष्यने बारह व्रत रास बनाया जिसमें लिखा है :—

"खरतर गच्छ रउ राजियउ, जिनचन्द्र सूरि मुनि राय।
तासु पासइ ए विरति लेइ, श्राविका नयणा आय ॥४॥
संवत सोल श्रीसोत्तरइ, फागुण मासि विशाल।
साधुवर्द्धन पसाउलइ, रची विरतबंध रसाल ॥५॥
जिम शशि रवि भू अछइ, धरणीधर सुप्रसिद्ध।
तिमि अविचल होज्यो सही, एह विरत सम्बन्ध ॥६॥

[अन्तिम पत्र, श्रीपूज्यजी के संग्रहमें]

सूरिजीके बीकानेर पधारनेसे बिम्ब-प्रतिष्ठा, व्रत ग्रहण आदि खूब धर्म कार्य होने लगे। लाभ जानकर सूरि-महाराजने सं० १६३१ और १६३२ का चातुर्मास बीकानेर ही किया। वहाँसे विहारकर फलोधी पधारे, वहाके श्रीपार्श्वनाथ प्रभुके प्राचीन भव्य मन्दिर पर द्वेप-वश तपगच्छ वालों ने ताले लगा दिये। सूरि-महाराज प्रभु दर्शनार्थ पधारे, किन्तु मन्दिरपर ताले लगे देखकर उन्होंने हाथका स्पर्श किया तब उनके प्रभावसे विना चावी लगाये ही ताले खुलकर पड़ गये*।

सूरिजी तीर्थ दर्शनकर वहांसे विहार करके जैसलमेर पधारे। सं० १६३३ का चातुर्मास वहा किया, मिती माघ शुक्ला ५ के दिन श्राविका बींझूने सूरिजीसे १२ व्रत ग्रहण किये जिसका वर्णन बीकानेर ज्ञान भण्डार (महिमाभक्ति विभाग पोथी नं० ६३) में गा० ५५ के बने हुए रासमें है :—

"शुभस्थान जेसलमेरु नयरइ, सुकृति करी हित कारणइ।
संवत सोल तेतीस वरसइ, माह सुदि पंचम दिणइ॥
गच्छराय श्रीजिनचन्द्रसूरि गुरु, सइ मुखइ संभासु ए।
श्राविका बींझू सुव्रत पालइ, धरि मनि उल्हासु ए॥४५॥

---

* देखो! क्षमाकल्याणजी कृत खरतर गच्छ पट्टावली और विहार पत्र आदि। एक प्राचीन पट्टावलीमें भी लिखा है:—

फलोधी वीतराग देहरा नउ तालउ विण कूंची हाथ उपरि मूंकी उसेलयउ
(बीकानेर ज्ञान भण्डार, पट्टावली पत्र ७)

इसी वर्षमें मिती फाल्गुन कृष्णा ५ को श्राविका गेलीने सूरिजी से १२ व्रत ग्रहण किये थे। जिसका उल्लेख एक बारह व्रत रासकी प्रशस्ति*में इस प्रकार है :—

"सम्वत सोलसय तेतीसइ, फागन वदि पञ्चमि उल्लासि ।
खरतर गच्छि गरूयउ गुरु राजइ, श्रीजिनचन्द्रसूरि गुरु पासइ ॥६२॥
श्राविका गेली ए व्रत लीधा, कीधा नरभव सफल आज ।
पास पसायइ ए विधि करतां, पामिस शिवनगरी नो राज ॥६३॥
बारह व्रत सूधा पालेवा, एम कहइ परिग्रह-परिमाण ।
लीलविलास सदा सुख पामइ, वाधइ दिन-दिन कलाविनाण ॥६४॥

इति श्री इच्छा परिमाण टिप्पनके सं० १६३३ वर्षे फाल्गुन वदि ५ दिने श्रीमच्छ्री खरतर गच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालङ्कार श्रीजिनचन्द्र सूरि राजानां स्वहस्तेन गेलो सुश्राविकया ग्रहीतम् ॥

(इसकी प्रति आमोदके यति चन्द्रविजयजीके पास है)

---

* यह प्रशस्ति हमने "जैन-गूर्जर-कविओ भा० १" से उद्धृत की है। इस ग्रंथमें यह रास श्रीजिनचन्द्रसूरिजीकी कृतियोंमें नोंध किया है, किन्तु इस प्रशस्तिसे यह सूरिजीकी कृति होनेका कोई प्रमाण नहीं मिलता। यथा-सम्भव अन्य बारह व्रत रासोंकी तरह यह रास भी किसी दूसरे कविने रचा होगा।

इसके अतिरिक्त 'जैन-गूर्जर-कविओं'में (१) द्रौपदी रास, (२) बारह-भावनाधिकार, (३) शीलवती रास, (४) शाम्ब प्रद्युम्न चौपाइ (५) जिन बिम्ब-स्थापन स्तवन भी सूरिजीकी कृतियां लिखी हैं। हमें तो इन कृतियोंका भी सूरिजीकी रचना होनेमें सन्देह है। कृतियोंको देखकर इसका निर्णय करना आवश्यक है।

वहांसे विहार करके सूरिजी देराउर पधारे वहां श्रीजिनकुशल सूरिजीके "स्वर्गस्थान" का दर्शन करके सं० १६३४ का चातुर्मास वहीं किया। इसके पश्चात् सं० १६३५ में जैसलमेर, सं० १६३६ में बीकानेर, सं० १६३७ में सेरूणा (बीकानेरसे २८ मील पूर्व), सं० १६३८ में बीकानेर, सं० १६३६ में जैसलमेर और सं० १६४० आसनीकोटमें क्रमशः चातुर्मास किये। "आसनी कोट" चातुर्मास कर सूरिजी जैसलमेर पधारे वहां मिती माघ शुक्ला ५ के दिन अपने विद्वान शिष्य महिमराजजी को "वाचक" पदसे अलंकृत किया।

जैसलमेरसे विहारकर सूरि महाराज जालोर पधारे सं० १६४१ का चतुर्मास वहीं किया। इस चतुर्मासमें ऋपिमती-तपागच्छवालोंके साथ शास्त्रार्थ हुआ, इस शास्त्रार्थ में सूरिजी की विजय* हुई। वहां से विहार करके पाटण पधारे, सं० १६४२ का चतुर्मास वहां हुआ, वहा भी तप गच्छवालोंके साथ हुए शास्त्रार्थ में सूरिजी विजय-लक्ष्मी× को प्राप्त हुए।

वहांसे विहार करके अहमदाबाद पधारे। सं० १६४३ का चतुर्मास वहां किया। वहां धर्मसागर कृत उत्सूत्र-मय पुस्तक रूपी विष-वृक्षका उच्छेद किया जैसा कि + खरतर गच्छ पट्टावली नं० १ और नं० ३ में लिखा है :—

"पुनः सं० १६४३ वर्षे तत्र धर्मसागर कृत् ग्रन्थोच्छेद कृत"

* देखो विहार पत्र नं० १, २

× देखो विहार पत्र नं० २

+ देखो पूरणचन्द्रजी नाहरकी प्रकाशित "खरतर गच्छ पट्टावली संग्रह"

सूरिजीने सं० १६४४ का चातुर्मास खम्भात किया। वहां श्री स्थम्भन तीर्थ और श्रीजिनकुशलसूरि-स्तूपके दर्शन किये। चातुर्मास पूर्ण हो जानेसे विहार करके अहमदाबाद पधारे। श्री गुणविनय कृत, बीकानेरसे शत्रुञ्जय यात्रार्थ निकले हुए संघके "चैत्य-परिपाटी-स्तवन" से जाना जाता है कि "बीकानेरसे सं० १६४४ के माघ महीनेमें तीर्थाधिराज श्री सिद्धाचलजीके यात्रार्थ सङ्घ निकला, वह विशाल यात्री सङ्घ रास्तेमें आये हुए समस्त तीर्थोंकी यात्रा करता हुआ क्रमशः मैरिसे, लोडण-पार्श्वनाथके तीर्थमें आया।

इधर अहमदाबादसे सङ्घपति योगीनाथ और सोमजीके सङ्घ सहित सूरिजी भी आकर सम्मिलित हुए। उस सङ्घमें चारों दिशाओंके यात्री आये थे, जिनमेंसे—बीकानेर, मण्डोवर, सिन्धु देश, जेसलमेर, सीरोही, जालोर, सोरठ और चापानेरका नाम उल्लेखनीय है। इस विशाल यात्री सङ्घके साथ मिती चैत्र कृष्णा ४ के दिन सूरि-महाराजने महातीर्थ, सिद्धक्षेत्र श्री सिद्धाचलजीकी यात्रा की* ।

---

* "संवत सोलह सइ चिम्मालइ, वरसि सवि सुखकार।
चेतवदी चउथी दिनइ, बुध बलभ बुधवार ॥ १० ॥ मेरी० ॥
संघपति योगी सोमजी, मन धरि हरख तरङ्ग।
गच्छपति श्रीजिनचन्द्र नइ, यात्रा करावी रङ्ग ॥ ११ ॥ मेरी० ॥
सुविहित खरतर संघ नइ, श्री आदि देव प्रसन्न।
वाचनाचारिज इम भणइ, रत्ननिधान वचन्न ॥ १२ ॥ मेरी० ॥
[वा० रत्ननिधान कृत स्तवन]

वहांसे ग्रामानुग्राम विचरते हुए सूरि-महाराज सूरत पधारे। उनके आगमनसे संघमें बहुत प्रसन्नता हुई, सब लोग अधिकाधिक धर्म-ध्यान करने लगे। वर्षाकाल सन्निकट होनेसे सूरिजीने सम्वत् १६४५ का चातुर्मास सूरतमें किया।

सं० १६४६ का अहमदाबाद और सं० १६४७ का चातुर्मास पाटण किया। सं० १६४७ में श्राविका कोडांने आपसे बारह व्रत ग्रहण किये थे, जिसका रास श्री० जयसोमजी कृत (कपड़ेपर लिखी हुई प्रति) हमारे संग्रहमें है। आवश्यक अंश इस प्रकार है :—

"श्रीजिनचन्द्र सूरि श्रीमुखइ, श्राविका कोडां एह।
आदरइ बारह व्रत इसा, शुभ दिवस रे मन हर्ष धरेय ॥१८॥

"हिव अहमदाबाद सरस्म, योगीनाथ शाह सुधम्म।
शत्रुञ्जय भेटण रंगि, तेड्यागुरु वेगि सुचंगि ॥ १९ ॥
मेलि सहु संघ गुरु साथि, परघउ खरचइ निज आथि।
चाल्या भेटण गिरिराज, संघपति सोमजी सिरताज ॥ २० ॥
दोहा—पूरब पश्चिम उत्तरइ, दक्षिण चिहुँ दिशि जाण ॥
सब चाल्यउ शत्रुञ्जय भणी, प्रगटी महियल वाणि ॥ २१ ॥
विक्रमपुर मंडोवरउ, सिन्धु जैसलमेर।
सीरोही जालोर नउ, सोरठ पांपानेर ॥ २२ ॥
संघ अनेक तिहां आविया, भेटण विमल गिरिन्द।
लोकतणो संख्या नहीं, साथि गुरु जिनचंद ॥ २३ ॥ "
[युग-प्रधान श्रीजिनचन्द्र सूरि अकबर प्रतिबोध रास, सं० १६४८]

सोलहसइ सैंताल समइ, वैसाख सुदि दिन तीज।
इम ढाल बन्धइ गुंथिया, श्रावक व्रत रे जिह समकित बीज १९
जिनदत्तसूरि गुरु सानिधइ, जिन कुशलसूरि सुपसाइ।
जयसोम गणि इणि पर कहइ, शुभ भावइरे दिन दिन सुखथाइ २०"

पाटणसे विहार करके अहमदावाद होते हुए सूरिजी खम्भात पधारे, वहा श्रीस्थंभन पार्श्वनाथ प्रभुके तीर्थके दर्शन किये। खम्भात के संघने आपको वहीं चातुर्मास करनेके लिये विशेष आग्रह किया। संघके आग्रहसे सूरिजीने वहींपर अवस्थिति की।

आचार्य पद प्राप्तिके पश्चात् आपने निरन्तर सर्वत्र विहार करके अनेक जीवोंको प्रतिबोध दिया, और हजारों श्रावकोंको जैन-दर्शनका सद्बोध देकर धर्ममें दृढ किया। इससे अनेक स्थानोंमें जिनालय व जिन बिम्बोंकी प्रतिष्ठाएं, उपधान, व्रत-ग्रहण, इत्यादि प्रशंसनीय धर्म-कृत्य हुए। अनेक संघ निकाले गये, जिनके साथ सूरि-महाराजने मारवाड़, गुजरात और पूर्व प्रान्तीय तीर्थोंकी यात्रा की। परपक्षियोंके किये हुए आक्षेपोंका उत्तर देनेमें और विद्या-भिमानी पण्डितोंको निरुत्तर करनेमें आपकी प्रतिभा बहुत बढ़ी चढ़ी थी। जैन दर्शनके तत्व-ज्ञानका प्रचार आपने खूब जोरोंसे किया। आपके सद्गुण और विद्वताकी सौरभ सर्वत्र प्रसरित होकर सम्राट अकबरके दरबार तक पहुंच गयी थी।

छठा-प्रकरण

अकबर-आमन्त्रण

स॰ाट् अकबर असाधारण धर्म-जिज्ञासु और समस्त धर्मोंके प्रति सहिष्णुता रखने वाले थे। अपने दरबारमें सब धर्मके विद्वानोंको बुलाकर प्रत्येक धर्मका उपादेय तत्त्व ग्रहण किया करते थे। यद्यपि वे मुसलमान कुलमें उत्पन्न हुए थे, तो भी उनके हृदयमें दयाके भाव अधिकाधिक थे। मुसलमान बादशाहोंमें उनके बराबर न्याय-प्रिय दूसरा कोई नहीं हुआ। सम्राट अकबर दीन-दुखियोंका उद्धार करना अपना परम कर्तव्य समझते थे जिसके अनेक उदाहरण उनके जीवनमें पाये जाते हैं। उनके राज्यमें हिन्दू और मुसलमान प्रजा जिस प्रकार सुख-शान्तिसे रही वैसी सुखी किसी भी मुसलमान शासकके राज्य-कालमें नहीं रही*।

*"बादशाह अपने दिलमें यही चाहता था कि किसी प्रकार मुझे धार्मिक सत्यकी बातें मालूम हों; बल्कि वह उनकी छोटी-छोटी बातोंका भी

वे शास्त्रार्थ, उपदेश, विद्वद्गोष्टी आदिके खूब प्रेमी थे इससे उनके दरबारमें चुने हुए विद्वान रहा करते थे, उनमें जैन विद्वान भी कई एक थे। नागपुरीय-तपागच्छके यति पद्मसुन्दरजी भी सम्राट् की सभामें कई वर्षों तक रहे हैं। सम्वत् १६२५ में जब कि सम्राट् आगरेमें निवास करते थे तब भी इन्हे विद्वानोंकी चर्चामें बहुत प्रमोद मिलता था। खरतर गच्छके वाचक दयाकलशजीने अपने विद्वान प्रशिष्य साधुकीर्तिजी आदिके साथ सं० १६२५ का चतुर्मास आगरेमें किया था उस समय शाही-दरबारमें तपागच्छीय बुद्धिसागरजीके साथ पौषधके सम्बन्धमें साधुकीर्तिजीसे शास्त्रार्थ हुआ था। और पण्डित अनिरुद्धजी और पण्डित महादेव मिश्र आदि हजारों विद्वानोंके समक्ष खरतरगच्छ वालोंकी जीत हुई थी, इसके विषयमें आगे साधुकीर्तिजीके परिचयमें लिखा जायगा।

पूरा पता लगाना चाहता था। इसलिए वह प्रत्येक धर्मके विद्वानोंको एकत्र करता था और उनसे सब बातोंका पता लगाया करता था।"

(अकबरी दरबार पृ० ७६)

अकबर.........जैनियों और बौद्धोंके ग्रंथ भी सुना करता था। हिन्दुओंके भी सैकड़ों सम्प्रदाय और हजारों धर्म-ग्रंथ हैं। वह सब कुछ सुनता था और सबके सम्बन्धमें वाद-विवाद किया करता था।

(अकबरी-दरबार पृ० १३२)

जब उसने देशका शासन अपने हाथमें लिया, तब ऐसा ढंग निकाला जिससे साधारण भारतवासी यह न समझें कि विजातीय तुर्क और विधर्मी मुसलमान कहींसे आकर हमारा शासक बन गया है। इसलिए देशके लाभ और हितपर उसने किसी प्रकारका कोई बन्धन नहीं लगाया(वही पृ०११८)

सम्वत् १६३६ मे तपागच्छके आचार्य श्रीहीरविजयसूरिजी भी सम्राटसे मिले थे उसके पश्चात् तो जैन विद्वानोंका समागम उसे निरन्तर रहा, जिससे जैन दर्शनके प्रति उनका अनुराग दिनो दिन बढने लगा था* ।

---

* तप गच्छके प्रभावक आचार्य श्रीमान् हीरविजयसूरिजो के समागम से अकबर पर अच्छा प्रभाव पड़ा था, जिसके फल स्वरूप उसने जजिया कर वगैरह छोड़ दिया। कई दिनों तक अ-मारि उद्घोषणाके फरमान पत्र प्रकाशित कर अनेक जीवोंको अभयदान दिया। उनके पश्चात् शान्तिचद्रजी, विजयसेनसूरिजी, भानुचन्द्रजी आदिने जैन धर्मका सदबोध दिया था, इन सब बातोंको जाननेके लिये "सूरीश्वर और सम्राट" आदि ग्रन्थोंको देखना चाहिये ।

खरतर गच्छके उ० श्री शिवनिधानजी के गुरु श्री हर्षसारजी भी सम्राटसे मिले थे जिसका उल्लेख शिवनिधानजी विरचित "संग्रहणी बालावबोध" में इस प्रकार है :—

"श्रीमदकबर साहेर्मिलनाद्विस्तीर्ण वर्ण कीर्ति भरः ।
वाक्पति वद गुररिह सक्रिय मुख्यो हर्षसार गणि ॥"

[बीकानेर वृहद् ज्ञान भण्डार]

महोपाध्याय श्री जयसोमजी भी सम्राट अकबरसे मिले थे। और उन्होने शाही-सभामें किसी विद्वानको परास्त करके विजय पाई थी जिसका वर्णन "जैन साहित्य नो इतिहास" पृष्ट नं० ५८८ में इस प्रकार किया है :—

"जयसोमे अकबर शाहनी सभा मां जय मेळव्यो हतो एम तेमना शिष्य गुणविनय, पोताना खंड प्रशस्ति काव्यनी प्रशस्ति मां जणावे छे।"

एक दिन लाहौरकी राज्यसभामें बैठे हुए सम्राट अकबरने उपस्थित विद्वानोंसे (हमारे चरित्र नायक) श्रीजिनचन्द्रसूरिजीकी महती प्रशंसा सुनी। वे विद्वान लोग उनकी अत्यधिक श्लाघा करते थे इससे सम्राटको सूरिजीके दर्शन करने और जैन धर्मका विशेष बोध प्राप्त करनेके लिये उत्कट इच्छा हुई। उन्होंने पूछा "यहां सूरिजी का भक्त शिष्य कौन है? जिमसे उनका पता लगाया जाय।" तब पण्डितोंने कहा "मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र हैं!" तब सम्राटने मन्त्रीश्वर को बुलाकर सत्कार सहित पूछा "हे मन्त्रीश्वर! तुम्हारे गुरु श्री जिनचन्द्रसूरिजी अभी कहां विराजते हैं? वे किसी भी प्रकार शीघ्र यहां पधारें ऐसा उपाय करो! तब मन्त्रीश्वरने विनयपूर्वक उत्तर दिया "वे अभी खम्भातमें विराजते हैं किन्तु अभी ग्रीष्म ऋतुमें दूर देशसे आना कठिन है क्योंकि वे किसी सवारीपर तो चढ़ते नहीं हैं और इस कड़े धूपमें वृद्धावस्थाके कारण आनेमें उन्हें कष्ट होगा" तब सम्राटने कहा "अगर वे शीघ्र न आ सकें तो उनके शिष्यको तो यहां अवश्य बुलानेके लिए दो शाही पुरुषोंको भेज

इसके अनुसार यदि खंड-प्रशस्ति-काव्यकी प्रशस्तिमें यह उल्लेख हो तो सं० १६४१ के पहिले ही अकबरकी सभामें उनका विजयी होना सिद्ध होता है क्योंकि यह वृत्ति सं० १६४१ में रची जानेका उल्लेख उसी ग्रंथके पृ० ५८९ में है। इस घटनाका उल्लेख कर्मचन्द्र-मंत्री-वंश-प्रबंध वृत्ति, जो कि सं० १६५६ में इनके शिष्य उ० गुणविनयजी ने बनाई है, उसमें भी इस प्रकार है:—

"श्री जयसोम गुरूणा, शाहि सभा लब्ध विजय कमलानाम्"

दो" तब मन्त्रीश्वरने वाचक मानसिंहजी (महिमराज) को बुलानेके लिए शाही दूतको विनतीपत्र सहित सूरिजीके पास भेजा।

सूरिजीने विनतीपत्र पाते ही वाचक श्रीमहिमराजजी को अन्य ६ साधुओंके साथ लाहौर भेज दिया। वे निरन्तर विहार करते हुए कुछ दिनोंमे लाहोर पहुचे। वाचकजीके दर्शनसे सम्राट बहुत प्रसन्न हुआ। उसने उत्सुकतापूर्वक मन्त्रीश्वरसे पूछा कि वे जगद्गुरु जिनचन्द्र सूरिजी कब आवेंगे? जिनके दर्शनसे चित्त रंजित होता है और अनेक लोग जिनकी चरण सेवा कर सुखी होते हैं। तब मन्त्रीश्वरने कहा "अब चौमासा निकट आ रहा है अतएव उनका विहार नहीं हो सकता!" तब सम्राट्ने कहा "मैं उनका दर्शन कर उनसे उपदेश ग्रहण करके अपना जीवन सफल करूंगा और अनेक जीवोंको अभय दान देकर उन्हे सन्तुष्ट करूगा। अतएव वे यहा अवश्य पधारें।" ऐसा कहकर सम्राटने विनती-पत्र लिखाकर मन्त्रीश्वरको दिया। मन्त्रीश्वरने भी बहुत आग्रहपूर्वक लाहौर आनेके लिये विनती लिखकर शीघ्रगामी चतुर मेवडा दूतोंके साथ खम्भात भेज दिया।

कुछ दिनों मे वे दूत खम्भात पहुचे। वहा सूरिजी के दर्शन कर प्रसन्न चित्तसे उन्हे विनती-पत्र देकर लाहोर चलने के लिये विनयपूर्वक प्रार्थना की।

सूरिजी विनती-पत्र पढकर विचार करने लगे कि मुझे अवश्य लाहोर जाना चाहिये, क्योंकि सम्राट अकबर धर्मजिज्ञासु है, यदि वह जैन धर्मका अनुकरण करने लग जायगा तो "यथा राजा तथा

प्रज्ञा"के नियमानुसार जैन धर्मकी बहुत उन्नति होगी। जब भारत-वर्षके राजा जैन-धर्मावलम्बी थे तब जैनोंकी संख्या भी बहुत थी और सर्वत्र शान्ति विराजमान थी। अब भी यदि गुरुदेवकी कृपासे अकबरके हृदयमें जैन धर्मके उच्च सिद्धान्त बैठ जायेंगे तो वर्तमान समय में आर्य्य प्रजापर होनेवाले अत्याचारों का सर्वथा विनाश हो जायगा। अतएव वहां जाकर सम्राट को जैन धर्मके सूक्ष्म तत्वोंका दिग्दर्शन कराना अति उपयोगी होगा।

सूरिजीके खम्भात से विहार करनेका दृढ़ निश्चय देखकर समस्त संघने एकत्र होकर उनसे प्रार्थना की "हे गुरुदेव ! चातुर्मास निकट है आप दूर देश कैसे पहुंचेंगे, अतएव यहीं विराजें।" तब सूरिजीने संघको समझाकर महान् लाभके कारण वहांसे मिती आषाढ़ शुद्दा ८ को प्रस्थान कर नवमी के दिन विहार किया। मार्गमें अच्छे शकुन मिले, जिससे सारा संघ प्रमुदित हुआ। सूरिजी आषाढ़ सुदि १३ के दिन अहमदाबाद पधारे। श्रीसंघने उत्सव-पूर्वक नगरमें प्रवेश कराया। उपाश्रयमें आनेके पश्चात् सूरिजी श्रीसंघ से परामर्श करने लगे कि चतुर्मास में साधु-विहार कैसे होगा ? उस समय फिर दो शाही फरमान आये, जिसमें मन्त्रीश्वरने भी आग्रहपूर्वक लिखा था कि "आप वर्षाकाल* और लोकापवाद की

* चातुर्मासमें निष्प्रयोजन साधुओंको विहार न करके एक ही स्थानमें रहनेकी जिनाज्ञा है लेकिन विशेष धर्म-प्रभावना और अनिष्ट कारक संयोग होनेसे आचार्य, गीतार्थादि महानुभावोंको देश, काल, भाव विचार कर विहार करनेकी भी अपवाद मार्गसे जिनाज्ञा है। पूर्व कालमें भी ऐसे संयोगोंमें चतुर्मासमें विहार करनेके कई प्रमाण मिलते हैं।

ओर लक्ष्य न देकर अति सत्वर लाहोर पधारें, आपके यहा पधारने से धर्मकी बहुत प्रभावना होगी।" तब सूरिजी ने संघ की सम्मति से वहासे लाहोर जानेके लिये विहार कर दिया। म्हेसाणा ग्राम होते हुए सिद्धपुर पधारे। वहा वन्ना शाहने नगर-प्रवेशोत्सव कराया और बहुतसा द्रव्य व्यय करके पूजा प्रभावनादि किये, वहा पाटणका संघ सूरिजी के दर्शनार्थ आया। वहासे विहार करके पाल्हणपुर पधारे, पाटणका संघ लाहण आदि करके वापिस चला गया। वहासे विहार करके सूरिजी शिवपुरी आये। उनके आगमनसे महुर और शिवपुरीका संघ बहुत हर्षित हुआ। सूरिजी के पाल्हणपुर पधारने के समाचार जब सीरोही के राव सुरतान×ने सुने, तब उन्होंने जैन संघको एकत्रित करके आज्ञा दी कि "सूरिजी को पाल्हनपुर से यहां आमन्त्रित करने के लिए मैं अपने प्रधान पुरुषोंको आपके साथ भेजता हूं, तुम लोग जल्दीसे जाकर उन्हें यहा पधारनेके लिये विनती करो!" तब श्रीसंघ और सीरोही-पतिके प्रेषित पुरुष पाल्हणपुर जाकर सूरिजी को आमन्त्रित कर आये। सूरिजी भी ग्रामनगर विचरते हुए सीरोही पधारे। उनका स्वागत करनेके लिये असंख्य जनता सामने आई, पंचशब्द निशाण,

× ये सं० १६२८ में मात्र १२ वर्ष की अवस्थामें सीरोही की राजगद्दीपर बैठे। ये बड़े वीर, उदार और महाराणा प्रतापकी भांति स्वाधीनताके उपासक थे। इन्होंने अपने जीवनमें ५१ युद्ध किये थे। इनकी वीरताके सामने बड़ी भारी सेना भी भय खाती थी। विशेष जाननेके लिये देखो सिरोही राज्यका इतिहास पृ० २१७ से २४४ तक।

नेजा, मादल, शङ्ख, झालर, भेरी आदि नाना प्रकार के वाजित्र बज रहे थे, सधवा स्त्रिया गुरु-गुण गाती हुई पीछे-पीछे आ रही थीं, भक्तिवान् कुलवती स्त्रिया मुक्ताफलोंसे बधा रही थी, जय-जय शब्दका उच्चारण, मेघकी गर्जनासा प्रतीत होता था। इस प्रकार सूरिजी सीरोही नगरके राज-मार्गसे होते हुए श्रीऋषभदेव स्वामीके मन्दिरमे पधारे। वहा प्रभुके दर्शन स्तुति आदि करके उपाश्रयमें पधारे, वहा स्वर्णगिरिका सघ, सूरिजीके दर्शनार्थ आया। राव सुरतानने आडम्बर सहित आकर सूरिजी को वन्दना नमस्कार करके पर्यूपण पर्व सीरोहीमे करनेको विनती की। सूरिजीने सघ और नृप-आग्रहसे पर्यूपण पर्वके ८ दिन सीरोहीमेही बिताये। सूरिजी के सीरोही विराजने से बहुत धर्म ध्यान हुआ। जिनपूजन, तपश्चर्या आदि बहुत से धर्म कार्य्य हुए। आठ दिन तक अमारि उद्घोषणा करके अनेक जीवोंको अभयदान दिया गया। समस्त सीरोही राज्यमे जीव हिंसा बन्द करनेके लिये सूरिजीने राजाको उपदेश दिया, तब राजाने पूर्णिमा के दिन जीवहिंसा दूर करने के लिये उद्घोषणा कर दी और भी राजाने सूरिजी की बहुत भक्ति की। पर्युषणके पश्चात् वहासे विहार करके सूरिजी जाबालपुर (जालोर) पधारे। शाह बन्नाने उत्सवपूर्वक नगरमे प्रवेश कराया।

उस समय लाहोरसे सम्राटने दो व्यक्तियोंके साथ फरमान-पत्र सूरिजी को भेजा, जिसमे लिखा था कि चातुर्मास मे आपको आनेमें कष्ट होता होगा? अतएव चातुर्मास पूरा करके शीघ्र ही पधारे, किन्तु पीछे बिलकुल विलम्ब न करें। तब सूरिजी कार्तिक

चउमास तक जालोर ही विराजे। चातुर्मास पूर्ण हो जानेसे मिगसर महीनेमें पुष्प नक्षत्रके दिन शुभ मुहूर्तमें बहुतसे साधुओं के परिवार सहित विहार किया, उनके साथ चतुर्विध संघ और शाही पुरुष भी थे। विमल यशोगान करनेवाले भोजक, भाट, चारण और दक्ष गांधर्व प्रस्तावोचित सूरिजीका गुण-गान करके श्रीमन्त श्रावकोंके पास समुचित पुरस्कार पाते थे। सूरिजी ग्रामानुग्राम विचरते हुए देठर, सराणड, भमराणी, खाडपरङ्गो वगैरह ग्रामोंमें आये। विक्रमपुरका संघ वंदनार्थ आया और लाहिणीकी। वहांसे द्रुणाडइ नगर पधारे, वहा जेसलमेरका संघ आया। वहांसे विहार करके रोहीठ नगर पधारे, वहाके शाह थिरा और मेराने बहुत उत्सवपूर्वक नगर-प्रवेश कराया और याचकोंको दान देकर सन्तुष्ट किया। वहा जोधपुरका वडा (विस्तृत) संघ वंदनार्थ आया, सूरिजी के दर्शन कर लाहणी आदि करके स्वधर्मी-भक्ति करके वापिस चला गया। चार व्यक्तियोंने नन्दी महोत्सव आदि रचना कर सूरिजी से चतुर्थ व्रत अर्थात ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण किया, और भी कईश्रावकोंने यथाशक्ति व्रत प्रत्याख्यानादि किये। वहाके ठाकुरने अपने राज्यमें बारस तिथिके दिन सूरिजीके उपदेश से जीवों को अभयदान दिया। वहांसे विहार करके पाली नगरमें पधारे, नंदी मंडा कर व्रतादि दिये। वहांके संघने बहुत हर्षित होकर चारों प्रकारके धर्मकी विशेष रूपसे आराधना की। वहांसे रानिया ग्राम होते हुए सोजत पधारे, प्रभुके मन्दिरके दर्शन किये। वहांसे बीलाडा पधारे, वहांके सुप्रसिद्ध कटारिया जातिके श्रावकने नगर प्रवेशोत्सव कराया वहांसे जयतारण नगर होते हुए मेडता नगर पधारे।

उस समय मेडता बहुतसे समृद्धिशाली श्रावकोंका लीला स्थान था, बहुतसे जैन मन्दिर नगरकी शोभा बढाते थे। मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रके पराक्रमी और बुद्धिशाली पुत्र भाग्यचन्द्र, लक्ष्मीचन्द्र वहा निवास करते थे, उन्होने हाथी, घोडा, रथ और पैदल पुरषोंके साथ पंचशब्द ढोल, नगारा निशाणकी मधुर ध्वनि से समारोह पूर्वक सूरिजीका नगरमे प्रवेश कराया। मंत्रीश्वरने महाजनोको एकत्रित कर फोफल दान नारियलकी प्रभावना की। सारे नगरमें लाहिणीकी याचकोंको इच्छित दान दिया। जिन मन्दिरोमे बडी पूजाऐं और नंदि महोत्सवादि कराये, बहुतसे भव्य श्रावकोंने व्रत उच्चारण किये। वहा फिर शाही फरमान आया। वहासे समस्त संघके साथ फलोधी पधारे। वहा श्री पार्श्वनाथ प्रभुके प्राचीन मन्दिरमे प्रभुके दर्शन किये।

वहासे विहार करके सूरिजी नागोर पधारे, प्रसन्नचित्त से मत्रीश्वर मेहाने द्रव्य व्यय करके स्वागत पूर्वक नगर प्रवेशोत्सव किया। वहा बीकानेरका संघ सूरिजीको वंदना करनेके लिये आया। उस संघके साथ ३०० सिजवाला (पालकी) और ४०० प्रवहण थे भक्ति पूर्वक स्वधर्मी-वात्सल्यादि करके वापिसगया। वहासे सूरिजी विहार करके वापेऊ, पडिहारा, मालासर आदि ग्रामोसे होते हुए रिणी * (बीकानेरसे ८४ मील) पधारे, वहाके लोग उत्साह पूर्वक

* यह रिणी शहर बहुत प्राचीन है, यहां आगे इहालिये राजाका राज्य था। यहां सं० ९८६ के लगभग बना हुआ श्री शीतलनाथ स्वामीका मन्दिर अब तक विद्यमान है। जो इतना सगीन और मजबूत है कि आजका सा बना हुआ प्रतीत होता है। कई जगह इसका निर्माणकाल संवत् ९९९ भी लिखा है।

सूरिजी का स्वागत करनेके लिये आये। समस्त संघके साथ मंत्री श्रीठाकुरसिंहके पुत्र मंत्री श्रीरायसिंहने प्रवेशोत्सवादि करके गुरु भक्ति की। वहा महिम का संघ सूरिजी के दर्शन करनेके लिये आया। श्रीशीतलनाथ स्वामीके प्राचीन भव्य जिनालयके दर्शन पूजन कर, सूरिजी को वंदन कर वापिस गया। वहासे सूरिजी ने विहार किया, मार्गमे लाहोर तक भक्ति करनेके लिये शाह शाकर सुत वीरदास साथमें हो गया। सूरिजी क्रमसे सरस्वतीपत्तन (सरसा) और कसूर होते हुए हापाणइ पधारे, वहासे लाहोर केवल चालीस कोस रहा। सूरिजी के शुभागमनका संदेश लेकर जो व्यक्ति लाहोर गया उसका मंत्रीश्वरने बहुत ही सन्मान किया और उसे सोनेकी रसना (जिह्वा) और कर-कंकण आदि बहुमूल्य वस्तुओंका पुरष्कार देकर सन्तुष्ट किया।

पं जा ब
लाहौर
कसूर
सरसा
भावलपुर
बीकानेर
जेसलमेर
मारवाड़
रोहिट
सिरोही
जालोर
सिन्ध
कच्छ
महेसाणा
गुजरात
अहमदाबाद
खम्भात
काठियावाड
युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि का — विहार मार्ग।
खम्भात से लाहौर तक के प्रवास — का चित्र।

सूरिजीका विहार मार्ग

सातवाँ-प्रकरण

अकबर-प्रतिबोध

रिजीके लाहौर पधारनेके शुभ सम्वादको सुन कर लाहोरके संघको अपार हर्ष हुआ और वे लोग मंत्रीश्वरके साथ आपके दर्शनार्थ वहां गये। फिर सूरि-महाराजको वीनति करके भक्ति पूर्वक और समारोह सहित लाहौर ले आये। नगरके समीप पहुंचने पर मंत्रीश्वरने सम्राटको निवेदन किया कि "आपके निमन्त्रित सूरि-महाराज पधारे हैं।" जिसे सुनकर अकबर अति प्रसन्न हुआ और उत्सुकता पूर्वक उन्हे बुलानेको कहा। इस आशयको एक कविने इस प्रकार व्यक्त किया है:—

पूज्य पधारया जाणिकरि मेली सब संघात।
पहुंता श्रीगुरु वांदवा सफल करइ निज आथ ॥८३॥
तेड़ी डेरइ आनि परि वहइ शाह नइ मंत्रीश।
जे तुम सुगुरु बोलाविया, ते आव्या सुरीश ॥८४॥

अकबर चलतो इम भणइ तेडउ ते गणधार ।

दर्शन तसु कउ चाहियइ, जिम हुइ हर्ष अपार ॥८५॥

सूरिजीके साथ वा० जयसोम, कनकसोम, वा० महिमराज, वा० रत्ननिधान विद्वत् गुणविनय और समयसुन्दर आदि बड़े बड़े प्रकाण्ड विद्वान यशस्वी और निर्मल चारित्रको पालन करनेवाले ३१ साधु थे। सं० १६४८ के फालगुन शुक्ला १२ के दिन पुण्य-योगमे सूरिजीने लाहौर नगरमे प्रवेश किया। उस दिन मुसलमानोंके ईदका पर्व था।

मंत्रीश्वरने सूरिजीके स्वागतोपलक्ष्मे बहुत द्रव्य व्यय करके महोत्सव किया जिसका वर्णन किसी कविने इस प्रकार किया है:—

घड़ी पन्नो मद गयन शीश सिन्दूर संवारे ।
चंवर अमोलख चार चामरा चांचरा सुधारे ॥
घणीनाद वीर-घट इणि उपरि अंबारी ।
गूघर पाखर पेखतां जु थरहराए भारी ॥
परतिख धजा फरनिजा इम सामेले संचरे ।
जिनचन्द्रसूरि आया जुगति इम कर्मचंद उच्छव करे ॥२॥

* * * * *

श्रीमहाराज पधारे लाहौर, अकबर शाह मतंगज जूथ समेला ।
चढे हैं नवाब बड़े उमराव, नगारांकी धूंस सुंहोत समेला ॥

बजे हैं आरब्भि थटे हैं झिण्डा, फरांट निशान घुरे हैं नौबत अराना सचेला।

पातिशाह अकबर देख प्रताप, कहे जिनचद्रका सूर्य उजेला ॥१॥

सूरिजीका स्वागत करनेके लिये राजा, महाराजा, मल्लिक, खान, शेख, सूबेदार, अमीर, उमराव, आदि सभी प्रतिष्ठित शाही-पुरुष और असख्य नागरिक आये थे। सम्राट अकबर स्वय राज-महलके गवाक्षमे बैठे हुए सूरि-महाराजकी बाट जोह रहे थे। वे दूरसे ही सूरिजीको आते हुए देखकर अत्यन्त प्रसन्नता-पूर्वक नीचे उतर आये और बहुत भक्ति और विनय पूर्वक सूरिजीको वन्दन करके उनसे विहारकी सुख-शाता पूछने लगे, "हे भगवन्! आपको खम्भातसे यहा आनेमे मार्ग-श्रम तो हुआ ही होगा! किन्तु मैंने भविष्यमें जीव दया प्रचारके हेतु ही यहा आपको बुलाया था। अब आपने यहा पधारकर मेरे पर असीम कृपा की है! मैं अब आपसे जैन धर्मका विशेष बोध प्राप्तकर जीवोको अभय दानादि दे कर आपका खेद (मार्ग-श्रम) दूर करूगा।"

सम्राटके इन विनीत वचनोको सुनकर सूरि-महाराजने मृदु-वचनोसे कहा "सद् धर्मका प्रचार करना ही केवल हमारा ध्येय है और सर्वत्र विचरते रहना ही हमारा आचार है! अत हमे मार्ग श्रमका जरा भी खेद नहीं है। हम अपना कर्त्तव्य पालन करनेके लिये ही यहा आये हैं। आपकी धर्म-जिज्ञासुता देखकर हमे परम आनन्द हुआ।

इस प्रकार वार्तालाप करते हुए सम्राट अत्यन्त हर्षित हुए। वे बड़े सन्मानके साथ सूरिजीसे हाथ मिलाये हुए उन्हें ड्योढी-महल मे ले गये। जिसका वर्णन एक कविने इस प्रकार किया है —

पहुंता गुरु दीवाण देखी अक्बर, आनइ साम्हा ऊमही ए।
वदी गुरुना पाय मॉहि पधारिया, सइ हथि गुरु नौ कर ग्रहीए ८१
पहुंता ड्योढी मॉहि सहगुरु शाहजी, धर्म बात रंगे करइ ए।
रंजिनें श्रीजी देखि (ए) गुरु सेवता, पाप ताप दूरइ हरइ ए ॥८१॥

[यु० श्रीजिनचन्द्र सूरि अकबर प्रतिबोध रास]

महलमे यथा-स्थान बैठ जानेके पश्चात परस्पर धर्म-गोष्ठी करने लगे। सूरिजीने अपनी ओजस्वी वाणी द्वारा प्रभावशाली शब्दोंमे इस प्रकार उपदेश देना आरम्भ किया.—

आत्मा एक सनातन सत्य पदार्थ है, जिसका आस्तित्व अनुभवादि द्वारा सिद्ध है। वह ज्ञान, दर्शन, चरित्र आदि सद्गुणोंका समुद्र है, और चैतन्य उसका लक्षण है। जब वह अपने सद्गुणो मे स्थित और लीन रहती है तब तक उसमे अति शुद्धता बनी रहती है। काम, क्रोध, मोह, अज्ञान, आदि गुणोंके सम्बन्ध होनेपर उसके साथ कर्मोंका बन्धन हो जाता है। उन कर्मोंके कारण ही विविध योनिमे नाना प्रकारके रूप धारण करके जीव कभी मनुष्य कभी पशु-पक्षी और कभी देव रूपमे अवतीर्ण होता है। अपने पुण्य पापके कारण कभी कभी रंक कभी सबल कभी दुर्बल कभी सत्ताधीश और कभी भिक्षुक आदि नामोंसे जगतमे अपना परिचय देता हुआ सुख दुखका अनुभव करता है।

प्रत्येक आत्माने ऐसे अनेक पर्य्यायोंको धारण किया है, और जब तक उसके साथ कर्मोंका सम्बन्ध है, करता ही रहेगा ! कर्मोंका सर्वथा विनाश हो जानेसे आत्माका शुद्ध स्वभाव प्रकट हो जाता है। आत्माकी उस अवस्थाको ही जैन-दर्शनमें परमात्मा या ईश्वर कहते हैं। इस विवेचनसे यह स्पष्ट है कि प्रत्येक जीव परमात्मा हो सकता है! अतः प्रत्येक प्राणीका यह कर्तव्य है कि वह परमात्मा बननेके कारणोंको समझकर उनके अनुकूल वर्त्तन करे।

आत्माके परमात्मा बननेके जो मार्ग हैं, उन्हें धर्म या साधक अवस्थाके नामसे सम्बोधित किया जाता है और दुर्भावोंको पैदाकर कर्म बन्धके जितने भी कारण हैं उनको पाप या बाधक अवस्था कहते हैं। प्रत्येक प्राणीको साधक और बाधक मार्गोंका ज्ञान नहीं होता अतः जो तत्व-ज्ञानके गहरे अध्ययन द्वारा उन्हें यथावत् जानकर साधक-मार्गका आश्रय लेते हैं। और दूसरोंको सन्मार्ग बतलाते हैं उन्हे जैन-दर्शनमें गुरुके नामसे सम्बोधित किया है। वस्तुतः आत्मा न पुरुष है न स्त्री, न निर्बल है न सबल, न धनी है न रंक, क्यों कि ये सब अवस्थायें तो कर्म-जनित हैं और आत्मा शुद्ध सच्चिदानन्द है! आत्माएं, सत्ता, द्रव्य, गुण और शक्तिकी अपेक्षा से समान है अतः सभी जीव मित्रवत् होनेसे परस्पर प्रेम के पात्र हैं। जैसे अपनेको जीवन प्यारा है वैसे सभी जीवोंको जीवन प्यारा और मरण भयावह है। अतएव उन सबको सुख पूर्वक जीने देना ही आत्माका प्रथम कर्तव्य है। परमात्म-अवस्था प्राप्तिके साधनोंमें समस्त जीवोंके साथ मित्रता या प्रेम-भावका व्यवहार करना सर्वो-

त्तम प्रधान साधन या धर्म है। इसी धर्मको 'अहिंसा' नामसे भी पुकारते हैं।

जब एक सत्ता-प्राप्त प्राणी एक निर्बल और क्षुद्र जीवको सताने को उतारू होता है तब वह अपने आप ही दूसरेको, अपनेको सताने के लिये आह्वान करता है और उसके मनकी कठोर वृत्तियाँ पापमय व्यापारोंकी ओर उसे झुकाती है। जहा समस्त आत्माओंको मैत्री-भाव रूप समान स्थान दिया जाता है, वहा विश्व-प्रेम, सहिष्णुता, उदारता आदि सद्गुणोंका श्रोत प्रवाहित होने लगता है। अपना आधिपत्य जमानेके लिये मनुष्यको विश्व-प्रेम द्वारा सर्व जन्तुओंके कल्याणका ध्यान करना चाहिए, क्योंकि दूसरेको सता कर स्वयं कोई सुखी नहीं रह सकता है। अपने मनोभावों द्वारा किसी प्राणीका अहित चिन्तन किये जानेको जैनदर्शनमे "हिंसा" नामसे सम्बोधित किया गया है। जहा हिंसाका इतना सूक्ष्म-तया विवेचन है, वहा यह बतलानेकी आवश्यता नहीं पडती कि किसी जीवको मारनेमे अधर्म या पाप नहीं है।

जिस देश या ग्रामका शासक अपनी प्रजाको सुखी नहीं रख सकता, उसके प्रति वात्सल्य नहीं रखता और राज्यमे नाना प्रकारके कर लगा देता है, उस राज्यमे शान्ति और सुख-साम्राज्यकी आशा हो नहीं की जा सकती, यह प्रत्यक्ष है। इसलिए अपने आधिपत्य मे रहे हुए प्राणी जिससे शान्ति-पूर्वक जीवन निर्वाह कर सकें वैसा निरन्तर ध्यान रखना चाहिये। सारे जगतका कल्याण हो, सब सुखी हो, कोई भी दुःखी न रहे, इस प्रकारकी हितेच्छु-वृत्ति को

अहिंसा कहते हैं। जहां अहिंसा है, अर्थात किसी प्राणीको दुःख न पहुंचाना ही जहां का प्रधान लक्ष्य है, वहां अन्य कई गुण स्वत. आकर निवास करते हैं। दयालु आत्माके समीप छल, प्रपंच, चिंता आदि वासनाएं और असद् व्यवहार प्रवृतियें कभी नहीं फटकती। वह सब संसारको अपनाकर लेता है, जहां जाता है वहीं अन्य जीवों के अभयकारक होनेसे पूज्य रूपमें देखा जाता है। अहिंसा तत्वमें रमण करने वाले योगियोंके पास सिंह और बकरी वैर भावोंका त्याग कर बैठते हैं। उनके दर्शन मात्रसे ही अद्भुत प्रभाव पड़ता है, बिना कहे सहस्रों नर नारी उनकी सेवामें उद्यत रहते हैं। अपने हृदयकी पवित्रता दूसरेके पाप भावोंको भुलाकर हित चिन्तनकी ओर ही झुकाती है। जो दूसरोंको अभयकारक होता है वह स्वयं सर्वदाके लिये अभय बन जाता है। संसारमें जहां जहां दूसरों को कष्ट पहुंचानेकी नीति है वहां अशान्ति, कलह सदाके लिये निवास करते हैं इसलिए प्रजापर अपना प्रभाव डालनेके हेतु उनके कल्याण-मार्ग और सुख शान्तिके उपायोंकी ओर ही लक्ष्य रखना चाहिये। जहां स्वार्थ-साधनके हेतु मनुष्य अन्धा बन जाता है वहां असत्य भाषण, चोरी, परस्त्री संसर्ग आदि विकृत भावोंकी लहरें लहराती हैं। किन्तु जहां अहिंसा रूपी सद्गुण का निवास होता है वहां ये दुर्गुण नहीं आ सकते, क्योंकि किसीकी चोरी करना, परस्त्रीके प्रति बुरे भाव रखना, हिंसा भावके बिना नहीं हो सकते। यदि सब मनुष्योंपर हिंसा-भावकी अशुभ भावना आरूढ़ हो जाय तो जगत-व्यवहारमें अनेक अड़चनें उपस्थित हो जाँय इसलिये स्वकल्याण चाहने

वाले मनुष्यको हिंसा भावको सर्वदा त्याग करना चाहिये। राजनीति मे प्रजापर वात्सल्य रखना और उसे सुख शान्तिसे रहने देना ही प्रजापालकका धर्म कहा गया है। मनुष्य तो क्या पशु पक्षी भी जो अपने राज्यमे रहते हैं, वे भी प्रजा ही हैं उन्हें प्राण रहित करना राजनीति कदापि नहीं हो सकती अतः उन्हे भी निर्भीक रहने देना चाहिये। धर्मके साथ आत्माका पूर्ण सम्बन्ध है। किसीको अपने धर्मसे छुड़ाना और धर्म-पालनमे बाधा देकर धार्मिक आघात पहुंचाना भी प्रजाको विद्रोही बनाना है, अतः शासकको मत सहिष्णुताका गुण अवश्य धारण करना चाहिये। शासकका प्रजावात्सल्य ही एकमात्र प्रजाके हृदय-सम्राट बननेका हेतु है। अतएव सर्वदा उदार वृत्ति और हृदय निर्मल पवित्र रखना चाहिये। हृदय निर्मल रखनेके लिये सात व्यसनोंका अवश्य त्याग करना चाहिये:—जूआ खेलना, मास भक्षण, मदिरा पान, शिकार, प्राणी हिंसा, चोरी करना और परस्त्री गमन इन्हे त्यागने वालोंकी सदा जय होती है और कीर्ति फैलती है। अहिंसा रूपी सद्गुण धारण करनेसे सतत् श्रीवृद्धि होती है, लाखों प्राणियोंका आशीर्वाद मिलता है। प्राचीन इतिहाससे यह स्पष्ट है कि जिस समय जैनों और बौद्धोंका अहिंसा प्रचार अति जोरों पर था तब राज्योंसे कलह, विग्रह और अशान्ति चिरकालके लिये अन्तर्ध्यान हो गई थी।

सूरिजीके अमृत मय उपदेश श्रवण करनेसे सम्राटके चित्तमे अत्यन्त प्रभाव पडा और करुणाका बीज परिपुष्ट हुआ। उनके प्रति पूज्य भाव और भक्तिका आदुर्भाव हुआ। उसने वस्त्र और स्वर्ण-

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि और सम्राट अकबर (लाहोर)

मुद्रायें लाकर भक्ति पूर्वक सूरिजीके सन्मुख रखकर निवेदन किया "हे गुरुवर्य्य ! आप इनमें से अपनी आवश्यकतानुसार कुछ लेकर मुझे अनुगृहीत करें !" तब सूरिजी ने कहा "साधुओंको परिग्रह रखना उचित नहीं, अतः हम इन सबका क्या करें !" सूरिजी के इस निर्लोभीपनको देखकर सम्राट मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ और उन्हे अपने हृदय मन्दिरमें आराध्य गुरु करके स्थापित किया। इसके पश्चात सम्राट, सूरिजी के साथ महलसे बाहर आये ; और समस्त सभाजन, दीवानों और काजियोंको संबोधित कर कहने लगे "ये जैनाचार्य, धैर्य्यवान धर्मधुरन्धर और विशिष्ट गुणोंके समुद्र हैं। हमारा आज अहो भाग्य है हमारी ऋद्धि धन और राज्य सम्पदा आज सफल है जो कि इनके दर्शन हुए।"

सम्राटने सूरिजीसे निवेदन किया "हे पूज्यवर ! आपने यहां पधारकर हमारे पर महती कृपा की है। अब प्रति दिन अवश्य एकवार धर्मोपदेश सुनाने और दर्शन देनेके लिये हमारे महलमें पधारा करें ×। जैसी मेरी दया-धर्म पर स्थिर मति है वैसी मेरे अन्तःपुर और सन्तानकी भी दया बुद्धि हो ऐसी मेरी अभिलाषा है। अब आप खुशीसे उपाश्रय पधारें और संघकी आशा पूर्ण करें।"

सम्राटने मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको आज्ञा दी कि हाथी, घोड़ा और वाजित्र परिवार ले कर उत्सव के साथ गुरु महाराज को उपाश्रय

× एकशोदर्शनं देयं युष्माभि. प्रति वासरम् ।
अस्माकं धर्म वृद्ध्यर्थमवारित गतागतैः ॥ ९० ॥
[कर्मचन्द्र मंत्रिवंश प्रबन्धः]

पहुंचाओ !" तब सूरिजी ने कहा "नहीं, राजन्! हमारे लिये उत्सव आडम्बरकी कोई आवश्यकता नहीं है। दयामय जैन धर्मका प्रचार ही हमारे लिये परम उत्सव रूप है !" परन्तु सम्राट अकबरने अत्यन्त आग्रह पूर्वक महान् उत्सवके साथ सूरि महाराज को पहुंचानेके लिये मंत्रीश्वरको फिरसे आज्ञा दी।

परम धर्मिष्ठ लाहौरके जौहरी "परवत शाह" ने मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रसे विनती की "यहांसे उपाश्रय तक प्रवेशोत्सव करानेका लाभ मुझे लेने दें।" फिर मन्त्रीश्वरकी आज्ञा प्राप्त करके उसने हाथी, घोड़ा, पैदल सिपाही और शाही वाजित्रोंके साथ सूरिजीको उपाश्रयमें पहुंचाया। अन्य श्रावकोंने भी चित्त और वित्तसे धर्मकी प्रभावना की। सधवा स्त्रियोंने मुक्ताफलोंसे वधाया और भक्तिसे गुरु-गुण-गर्भित गीत गाये। भाट, भोजक आदि याचकोंने सूरिजीकी प्रशस्त कीर्तिका गुणानुवाद करके श्रावकोंसे मनोवाञ्छित द्रव्य पाया।

सूरि-महाराजने उपाश्रयमें पधारकर मधुर ध्वनिसे मङ्गलमय देशना दी, जिससे संघपर अनुपम प्रभाव पड़ा। सब लोग धन्य-धन्य, जय-जय करते हुए अपने-अपने घर गये।

सूरिजीके लाहौर पधारनेसे प्रतिदिन अधिकाधिक धर्म-ध्यान होने लगे। यह सब श्रेय सम्राट अकबर और मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजीको ही था, जिन्होंने दूर देशसे आमन्त्रितकर सूरि-महाराजको लाहौर बुलाए।

सम्राटके विनीत-आग्रहसे सूरिजी प्रतिदिन शाही महलमें जाकर धर्मोपदेश देने लगे। जैन धर्मकी सर्वोत्तम विशेषताएं और अहिंसाका स्वरूप सम्राटको भली भांति बतला दिया, जिससे वे अत्यन्त धर्मपरायण और दयालु हो गये।

सम्राट अपने दरबारमें सूरिजीकी सतत प्रशंसा × किया करते थे कि श्वेताम्बरादि यति साधु मैंने बहुत-से देखे हैं। अनेक धर्मके गुरुओंका सत्संग किया है, परन्तु इनके सदृश शान्त, त्यागी, विद्वान और निराभिमानी किसीको नहीं पाया। इनके दर्शन और समागमसे हमारा जन्म सफल हुआ है।

सूरिजीको सम्राट 'बड़े गुरु' * नामसे सम्बोधन किया करते थे,

× दिन प्रति श्रीजी सुं वलि मिलतां, वधिउ अधिक सनेह।
गुरुनी सूरति देखी अकबर, कहइ जगि धन धन एह ॥ ७ ॥
केई क्रोधी केई लोभी कूड़े, केइ मनि धरइ गुमान।
षट् दर्शन मई नयण निहाले नहीं कोई एह समान ॥ ८ ॥
[यु० प्र० जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास]

जिनचन्द्रसूरि सम को नहीं रे, गच्छ चौरासी मांहि।
खान प्रधान सबै सुनो रे, कहइ अकबर पातिशाहि ॥ ३ ॥
× × ×
श्वेतम्बर हम बहु मिले रे, इन सम और न कोई।
अम्बर तारा गण घणा रे, दिनकर सम कुण होई ॥ ६ ॥
[विमलविनय कृत गीत गा ७]

* वृहद् गुरु तया पूज्याः ख्याति मापा पुरेऽखिले।
शाहि सम्मानतो यस्मा जना वृद्धानुगामिन ॥ ९४ ॥

इससे हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी 'बड़े गुरु' के नामसे सर्वत्र प्रसिद्ध हुए। राजा, महाराजा, सूबेदार, मुसाहिब और सम्राटका सारा परिवार उनके परम भक्त बन गये।

एक दिन सम्राटने सूरिजीसे धर्म-चर्चा करते हुए भक्तिके उल्लासमें आकर एक सौ स्वर्ण-मुद्राएं उनके सन्मुख रखी। उन्होंने साध्वाचारका स्वरूप दर्शाते हुए कहा,—"सम्राट्! द्रव्यग्रहण करना तो क्या उसे छूना भी साध्वाचारसे विपरीत है, क्योंकि द्रव्यसे ममत्वादि अनेक दुर्गुणोंकी उत्पत्ति होती है, जैन साधुओंके लिये वस्त्र, पात्र यावत् अपने शरीरपर भी मूर्च्छा—आसक्ति करना निषिद्ध है! अपने माता, पिता, कुटुम्ब, परिवार और धन-दौलत त्याग करनेसे ही जैन-दीक्षा ग्रहण की जाती है और आजीवन उन्हें पांच कठिन प्रतिज्ञाएं ग्रहण करनी पड़ती हैं, जिनका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है:—

(१) समस्त प्रकारकी हिंसा, मन वचन और कायासे, करने कराने अनुमोदन करनेका त्याग।

(२) सब प्रकारसे मिथ्या भाषणका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

(३) किसीके बिना दी हुई छोटी-से-छोटी वस्तुके ग्रहणका त्रिकरण, त्रियोगसे त्याग।

(४) समस्त प्रकारकी काम-वासनाओंका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

(५) समस्त प्रकारके द्रव्योंकी मूर्च्छाका त्रिकरण, तीन योग-से त्याग।

इसीसे जैन साधु निग्रन्थ कहे जाते हैं। अतः हमारे लिए द्रव्य सर्वथा अग्राह्य है।"

सूरिजीके इन निर्लोभी वचनोंको सुनकर सम्राट् अत्यन्त चकित और हर्षित हुआ। उस द्रव्यको धर्म-कार्यमें खर्च करनेके लिये मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको सौंप दिया। उन्होंने उसे धर्म-स्थानमें व्यय कर दिया।

एक समय सम्राट अकबरके पुत्र सलीम सुरत्राणके मूल नक्षत्रके प्रथम पादमें कन्याका जन्म हुआ। ज्योतिषी लोगोंने कहा कि इसका जन्मयोग पिताके लिये अनिष्टकारक है। उसका मुख भी नहीं देखकर परित्याग कर देना चाहिये। तब सम्राटने शेख अबुलफजल आदि विद्वानोंको बुलाकर मूल-नक्षत्रके जन्म-दोषका प्रतिकार पूछा। उनसे परामर्श करके मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको पूछकर सम्राटने आज्ञा दी,—हे मन्त्री! जैन दर्शनके अनुसार इस दोषकी उपशान्ति करनेके लिये शान्ति-विधि आदिका उचित प्रबन्ध करो।

सम्राटकी आज्ञा पाकर मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रने विशेष विधिसे सोने-चाँदीके घड़ों द्वारा महान् उत्सवके साथ मिती चैत्र शुक्ला १५ * के

---

* इम चैत्री पुनम दिवस शान्तिक, साहि हुकम मुंहते कीयउ।
जिनराज जिनचन्द्रसूरि वन्दो, दान याचक नइ दीयउ ॥ १२ ॥
[यु० प्र० जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास]

पछी शेखजी गुण नी पेटी, तेह नइ आवी मूल मां बेटी।
तेड़या पण्डित जोशी जेहो, बोलया जलमां मूंको एहो ॥ ३८ ॥

* * *

दिन (श्री सुपार्श्वनाथजीका) अष्टोत्तरी स्नात्र कराया, जिसमें लगभग एक लाख रुपये खरच हुए । वा० श्री मानसिंहजी (महिमराज) ने समस्त शास्त्रोक्त विधि सम्पन्न कराई । इस उपलक्षमें श्रीजिन-चन्द्रसूरिजीके आदेशसे श्री जयसोमजीने अष्टोत्तरी स्नात्रकी विधि गद्य भाषामें बनाई ÷ ।

पूजन शेष हो जानेके अनन्तर मङ्गल दीपक और आरतीके समय सम्राट और उनके पुत्र शेखुजी (सलीम-शाहजादा) अनेक

मुनि कहै हत्या नवि लीजै, स्नात्र अष्टोत्तरी कीजै ।
पातस्या हरख्यो तेणिवार, कुट्ण वामण बड़े गंवार ॥ ४० ॥

* * *

झूठे बामण ऋषि भली बात, करो अष्टोत्तरी स्नात्र ।
हुकम करमचन्द नइ दीधो, मानसिंहे अष्टोत्तरो कीधो ॥ ४२ ॥
थानसिंह मानुकल्याण करि स्नात्र उपासरइ जाण ।
पातस्या शेखजी आवइ, लाख रूपइया खरचावै ॥ ४३ ॥
स्नात्र उपास नुं करता, श्राद्ध श्राविका आम्बिल धरता ।
जिनशासन नी उन्नति थाय, विघ्नशातदाह केरुं जाय ॥ ४४ ॥

[कवि ऋषभदास कृत हीरविजयसूरि रास]

इसके विषयमें विशेष जाननेके लिये "सूरीश्वर और सम्राट" पृ० १९४ कर्मचन्द्र-मंत्रि-वंश प्रबन्ध वृत्ति और भानुचन्द्र-चरित्र देखो ।

÷ श्रीजिनचन्द्र गुरूणामादेशा (त्) लाभपुरे लिखिता ।
जयसोमोपाध्यायैः स्नात्र विधि पुण्य वृद्धि कृताः ॥ १ ॥

इसकी हस्तलिखित प्रति बीकानेरके ज्ञानभण्डार और उ० जयचन्द्रजी-के भण्डारमें है ।

मुमाहिबोंके साथ वहां आए और १००००) रुपये जिनेन्द्र भगवानके सन्मुख भेंट कर प्रभु-भक्ति और जिन शासनका गौरव बढ़ाया।

शान्तिके निमित्त मंत्रीश्वरके कथनसे प्रभुके स्नात्रजलको सम्राटने मँगाकर अपने दोनों नेत्रोंपर लगाया और अन्तःपुरमें भी उस न्हवण-जलको भक्तिपूर्वक लगानेके लिये भेजा। इस अष्टोत्तरी स्नात्रके पवित्र दिवसमें समस्त श्रावक श्राविकाओंने आम्बिलकी तपश्चर्या की। इस अष्टोत्तरी स्नात्रके अनुष्ठानसे सर्व दोष उपशान्त हुए, जिससे सम्राटको परम हर्ष हुआ।

सम्राट अकबरके मुसलमान होते हुए भी जैन-विधिसे शान्तिक स्नात्र कराना, जैन धर्मके प्रति उनकी विशेष श्रद्धा-भक्ति और अनुपम आदरका परिचायक है।

धर्म गोष्टीपरायण सम्राट अकबर के आग्रह से सूरिजी ने भविष्यमें जैन धर्मकी विशेष प्रभावनाके हेतु सं० १६४६ का चातुर्मास लाहोर में करना निश्चित किया।

आठवाँ प्रकरण

युग-प्रधान पद प्राप्ति

र्य्य देवमन्दिरोंका विध्वंश करना मुसलमानोंका स्वाभाविक दोष था। यद्यपि सम्राट अकबरके सुख-साम्राज्यमें ऐसा दुष्कृत्य करना सर्वथा निषिद्ध था, तो भी "जाति स्वभाव न मुञ्चते" नीति वाक्यके अनुसार ऐसी घटनाएं बहुधा हुआ करती थीं, यह तत्कालीन इतिहाससे स्पष्ट है*। सं० १६३३

---

* सम्राटके समयमें जिनप्रतिमाकी आसातना होनेका उल्लेख "हीर-विजयसूरि रास" में कवि ऋषभदास ने भी इस प्रकार किया है —

"पाटण थी पछइ करइ विहार, अम्बावती मां आवणहार।
सोजितरै रह्या कारणवती, आशातना हुई प्रतिमा अती ॥ १८ ॥
अहमदाबाद अकबर शाह जिसै, पासे आजमखान सही तिसै।
खंडी प्रतिमा पास नी त्यांहि, हर्ष्यु आव्युं अम्बावती मांहि ॥१९॥
हाकिम हमनखान कर करी, आसातना प्रतिमाकी करी।
सुणी हीर सोजितरै रह्या, मोरमदें पछे गुरुजी गया ॥ २० ॥"

[आनन्द-काव्य-महोदधि मौ० ८ पृ० ९८]

में हुरसमखान ने सोरोहीपर चढ़ाई की थी। तब १०५० धातुकी जैन प्रतिमाएं वहासे लूटकर फतैपुर सीकरीमें सम्राटके पास लाया। वह उन प्रतिमाओंको गलाकर सोना निकालना चाहता था, किन्तु नीति-परायण सम्राट अकबरने उसे ऐसा न करने देकर प्रतिमाओंको सुरक्षित रखा। उसके पश्चात् सं० १६३६ में आषाढ शुक्ला ११ के दिन बीकानेरके मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रने सम्राटको प्रसन्न कर प्रतिमाएं बीकानेर लाकर विराजमान की, जो अभी तक यहांके श्री चिन्तामणिजीके मन्दिरमें विद्यमान हैं, इस विषयमें विशेष आगेके प्रकरणमें लिखा जायगा।

जब हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी लाहौरमें विराजते थे, तब भी एक ऐसी दुःखद घटनाका समाचार मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको मिला कि नौरङ्गखान नामक किसी मुसलमान अधिकारीने द्वारिकाके जैन-मन्दिरोंका विनाश कर दिया है। यह सुनकर मंत्रीश्वरने सूरि-महाराजको निवेदन किया "हे भगवन्! यदि सम्राटको उपदेश देकर तीर्थ-रक्षाके लिये कुछ उपाय न किया गया, तो यवन लोग द्वारिकाकी भाति अन्य तीर्थोंका भी विनाश करते देर नहीं लगावेंगे।"

सूरि-महाराजने इस कार्यको आवश्यक जानकर सम्राटके समक्ष शत्रुंजय प्रभृति तीर्थोंका महात्म्य बतलाया और साथ-साथ उनके उचित प्रबन्ध करनेकी भी सूचना दी। सम्राटने सूरिजीकी इस पवित्र आज्ञाको शिरोधार्य करके प्रसन्नतापूर्वक समस्त तीर्थोंकी रक्षाके लिए एक फरमान-पत्र लिखवाया और उसके ऊपर अपनी

मुद्रिका (मोहर) लगाकर मंत्रीश्वरको समर्पित किया। उस फरमान-पत्रमें लिखा था कि आजसे समस्त जैन तीर्थ मंत्रीश्वरके आधीन कर दिये गये हैं †।

सम्राट्ने अहमदाबादके तत्कालीन सूबेदार आजमखान × को शत्रुञ्जय, गिरनार आदि तीर्थोंकी रक्षा का सख्त हुक्म देकर फरमान भेजा। जिससे महातीर्थ श्री शत्रुञ्जय पर म्लेच्छोंका किया हुआ उपद्रव निवारण हुआ।

यह फरमान पत्र इलाही सन् ३६ के सहरयुर महीनेमे लिखा गया था, जिसका उल्लेख इसी आशयके एक फरमानके भाषानुवादमें है, जिसकी नकल बीकानेर "ज्ञान भण्डार" से लेकर इस पुस्तकके परिशिष्ट मे प्रकाशित की गई है।

---

† अन्यदा द्वारिका सत्कचैत्य ध्वंशऽमुना श्रुते।
श्री जैन चैत्य रक्षायै विज्ञप्त श्रीजलालदी ॥ ३९६ ॥
नाथेनाथ प्रसन्नेन जैनास्तीर्था समेऽपिहि।
मंत्रिसाद्विहिता (चक्रिरे) नूनं, पुण्डरीकाचलादय ॥ ३९७ ॥
आजमखानमुद्रिय मुद्रित निज मुद्रया।
फुरमाणमदात् शाहिर्यस्मै प्रोणित मानस ॥ ३९८ ॥
उद्धारान् मम चैत्याना कारणा द्विदशु पुरा।
महात पुण्डरीकाद्रौ रक्षणात्स' कृतोऽमुना ॥ ३९९ ॥
[कर्मचन्द्र मंत्रिवश प्रबन्ध]

× यह आजमखान सन् १५८७ से १५९२ तक अहमदाबादका सूबेदार था। खानेआजम या मिर्जा अजीज कोकाके नामसे भी यह पहचाना जाता है। विशेष परिचयके लिए "मीराते सिकन्दरी" का गुजराती अनुवाद देखना चाहिए।

एक बार सम्राट अकबरको काश्मीर विजय करनेके निमित्त जानेकी इच्छा हुई, तब मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको कहा कि बड़े गुरु श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको बुलाओ। उनके दर्शनकर धर्मलाभ रूपी आशीर्वाद प्राप्त करनेकी मेरी अभिलाषा है, जिससे मेरी मनोकामना पूर्ण होगी।" सम्राटकी इस आज्ञासे मन्त्रीश्वरने सूरि-महाराजको शाही दरबारमें बुलाया *। उनके दर्शनकर सम्राट अत्यन्त प्रसन्न हुए। सम्राटके हृदयमें यह निश्चय हो गया कि हमारी अवश्य ही विजय होगी, क्योंकि सूरिजीपर सम्राटकी असीम श्रद्धा और भक्ति थी।

सूरिजीकी अमृतमय वाणी और अहिंसात्मक उपदेश श्रवणकर सम्राटका हृदय दयासे ओत-प्रोत हो गया और प्रति वर्ष आषाढ शुक्ला ९ से पूर्णिमा पर्यन्त १२ सूबों — में समस्त जीवोंको अभय-

---

* काश्मीरान् गन्तुकामेनान्यदा नोमध्यवर्त्तिना।
शाहिना मुदितेनैवमुदितो मन्त्रि नायक ॥ ४०० ॥
जिनचन्द्राह्वयथा तूर्णं माह्वया वचसा मम।
धर्मलाभो मह्यास्तेषा ममादेयोस्ति वाञ्छित ॥ ४०१ ॥
पूज्याअपि तथा हूता नायक श्री शाहि सन्निधौ
श्री गुरोर्दर्शनादेवा नन्दितो भून्नराधिप ॥ ४०२ ॥
शुचि मासे शुचौ पक्षे प्रसन्नो दिन सप्तकम्।
नवमीतो दशोशाहि रमारि गुण पावनम् ॥ ४०३ ॥
[जयसोमजी कृत कर्मचन्द्र-मन्त्रि वंश प्रबन्ध]

— कई जगह ११ सूबोंका ही उल्लेख है, किन्तु समयसुन्दरजी अपनी "कल्पलता" की प्रशस्तिमें इस प्रकार लिखते हैं —

दान देनेके लिये १२ शाही फरमान (अमारि-घोषणा) लिखकर भेजे * ।

इन फरमानोंमेंसे मुलतानके सूबेका फरमान पत्र खो जानेसे सं० १६६०-६१ (ता० ३१ खुरदाद इलाही सन् ४६) में उसकी पुनरावृत्ति करते हुए फिरसे एक फरमान श्रीजिनसिंहसूरिजीको सम्राटने दिया था, जिसकी नकल परिशिष्टमें दी गई है ।

अकबर रञ्जन पूर्वं द्वादश सूबेषु सर्व देशेषु ।
स्फुटतरममारि पटहः प्रवादितो यैश्च सूरिवरैः ॥ ७ ॥

* सद्गुरु वाणि सुणी शाहि अकबर परमानंद मनि पाए ।
इफ्तइ रोज अमारि पलण कुं तिणि फुरमाण पठाए ॥ २ ॥
[समयसुन्दरजी कृत जिनचन्द्र० गीत]

सात दिवस जिनि सब जीवनकी हिंसा दूर निवारी ।
देश देशि फुरमाण पठाए सब जन कुं उपगारी ॥ ३ ॥
[गुणविनयकृत जिनचन्द्र० गीत]

आठ दिवस आषाढ़ के अट्ठाहि निरधारि ।
सब दुनिया माँहि शाश्वती पालावी अमारि ॥ ८ ॥
[श्रीसुन्दर कृत जिनचन्द्र० गीत]

गुर्जर मण्डल तैं बोलाए, संतण मुख सुणि जसु गुण गान ।
बहुत पडूर सगुरु पउधारइ, बखत योग लाहोर सुथान ॥ २ ॥
अर्थ विचार पूछि सहु विध विध, रीझे अकबर शाहि सुजाम ।
बहुत बहुत दर्शन महं देखे, को न कहूं या सुगुरु समाम ॥ ३ ॥
भाग सोभाग अधिक या गुरु कौ सूरति पाक अमृत सम वान ।
पेश करइ अकबर अण माँग्ये सब दुनिया मांहि अभयादान ॥ ४ ॥
[गुणविनय कृत जिनचन्द्र० गीत]

सम्राटके अमारि फरमान प्रकाशित करनेसे अन्य राजाओंपर बहुत प्रभाव पड़ा। उन्होंने भी सम्राटका अनुकरण करके अपने-अपने राज्योंमें किसीने १० दिन, किसीने १५ दिन, किसीने २० दिन, किसीने २५ दिन, किसीने १ महीने और किसीने २ मास तक भी सब जीवोंको अभयदानकी उद्घोषणा करा दी *। जिससे सम्राटको परम हर्ष हुआ और जैन धर्मकी महान् प्रभावना हुई। सूरिजीके इस उपदेशके फल-स्वरूप असंख्य जीवोंको सुख-शान्ति मिली।

अपने काश्मीरके प्रवासमें भी धर्मगोष्ठी, धर्म-चर्चा होती रहे और वहां भी दया-धर्मका प्रचार हो इस हेतुसे सम्राटने मन्त्रीश्वर को निर्देश करके सूरिजीसे निवेदन किया "सूरिमहाराज लाहोरमें ही सुखसे विराजें और हमारे साथ धर्म-चर्चा करने और दयाका उप-देश देकर अनार्य देशको भी आर्य रूपमें करनेके लिये मानसिंहको अवश्य भेजें! तब मन्त्रीश्वरने सम्राटके कथनका समर्थन करते हुए वाचकजीको भेजनेमें जो एक बाधा थी उसका प्रतिकार करते हुए सूरिमहाराजसे विनय पूर्वक प्रार्थना की "यद्यपि वह अनार्य देश है इससे मुनियोंको आहार-पानी मिलनेमें असुविधा

* पातिशाहि मनोल्हाद हेतवे निखिलैरपि।
देशाधीशैः स्वदेशेषु दश पञ्चाधिकान्दिनान् ॥ ४०५ ॥
दिनानां विंशतिं केश्चिदन्यै स्तु पञ्चविंशतिं।
मास मास द्वयं यावद पौरमर्धं ददे ॥ ४०६ ॥
[कर्मचन्द्र मन्त्रि वंश प्रबन्ध]

होना संभव है, तथापि हम बहुतसे श्रावक लोग भी यात्रामे सम्राटके साथ रहेगे ! इससे साधु धर्मके पालन करनेमे किसी तरहकी बाधा नहीं होगी। उसदेशमे विहार करनेसे दया-धर्मके प्रचारका महान् लाभ और जैन-धर्मकी प्रभावना होगी ! अत' उन्हे अवश्य भेजिये !" सूरिजीने लाभ जानकर स्वीकार कर लिया।

कश्मीर यात्राके लिये तैयारिया होने लगी, सम्राटने सारा सैन्य सुसज्जित करके सं० १६४६ मिती श्रावण शुक्ला १३ (ता० २२ जुलाई सन् १५६२ *) को प्रथम प्रयाण * राज श्रीरामदास * की वाटिकामें किया। वहा उसी दिन संध्याके समय एक सभा एकत्र हुई, जिसमे सम्राट अकबर, शाहजादा सलीम, बड़े बड़े सामन्त, मण्डलिक राजा, महाराजा और अनेक वैय्याकरण तार्किक उद्भट विद्वान (भट्ट) भी सम्मिलित हुए। उस सभामे श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको अपने शिष्य-मण्डलके साथ अतिशय सम्मान और बहुमान पूर्वक निमन्त्रित किया गया।

---

* देखो अकबर नामा।

* ये ५०० सेनाके स्वामी थे, "सूरीश्वर और सम्राट" में इनका प्रसिद्ध नाम करणराज कछवाहा भी लिखा हैं इन्हें राजाकी उपाधि थी विशेष जाननेके लिये आईन-ई-अकबरीका अंग्रेजी अनुवाद देखना चाहिये।

* श्रीमोहनलाल द० देशाई B A. L L B महोदयने यह सभा "काश्मीर देशपर विजय कर्याते निमित्ते" लिखा है, किन्तु अष्टलक्षीकी प्रशस्तिमें "काश्मीर देश विजय मुद्दिश्य श्रीराज श्रीरामदास वाटिकायां कृत प्रथम प्रयाणेन" लिखा है। इस वाक्यसे काश्मीर विजय करनेके उद्देश्यसे प्रथम प्रयाण किया गया था तब सभा एकत्र होना सिद्ध है।

इससे पहले किसी समय सम्राटकी सभा में विद्वद्गोष्टी करते हुए किसी विद्वानने जैन-धर्मके "एगस्स सुत्तस्स अनन्तो अत्थो" वाक्यपर उपहास किया *। यह बात सूरिजीके प्रशिष्य विद्वद् शिरोमणि श्रीसमयसुन्दरजीको अखरी। उन्होंने जैन-दर्शनके इस वाक्यकी सार्थकता दर्शानेके निमित्त "राजानो ददते सौख्यं" इस वाक्यपर व्याकरण-सिद्ध दश लाख बाईस हजार चार सौ सात (१०२२४०७) अर्थ किये। उनमें कहीं कोई अर्थ संभवपर न हो या अर्थ योजनामें युक्ति युक्त न हो इस लिये ?२२४०७ अर्थोंको उनकी पूर्तिके लिये छोड़कर उस ग्रंथका नाम "अष्टलक्षी" रखा। सम्राटको इस ग्रंथ-निर्माणकी सूचना मिलनेसे हर्षित होकर उन्होंने उस ग्रंथको देखने और श्रवण करनेकी उत्कट इच्छा प्रकट की थी।

इस सभामें उस ग्रंथको सुननेका सुअवसर प्राप्तकर कविवर समयसुन्दरजीको वह ग्रंथ पढकर सुनानेके लिये सम्राटने आग्रह पूर्वक कहा। सूरि महाराजकी आज्ञा प्राप्तकर समयसुन्दरजीने उस विद्वत् सभाके समक्ष साहित्य ससारमें अपूर्व और अनुपम ग्रंथ-रत्न "अष्ट लक्षी" को पढकर सुनाया। इस चमत्कृत अद्भुत ग्रंथको मनोयोगसे श्रवणकर सम्राट और उपस्थित विद्वानोंके चित्तमें अत्यन्त आश्चर्य और कौतुहल उत्पन्न हुआ। सब लोग समयसुन्दरजीकी विद्वताकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे। सम्राटने उस ग्रंथ-रत्नकी अत्यधिक श्लाघा की और उसे अपने हाथमें लेकर उसके सौभाग्यशाली निर्माता श्रीसमयसुन्दरजीके कर-कमलोंमें समर्पणकर

* देखो "विजयधर्म सूरिजी कृत "धर्म देशना" पृ० २

उस ग्रंथको प्रमाणिक सिद्ध किया। और उन्होंने यह भी इच्छा प्रकट की कि इस अभूतपूर्व ग्रंथको पढ़ा जाय, और बहुत सी नकलें कराके सर्वत्र प्रचार किया जाय *। '

सूरि महाराजने सम्राटके साथ काश्मीर प्रवासमें वा० मानसिंह जी श्रीहर्षविशालजी × आदिको भेजा। और सम्राटके निर्देश किये हुए सावद्य व्यापार, कि जो साध्वाचारसे विपरीत हों उन्हें परिशीलन करनेके लिये मंत्र, तंत्रादिमें निपुण मेघमाली गुरुके विनयी शिष्य महात्मा पञ्चाननको भी साथ भेजा।

मंत्रीश्वरने साधुओंको निर्वद्य अन्न-पानादि प्राप्त करने, और साधु-धर्मका सुखपूर्वक पालन करनेमें सुविधा हो इसलिये अपने साथ और भी बहुतसे श्रावक लिये थे। लाहोरसे क्रमशः काश्मीर को प्रयाण करते हुए रोहितासपुर पहुंचे। सम्राटने अपनेअन्तःपुरकी

---

* देखो 'अष्टलक्षी' ग्रंथकी प्रशस्ति, इस ग्रंथका दूसरा नाम 'अर्थरत्नावली' भी है। यह ग्रंथ और भी अनेकार्थ-साहित्य के साथ "अनेकार्थ रत्नमंजूषा" के नामसे "देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फंड" गोपीपुरा, सूरतसे प्रकाशित हुआ है। "अष्ट लक्षी" जैन साहित्यका एक महान् गौरवपूर्ण ग्रंथ है। इसकी समता करने वाला समस्त विश्व के अनेकार्थ साहित्यमें कोई दूसरा ग्रंथ नहीं है।

× कर्मचन्द्र मन्त्रि-वंश-प्रबन्धमें इनका नाम डुंगरजी लिखा है किन्तु उसकी वृत्तिमें दीक्षा नाम हर्षविशाल होनेके कारण हमने यही लिखा है।

रक्षा करने के लिए अपने परम विश्वासभाजन मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको वहीं रहनेकी आज्ञा दी। अतः मंत्रीश्वरको वहीं ठहरना पड़ा *।

सम्राट सैन्यसहित क्रमशः प्रयाण करते हुए काश्मीर पहुंचे। रास्तेमें जहां जहां पड़ाव डालते थे वहां वहां वाचकजीके साथ धर्म-गोष्ठी किया करते थे। उनके उपदेशसे सम्राटने कई जगह तालाबोंके जलचर जीवोंकी हिंसा बन्द कराई। मार्ग बहुत विषम था, पथरीले रास्तोंमें उन्हें पैदल विहार करते देखकर सम्राटके चित्तमें वाचकजीकी साधु-धर्मपर निश्चलता और क्रियाकी कठिनताका गहरा प्रभाव पड़ा।

काश्मीर देश पर विजय प्राप्तकर सम्राट 'श्रीनगर' आये। वहाँ अपनी विजयके उपलक्ष्यमें वाचकजी के कथन से आठ दिन तक अ-मारि उद्घोषणा की ✝।

---

* तथेत्युक्त्वा समं मंत्री शाहिनां चालयत्तराम।
मानसिंहान् निराबाध संयमन् डुंगरान्विताम् ॥ ४०९ ॥
शाहि निर्दिष्ट सावद्य व्यापार परिशीलनात्।
मुनिनां मा भृताचार विलोपो भवतादिति ॥ ४१० ॥
विभाव्य मंत्र तन्त्रादि निपुणं दत्तवान् समं।
पञ्चाननं महात्मानां विनेयं मेघ मालिनः ॥ ४११ ॥

* * * *

स्वयं तु शाहि वाक्येन रोहितास पुरे स्थितः।
अवरोधस्य रक्षार्थं विश्वासास्पदमीशितु ॥ ४१२ ॥

✝ श्रीगुरु वाणी श्रीजी नित सुणइ, धर्म मूरति धन २ इस भणइ।
शुभ दिनइ रिपुदल हेलि भंजी, नयर श्रीपुरि उतरि।
अमारि तिहां दिन आठ पाली देश साधो जय वरी ॥
(जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास)

काश्मीर दिग्विजय करके क्रमशः प्रयाण करते हुए सन् १५६२ ई० ता० २६ दिसम्बर (सं० १६४६ के माघ महीनेमें) को सम्राट लाहौर वापस आये। इस विजय के उपलक्ष में प्रजाने खूब हर्ष मनाया, नगरमे वाजित्र बजने लगे। सूरिजी भी वा० जयसोम, वा० रत्ननिधान, पं० गुणविनय, समयसुन्दर आदि विद्वत् मुनि मंडलीके साथ सम्राटसे मिले और उन्हे धर्म-लाभ रूपी आशीर्वाद दिया। सूरि-महाराज का दर्शन कर सम्राट अत्यन्त प्रमुदित हुए।

एक दिन धर्मगोष्ठी करते हुए सम्राटने सूरि महाराजसे कहा कि आपके (जैन) दर्शन के सदृश मैने किसी दर्शनको नहीं देखा, और आपके समान निर्मल चरित्रवान् साधु नहीं देखा। काश्मीर यात्रामें मुझे श्रीमानसिंहजी के सदगुणो का भी बहुत कुछ अनुभव हुआ है। ऐसे पथरीले विकट मार्ग मे जहा रथ वगैरह का जाना भी कठिन है वहां पैदल विहार करके इन्होंने अपने आचार को जिस दृढता के साथ पालन किया है, उसका मैं कितना वर्णन करूं, अनेकों कष्ट सहन करके भी और हमारे बहुत कहनेपर भी ये अपनी प्रतिज्ञाओसे विचलित नहीं हुए। इनकी कर्तव्य-निष्टा और निरीहता हर समय मेरे हृदयमें आश्चर्य और आनन्द उत्पन्न करती है। इनके उपदेशसे काश्मीरमें मैंने तालावोंके मछली आदि जलचर जीवोको अभय दान दिया था। अब कृपा करके आप इन्हे (मानसिंहजीको) अपने पट्ट पर स्थापित कर जैन-शासनका सर्वोत्कृष्ट आचार्य पद प्रदान कीजिये ! क्योंकि ये सर्वथा योग्य हैं, एवं दुद्धर्ष संयम पालनेमें निश्चल हैं।

प्रकट-प्रभावी योगीन्द्र युगप्रधान दादा श्रीजिनदत्तसूरिजी
(जेसलमेर भाण्डागारीय प्राचीन ताडपत्रीय प्रति के काष्ट-फलक पर चित्रित)

दादा श्रीजिनदत्त-सूरिजी का चरित्र श्रवणकर सम्राट अकबरके चित्तमें अद्भुत चमत्कार और कौतुहल उत्पन्न हुआ। अकबरने इस पदके सर्वथा योग्य हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी को ही समझ कर उन्हें *"युग-प्रधान"* × पद दिया। और वाचक मानसिंहजी (महिमराज जी) को आचार्य पद देकर सिंह के तुल्य होनेके कारण *'श्रीजिनसिंह सूरि'* नाम देनेका निर्देश किया। तत्पश्चात् मंत्रीश्वरको आज्ञा दी कि जैन-दर्शन की विधि के अनुसार संघ की साक्षी से उत्सव-महोत्सव पूर्वक शुभ दिन देखकर अद्वितीय समारोह के साथ हर्ष उत्कर्पसे इस उत्सवकी तैयारी करो।

सम्राट की आज्ञा पाकर मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र ने बीकानेर नरेश रायसिंहजीसे सारा वृत्तान्त निवेदन किया उन्होंने भी इस शुभ कार्य में अपनी सम्मति और आज्ञा प्रदान की। इसके पश्चात् पौषध-शालामें जैन संघको एकत्र कर विनीत वचनोंसे मंत्रीश्वरने निवेदन

× अकबर शाहि हरख भरि कीनौ, युगप्रधान पदधारी।
खंभायत में शाहि हुकुम तंइ जलचर जीव उबारी ॥ २ ॥
[गुणविनयकृत जिनचन्द्रसूरि गीत]

उत्तम काम अवलिये कीधो, युगप्रधान पद दीधो।
तिणि अवसर सांगासुत भावइ, सवा कोड़ि वित्त वावइ ॥
[रत्ननिधान कृत गहूँली]

युगप्रधान पदवी भली आपइ अकबर राज।
संइ मुख हरखे इम कहइए, ए गुरु सब सिरताज ॥
[सं० १६४९ चै० कृ० ९ कृतसमयप्रमोद कृत जिनचन्द्र ० गीत]

किया "यद्यपि संघ सब कुछ कार्य करनेको समर्थ है तथापि इस महान् उत्सवका लाभ कृपया मुझे ही लेनेकी आज्ञा दें!" श्रीसंघने मन्त्रीश्वर के इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर आज्ञा दे दी।

संघ की आज्ञा प्राप्तकर मन्त्रीश्वरने महोत्सव की तैयारिया आरम्भ कर दी। अच्छा दिन देखकर मिती फाल्गुन वदी १०*से अष्टान्हिका महोत्सव मनाया जाने लगा। संघमें सर्वत्र आनन्द छा गया, भक्तिपूर्वक रात्रिजागरणमें श्राविकाओंने एकत्र होकर देव, गुरु और धर्मके माङ्गलिक गीत गाये। मंत्रीश्वर ने समस्त सार्धमियोंके घर पूंगीफल, एक सेर प्रमाण मिश्री, और सुरंगी चुनड़ियें भेजी।

अष्टान्हिका महोत्सव खूब आनन्द उत्सव से मनाया गया, मिती फाल्गुन शुक्ला २ जया-तिथि को मध्याह्नके समय अच्छे मुहूर्त में आगमोक्त विधि से श्रीजिनचन्द्रसूरिजीमहाराज ने वाचक श्रीमहिमराजजी को "सूरि मंत्र" देकर आचार्य पदसे अलंकृत किया। सम्राट के कथन से उनका नाम "श्रीजिनसिंहसूरिजी" रखा गया। इसी समय वा० जयसोमजी और रत्ननिधानजीको "उपाध्याय पद" पं० गुणविनयजी और समयसुन्दरजीको "वाचनाचार्य" पद प्रदान किया।

* संवत्नद समुद्र षट्शशि मिते श्रीफाल्गुने मासिये।
न प्राक् श्रीदशमी तिथौ (?) सत्पुण्याः सतानंदिनः॥
शाहि दत्त युगप्रधान विरदा आनन्द कन्दान्विते।
श्रीमच्छ्रीजिनचन्द्रसूरि गुरवो जीवन्तु विश्वश्चिरम्॥४॥
इसमें यह श्लोक अशुद्ध ही मिला है। 5554

उस समय का दृष्य अत्यन्त मनोहर और दर्शनीय था, जिस संखवाल गोत्रीय श्रावक साधुदेव के बनवाये हुये उपाश्रय में उन्हें आचार्य पद दिया गया था, उसे खूब ध्वजा पताकाओंसे सजाया गया कीमती मोतियों के जड़े हुए चंन्द्रवे और पूठिये सजाये गये। भगवानका चतुर्मुख (नन्दि) समवशरण विराजमान कर उसके सन्मुख सर्व विधि सम्पन्न हुई। इस महोत्सवमें स्वगच्छ परगच्छ स्वधर्म और परधर्म के भेदभावों को त्याग कर असंख्य नागरिक और राज्यके बड़े बड़े प्रायः सभी अधिकारी सम्मिलित हुए थे। शाही वाजित्रोंको ध्वनिसे सारा नगर आनन्द का निकेतन बन गया था।

सम्राट अकबर ने इस आनन्दोत्सव के उपलक्ष मे सूरिजी के उपदेश से स्वम्भतीर्थीय समुद्रके असंख्य जलचर जीवों को वर्षावधि अभयदान देने के लिए फरमानपत्र प्रकाशित किया † और लाहौरमे भी उस दिन शाही-नौवत बजाकर अमारि-उद्घोषणा की गई।

इस धार्मिक हर्षोत्सव में मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रजी बच्छावतने अपने द्रव्यका सद्व्यय करनेमें कोई कसर नहीं रखी। जिसने जो मांगा वही प्रदान कर अपनी प्रशस्त कीर्ति चिर स्थापित और दिग्गंत

---

† जग सगले जस पामियउ, प्रतिबोधी पातशाह।
खंभायत दधि माछली राखी अधिक उच्छाह॥

* * * * * *

खंभायत दरियावके जी रे जी पूज जी छोड़ाया सहु जाल।

[श्रीसुन्दर कृत गीतद्वये]

व्यापी की। "युगप्रधान" नाम स्थापनपर याचकोंको नव हाथी, पांच सौ घोड़े, नवग्राम और सवा करोड़ रुपयेका अभूतपूर्व दान दिया, जिसका उल्लेख तत्कालीन ग्रन्थ कर्मचन्द्र मंत्रि वंश प्रबन्ध वृत्ति (सं० १६५०)*, जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर ग्रन्थ × (प्रश्न नं०

---

* इस ग्रन्थमें इस प्रकरणमें उल्लिखित प्रायः सभी बातोंका विस्तृत वर्णन है, ग्रन्थविस्तारके भयसे उसके श्लोक यहाँ नहीं दिये गये हैं।

× इस ग्रन्थमें कई विशेष ज्ञातव्य बातोंके साथ इस प्रकार वर्णन है:—

"द्विवगा श्री लाहोर मांहि श्रीअकबर जलालुदी पातस्या श्री वृहत् खरतर गच्छनायक श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालङ्कार श्री जिनचन्द्रसूरिजी नैं योग्यता जाणी खुसी थइ नै युगप्रधान नामे बोलाव्या, श्रीकर्मचन्द्र मन्त्रीश्वरे याचकां ने ९ हाथी, ९०० घोड़ा, ९ ग्राम, एवं सवा कोड़ि नुं दान आप्या, महामहोच्छव कीधा। लाहोर मांहि अमारि घोषाइ पातिशाहि नौबति बजाइ वलीमुंहते पातिसाहजीने १२००० रुपईया १२ हाथी १२ घोड़ा २७ तुरकस पेस कीधा श्रीजीये १२(?) रूपईया राखरा बीजा सर्व मुंहतानें ज बकस्या एवं महामहोत्सव पूर्वक सर्व लोक समक्ष युगप्रधान थाप्या। तउ तेह ना शिष्य तथा श्रावक युगप्रधान कहै तिहां स्यौ दूषण थाइ × × × × वली युगप्रधान नामि दूहवावो ते स्युं ? आज प्रभृत वली श्रीजिनशासन माँहि किणइ आचार्य नइ जगद्गुरु कहया हुवइ तो तुम्हें दिखाड़ो ! तमारा ऋषिमतीना भट्टारक नैं श्रावक श्राविका जगत्-गुरु कही गावै छै तुम्हे सांभली खुशी थाओ छो श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ना नाम युगप्रधान सांभली दुहवाओ तेह स्युं ? जइ पातिशाह जगत्गुरु एहवा नाम सांभलै (तउ) फजीत करै श्री सेख अबुलफजल हजूर जगत्गुरु नाम कहतां लेखे अम्ह हजूर रोस करो भानुचन्द्र पन्यास नैं जे बोल कह्या ते

१३४ के उत्तर) आदिमें मिलता है। इस विषयका एक प्राचीन कवित्त हीरकलश शिष्य हेमाणंद कृत "भोज चरित्र चौपइ", जो कि सं० १६५४ दीवाली के दिन 'भड़ाणइ' ग्राम में बनाई है, उसकी प्रशस्ति में इसप्रकार लिखा है:—

"नव हाथी दिन्हे नरेश, मदस्यौं मतवाले ।
ऐराखी पंचसइ, लोकत पावइ नित हालइ ॥
नवइ गांव बगसीस, सइ तु सहू को जाणइ ।
सवा कोडिका दान, "मह्लवि" साच बखाणइ ॥
को राइ न राणा करि सक्इ, संग्राम नंदन जो किया ।
युगप्रधान के नाम कुं, कर्मचन्द इतना दिया ।"

सचमुच यह दान अभूतपूर्व था, पदस्थापनाके समय इस प्रकार का दान आगे किसीने नहीं किया। ऐसे दानी महानुभावोंसे जैन शासन गौरवान्वित है।

लाहोरके संघने एकत्र होकर मंत्रीश्वरके घर जाकर उन्हें यश-स्तिलक करके सम्मानित किया।

सम्राट अकबरको भी इस महोत्सवके उपलक्षमें मंत्रीश्वरने शेख अबुलफजलको साथ लेकर १००००) रुपये, १० हाथी, १२घोड़े और २७ तुरूक्स भेंट स्वरूप पेश किये। सम्राटने मङ्गलके निमित्त

भानुचन्द्र जाणे छै, घली लोकां ना कह्या तपा एहवा नाम मानौ छो एवं विचारतां तुमने ए प्रश्न अजाणपणो जणावै छै।"

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि श्रीमान् हीरविजयसूरिजीका जगत्गुरु पद उनके भक्त श्रावक श्राविकाओंद्वारा रखा हुआ गुरु भक्तिसूचक मात्र था, किन्तु सम्राट अकबरने उन्हें जगद्गुरुका कोई विरुद नहीं दिया था।

रु०१) रख कर बाकी सब मन्त्रीश्वरको वापिस दे दिये । इसी प्रकार शाहजादा सलीम और शेख अबुलफजल आदि सम्राटके आत्मीय-जनोंका भेटपूर्वक सत्कार किया । मंत्रीश्वर सम्राटके सामाजिकाध्यक्ष पदपर नियुक्त थे। इसलिये उस विभागके समस्त कर्मचारियों और अन्य अधिकारियों का भी उचित सम्मान किया ।

इस प्रकार यह महान् महोत्सव अवर्णनीय आनन्द, अनुपम उत्साह, असाधारण भक्तिके साथ सम्पन्न हुआ । उससमय के उल्लसित शुभभाव और हर्ष का अनुभव जो उस महोत्सव में सम्मिलित हुए वे ही कर सकते थे । इस जड़ लेखनी द्वारा उस आनन्द का वर्णन करना असमर्थ है । तो भी संक्षिप्तमें इतना तो अवश्य कहना होगा कि वह उत्सव अदृष्टपूर्व, परम गौरवसम्पन्न और जैन शासनकी उन्नति, उत्कर्ष करने में अद्वितीय था ।

सूरि महाराजने पाक्षिक चातुर्मासिक और सांवत्सरिक पर्वों के दिन "जयतिहुअण" पढ़ने का शाश्वता आदेश बोहित्थ वंश की सन्तति को दिया और उन्हीं पर्वों के प्रतिक्रमण में स्तुति बोलने का आदेश श्रीमालों को दिया †

† बोहित्थ संतति नइ दियइ, युगप्रधान गणधारो रे ।
पक्ष चउमास पजूसणइ, श्री जयतिहुअण सारो रे ॥ ७८ ॥
तिम चौमासइ पाखियइ, संवत्सरियइ थुइ रे ।
पड़िकमणइ संध्यातणै, श्रीमालां नइ हुइ रे ॥ ७९ ॥
[कर्मचन्द्र वंशावली प्रबन्ध चौ०]

बीकानेरमें अभीतक खरतरगच्छ में बच्छावतों को धार्मिक कार्यों में अच्छा सम्मान है ।

बीकानेर महाराज रायसिंहजी * सूरि-महाराजके परम भक्त थे। हम पहले लिख चुके हैं कि इस उत्सव पर वे भी लाहोरमें ही थे। उन्होंने इसके १० दिन पश्चात् अर्थात् मिती फाल्गुन शुक्ला १२ को कई ग्रन्थ सूरिजीको आग्रहपूर्वक समर्पण किये थे। सूरिजीने उन ग्रन्थोंको बीकानेरके स्थापित ज्ञानभण्डार* में रखे थे, उनमेंसे दो ग्रन्थ हमे उपलब्ध हुए हैं, जिनका पुष्पिका लेख इस प्रकार हैः—

"सं० १६४६ वर्षे फाल्गुन शुक्ल द्वादश्या श्री लाभपुर नगरे पातशाह श्री अकबर प्रदत्त युग-प्रधान पद समलंकृत खर (तर) गच्छेश भट्टारक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिराजाना। श्री जिनसिंह सूरि युताना भूशक्र चक्र चर्चित चरणारविन्द महाराजाधिराज श्री

* इनका जन्म सं० १५९८ श्रा० कृ० १२ को हुआ, सं० १६२८ वैसाख शुक्ल १ को बीकानेरकी राजगद्दीपर बैठे। ये सूर वीर और दानी नरेश थे। बादशाहने प्रसन्न होकर इन्हें "राजा" पदवी, पांचहजारीका मनसब और ५२ परगने जागीरमें दिये। सं० १६६८ में इनका स्वर्गवास हुआ। विशेष जाननेके लिये "बीकानेर राज्यका इतिहास" "भारतके प्राचीन राजवंश" और 'कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध' देखने चाहिये।

* साहित्यकी रक्षा और अभिवृद्धि करनेके लिये सूरि महाराजने कई जगह ज्ञानभण्डार स्थापित किये थे। बीकानेर ज्ञानभण्डारमें रखी जानेका और भी कई पुस्तकोंकी प्रशस्तिसे जाना जाता है, जिसमें अनेक भक्त श्रावकोंने ग्रन्थ लिखवाके रखे थे। कई पुस्तकोंकी प्रशस्तिसे ज्ञात होता है कि आपने खम्भातके "ज्ञानभण्डार" में भी कई ग्रन्थ स्थापित किये थे।

रायसिंघैः कुंवर श्री दलपतिप्रभृति परिवार युतैः पुस्तकमिदं विहारितं। तेरच ज्ञान वृद्धयर्थ श्रीविक्रमनगरे वित्कोपे स्थापितम्। शिष्यादिभिर्वाच्यमानं चंद्रार्क चिरनंद्यात्।"

[वन्दरुवामित्त्व पड्शीतिवृत्ति पत्र ५० श्रीपूज्यजीके संग्रहसे]

"सं० १६४६ वर्षे फाल्गुन शुक्ल द्वादश्यां गुरौ पुण्ययोगे श्री लाभपुरे जंतु जाता......................हि शाहि श्री अकबर प्रदत्त युगप्रधान पद समलंकृत श्री मत्खरतर गच्छाधिप भट्टारक.......... ....श्री जिनसिंह सूरि संयुताना। सदा सुप्रसन्न वदनारविन्द महाराजाधिराज श्री.......... विहारितं पुस्तकमिदं ज्ञान वृद्धयर्थं च श्री विक्रम पुरवरे तेश्च भाण्डागारे स्थापितम्। शिष्य..........

[हमारे संग्रहमें, चूहोंके काटे हुए पन्नवणासूत्र से]

कहा जाता है कि सूरि-महाराज ने जब शाहीदरबार में प्रवेश किया और बादशाह स्वागतार्थ सन्मुख आया उस समय मार्गके किसी नालेमें एक बकरी रखो गई थी। सम्राटने जब उन्हें आगे पधारनेकी विज्ञप्ति की। तब सूरिजी ने अपने योगबलसे भूगर्भ-स्थित बकरीका स्वरूप जान, रुककर कहा "नालेमें जीव रहे हुए हैं उन्हें उल्लंघन कर नहीं आ सकते" सम्राटने कहा "कितने जीव हैं?" सूरिजीने कहा "तीन जीव हैं" सम्राटने चकित होकर सोचा इसके नीचे एक ही बकरी रखी गई थी तीन कैसे हो सकती है। परन्तु जब उस नालेको उद्घाटन कर देखा गया तो तीन ही जीव मिले। क्योंकि बकरीके सगर्भा होनेके कारण भूमिके संसर्ग दो बच्चे उत्पन्न

हो गए थे। इस आश्चर्यजनक घटनासे सम्राटके दिलमें सूरिजी के प्रति अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति उत्पन्न हो गई ×।

इसी प्रकार एक समय सम्राटको सूरि-महाराजका भक्त देखकर ईर्षासे जले हुए काजीने सम्राटके समक्ष सूरिजीको नीचा दिखानेके लिए मंत्रबल से अपनी टोपी उड़ाई। सूरिजीने अपने बुद्धि-वैभवसे काजीके अभिप्रायको जानकर जैन-शासनकी अवहेलना न हो इसलिए टोपीको वापिस लानेके लिये मंत्र-शक्ति द्वारा रजोहरणको उसके पीछे छोड़ा। सूरि-महाराजके प्रेपित रजोहरणने काजीकी टोपीको ताड़ित करते हुए वापस लाकर काजीके मस्तक पर रख दिया। इससे काजीने विफल प्रयत्न होकर अपना ईर्षा अभिमान त्याग दिया *।

×सं० १७१२ के लगभग लिखी हुई बीकानेर ज्ञानभण्डारकी एक पट्टावलीमें इस घटनाका इस प्रकार भी उल्लेख है :—

"जियांरउ अतिशय देखी नइ पातिशाहइ युगप्रधान पदवी दीधी ते अतिशय कहइ छइ एकदा कियइ एके शाहि नइ कह्यउ एह गुरु ज्ञानी छइ कां एक ज्ञान पूछउ तरइ पातसाहइ पोतारइ सिंघासण नीचे परवर्ती गर्भ-वती एक छाली घालि नइ आप उपरि बइठा तरइ गुरां नइ पूछउ—मेरे नीचे क्या है ? गुरे लग्न लेइ नइ कह्यो एक नर छइ बि मादो छइ, शाहि काढी जोयउ छाली व्याइ, ज्ञान मिल्यो तरइ युग-प्रधान पदवी दीधी।

इसके अतिरिक्त और भी कई कवित्तोंमें तीन बकरियोंके भेदको बत-लानेका जिक्र है।

* बीकानेर स्टेट लायब्रेरीमें जिनसागरसूरि शाखाकी एक १८ वीं शताब्दिमें लिखित पट्टावलीमें लिखा है कि जिनसिंहसूरिजीको बादशाहने

एक तीसरी चमत्कारिक घटना भी इस प्रकार कही जाती है कि आहार के लिये परिभ्रमण करते हुए सूरिजी के एक शिष्यने मौलवीके तिथि पूछनेपर अमावश्याके बदले भूलसे पूर्णिमा बतला दी। इस वाक्यपर मौलवी ने उपहास करते हुए उत्तर दिया "वाह महाराज ! मैंने सुना है कि जैन-साधु झूठ नहीं बोलते, किन्तु यह तो सरासर झूठ है, अब देखेंगे कि किस प्रकार आज पूर्णिमाका चाद प्रकाशमान होगा !" उन साधुजीको भी अपनी भूल स्मरण हो आई, किन्तु वचन मुखसे निकले बाद पराया हो जाता है अतः उन्होंने उपाश्रयमें जाकर सूरि-महाराजसे सारा वृतान्त निवेदन किया।

इधर मौलवी साहबने सब जगह यावन् सम्राटके दरबार तक यह खबर पहुंचादी कि जैन साधुओंके कथनानुसार आज चाँद उदय होगा। तब सूरिजीने जैन-शासनकी अवहेलना न हो इसलिये किसी श्रावक के यहांसे स्वर्णथाल मंगवा कर उसे आकाशमें उड़ा दिया। सूरिजीके प्रतापसे वह थाल पूर्णिमाके चंद्रमाकी भान्ति सर्वत्र प्रकाश करने लगा। सम्राटने इसकी जांच करनेके लिये अपने घुड़ सवार बारह बारह कोस तक भेजे किन्तु सर्वत्र प्रकाश ही प्रकाश हुआ सुन सम्राट अत्यन्त चकित और विस्मित हो गया*।

करामात दिखानेको कहा तब उन्होंने कहा हम भिक्षु करामात क्या जानें ! इतनेमें काजीने अपनी टोपी मंत्र शक्तिसे आसमानमें उड़ाई और जिनसिंह सूरिजीने ओघेसे वापस आकर्षण की, इत्यादि।

* इस घटनाका हमें कोई प्राचीन प्रमाण न मिला। आधुनिक बीसवीं शताब्दिके प्रकाशित ग्रन्थोंमें—महो० रामलालजीगणि कृत

सूरिजीके लाहौर विराजनेसे अनेक धर्मकृत्य हुए। लोगोंके हृदयमें सद्भावनाका स्रोत प्रवाहित होने लगा। जैन धर्मकी अतिशय प्रभावना हुई।

वहांसे विहार करके सूरि-महाराज हापाणइ पधारे सं० १६५० का चातुर्मास वहीं किया। एक दिन रात्रिके समय उपाश्रयमें चोर आगए। किन्तु उनके लिये वहा कौनसा धन-माल रखा था! अगर था तो केवल साधुओं के पढ़ने के ग्रंथ और भिक्षाके निमित्त काष्टके पात्र, किन्तु चोरोंने तो उन्हें भी नहीं छोड़ा, पुस्तकें बटोर

"दादाजीकी पूजा" और आचार्य श्रीजयसागर सूरिजी सम्पादित "गणधर सार्ध शतक-भाषान्तर", श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञान-भंडार बम्बईसे प्रकाशित "श्रीजिनचन्द्रसूरि चरित्र" आदिमें इसका उल्लेख पाया जाता है। एवं चित्रोंमें भी इस चमत्कारिक घटनाका भाव चित्रित मिलता है। खरतर-गच्छकी एक पट्टावलीमें श्रीजिनप्रभसूरिजीके सम्बन्धमें "अमावस्या पूर्णिमा कृता येन द्वादश योजनं यावत् चन्द्रोद्योतो जातः" लिखा है।

उपरोक्त तीनों चमत्कारिक घटनाओं सहित सूरिजी के अकबर मिलनके प्राचीन चित्र, बीकानेर ज्ञान भंडार, श्रीपूज्यजीके संग्रह, उ० जयचन्दजीका ज्ञान भंडार, यति मुकुन्दचन्द्रजीके पास, बाबू पूरणचन्द्रजी नाहरके संग्रहमें और बीकानेर दुर्गान्तर्गत 'गजमन्दिर' में पाये जाते है। वह चित्र "श्रीजिन कृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभण्डार" इन्दोर की तरफसे छप भी चुका है।

बाबू पूरणचंद्रजी नाहर M. A. B. L के यहाँ अकबर मिलन समय का सूरिजीका प्राचीन चित्र है उसमें उपरोक्त तीसरी चमत्कारिक घटनाका भाव न होकर उसके बदलेमें उस चित्रमें एक भैंसा चित्रित है जो कि श्री जिनप्रभ सूरिजीके विषयमें "कियो महिष मुखि वाद नयर विसवइ

कर चम्पत होने लगे। परन्तु सूरिजीके योग-बलसे चोर दिग्मूढ़ और अन्धे हो गए और पुस्तकें वापिस आ गई।*

इस चमत्कार पूर्ण घटनासे सब लोग सूरि-महाराजके तपोबल की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। सूरिजीके "हापाणा" विराजने से वहाँ अधिकाधिक धर्म-ध्यान होने लगे।

नरनारी।" इस चमत्कारका स्मृति सूचक भाव जाना जाता है हमारे समझ में "अम्मावसका चन्द्रोदय" और "महिष मुख वाद" का चमत्कार जिनप्रभसूरिजीसे सम्बन्ध रखनेवाला ही है। उन चमत्कारोंकी प्रसिद्धि होनेके कारण संभवतः सूरिजीके चित्रके साथ लगा दिये गये हों। उपा० जयचन्द्रजी गणिके पास जो चित्र है उसमें तो चारों ही चमत्कार सूरिजीके चित्रमें चित्रित हैं।

* विहार पत्र नं० १ में "रातइ चोर पइठा पुस्तक सर्व लेइ गया परं अन्धा थया, पुस्तक आया पाछा।"

बीकानेरके ज्ञान भण्डारकी एक पट्टावलीमें :—हापाणि ग्रामे ध्यान बलइ जियइ चोर निप्तेज कीधा।

नवां प्रकरण

सम्राट पर प्रभाव

सम्राट अकबर सूरि-महाराजके परम भक्त बन चुके थे। उनके हापाणामें चातुर्मास करनेके समय भी सम्राट उन्हे निरन्तर स्मरण किया करते थे। सूरिजीके आदेशसे परम गीतार्थ उ० श्री जयसोमजी आदिने सं० १६५० का चातुर्मास भी लाहोर ही किया *। वे बहुधा शाही दरबारमें जाया करते, सम्राट उनके साथ अनेक प्रकारकी धर्म-चर्चा करके ज्ञान प्राप्त किया करते थे। वे समय-समयपर उनसे सूरि-महाराजके सुख-शाताके संवाद पूछकर सुखी होते थे।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् सम्राटने सूरि महाराजको लाहौर पधारनेके लिए विनीत-आमन्त्रण भेजा। सम्राटके आग्रहसे सूरिजी लाहौर पधारे। सं० १६५१ का चातुर्मास भी उन्होंने वहीं

---

* जयसोमजीने इसी चातुर्मासमें विजयादशमीके दिन "कर्मचन्द्र मंत्रि वंश प्रबन्ध" नामक संस्कृत पद्य ग्रंथ रचकर पूर्ण किया था।

किया। इनके समागम से सम्राट पर अलौकिक प्रभाव पड़ा था। मेड़ता के "नवामन्दिर" के शिलालेखों* से ज्ञात होता है कि सूरिजी के उपदेश से सम्राट ने गत प्रकरण में उल्लिखित प्रति वर्ष आषाढ़ी अष्टाह्निका अमारि, खम्भातके दरियाके जलचर जीवोंकी रक्षा और युगप्रधान पद प्रदानके अतिरिक्त और भी कई महत्वपूर्ण कार्य किये थे, वे इस प्रकार हैं:—

(१) प्रतिवर्षमें सब मिलाकर छः महीनेपर्य्यन्त अपने समस्त राज्यमें जीवहिंसानिषेध।

(२) शत्रुञ्जय तीर्थका कर-मोचन।

(३) सर्वत्र गो-रक्षाका प्रचार।

जैन दर्शन के अहिंसा-तत्वका सूक्ष्म स्वरूप सूरिमहाराज ने सम्राटको भली भांति बतला दिया। जिसके प्रभावसे सम्राटका हृदय इतना कोमल और दयार्द्र हो गया × कि उन्हें जीव-हिंसाका

---

* श्री अकब्बर साहि प्रदत्त युगप्रधानपद प्रवरैः प्रतिवर्षाषाढीयाष्टाह्निकादि षाण्मसिकामारि प्रवर्त्तकैः। श्रीस्तंभ (? स्तंभ) तीर्थोदधिमीनादि जीवरक्षकैः। श्री शत्रुञ्जयादि तीर्थकरमोचकैः। सर्व्वत्र गोरक्षाकारकैः पंचनदी पीर साधकैः। युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः। आचार्य श्री जिनसिंहसूरि श्री समयराजोपाध्याय वा० हंस प्रमोद वा० समयसुन्दर वा पुण्यप्रधानादि साधुयुतैः॥

[श्री जिनविजयजी संपादित 'प्राचीन जैन लेख संग्रह' लेखाङ्क ४४३]

× सम्राट अपने दयालु विचार सूरिजीको दिये हुए फरमान पत्रमें इस प्रकार प्रकट करते हैं:—

"असल बात तो यह है कि जब परमेश्वरने आदमीके वास्ते भांति-भांतिके पदार्थ उपजाये हैं, तब वह कभी किसी जानवरको दुःख न दे और अपने पेटको पशुओंका मरघट न बनावे।"

नाम सुनना भी असह्य-सा हो गया और मांस-भक्षणके प्रति उन्हें घृणा हो गयी थी। इस बातको सम्राट जहाँगीर, अपनी 'आत्म-जीवनी' में अपने राज्यारोहणके पश्चात् प्रकाशित १२ आज्ञाओंमेंसे ११ वीं आज्ञा इस प्रकार लिखते हैं:—

"আমার জন্ম মাসে সমগ্র রাজ্যে মাংসাহার নিষিদ্ধ এবং বৎসরের মধ্যে এমন এক এক দিন নির্দিষ্ট থাকিবে যে দিন সর্ব্ব প্রকার পশু হত্যা নিষিদ্ধ। আমার রাজ্যারোহণের দিন বৃহস্পতিবার, সে দিন এবং রবিবার কেহ মাংসাহার করিতে পারিবে না। কেননা যে দিন জগৎ সৃষ্টি সম্পূর্ণ হইয়াছিল সে দিন কোন জীবের প্রাণ হরণ করা অন্যায়। ১১ বৎসের অধিক কাল আমার পিতা এই নিয়ম পালন করিয়াছেন এবং এই সময়ের মধ্যে রবিবার দিন তিনি কখনও মাংসাহার করেন নাই। সুতরাং আমার রাজ্যে আমিও এই দিনে মাংসাহার নিষিদ্ধ বলিয়া ঘোষণা করিতেছি।"

[জহাংগীরের আত্ম জীবনী by কুমুদিনী মিত্র পৃ० ১০।১১]

अर्थात्:—मेरे जन्ममासमें, सारे राज्यमें मांसाहार निषिद्ध रहेगा। वर्षमें एक-एक दिन इस प्रकारके रहेंगे, जिसमें सर्व प्रकारकी पशु-हत्याका निषेध हो। मेरे राज्याभिषेकका दिन अर्थात् बृहस्पतिवार और रविवारके दिन भी कोई मांसाहार नहीं कर सकेगा। क्योंकि संसारका सृष्टि-सर्जन सम्पूर्ण हुआ था उस दिन किसी भी जन्तुका प्राणघात करना अन्याय है। *मेरे पिताने ग्यारह वर्षोंसे अधिक समय तक इन नियमोंका पालन किया है और उस समय रविवारके दिन उन्होंने कदापि मांसाहार नहीं किया।* अतः मेरे राज्यमें मैं भी उन दिनोंमें जीवहिन्सा निषेधात्मक उद्घोषणा करता हूं।

सम्राटके जीवहिंसा निषेध करनेका सारा श्रेय जैन साधुओंके समागमका ही है, यह बात प्रसिद्ध अंग्रेज इतिहासकार श्री विंसेन्ट ए० स्मिथ अपनी पुस्तक Akbar The Great Mogal के सन् १९१७ के संस्करणके पृ० १६७ पर लिखते हैं:—

"Akbar's *action in abstaining* almost wholly from eating meat and in issuing stringent prohibitions, resembling those of Ashoka, restricting to the narrowest possible limits the destruction of animal life, certainly was taken in obedience *to the doctrines of his Jain Teachers.* The infliction of capital penalty on a human being for causing the death of an animal, was in accordance with the practice of several famous ancient and Buddhist and Jain Kings. The regulations must *have inflicted much hardship on many of* Akbar's subjects and especially on the Mahammadans."

अर्थात् अकबर का लगभग पूर्ण रूपसे मांसका परित्याग करना, एवं अशोक के समान क्षुद्र-से-क्षुद्र जीवहिन्साका निषेध करने के लिए सख्त आज्ञाओंका जारी करना, अपने जैन गुरुओं के सिद्धान्त के अनुसार आचरण करने ही के परिणाम थे। हिन्सा करनेवाले मनुष्यों को कड़ी सजा देना यह कार्य प्राचीन प्रसिद्ध बौद्ध और जैन सम्राटों ही के अनुसार था। इन आज्ञाओं से अकबरकी प्रजा मे से बहुत लोगों को और विशेष रूप से मुसलमानों को बहुत कष्ट हुआ होगा।

फिर भी डा० विसेन्ट स्मिथ अपनी पुस्तक "अकबर" के पृष्ट नम्बर ३३५ में स्पष्टतया लिखते हैं कि :—

"He cared little for flesh food, and gave up the use of it almost entirely in later year's, of his life, when he came under Jain influence."

अर्थात्—"मांसाहार पर सम्राट को बिल्कुल रुचि नहीं थी और अपने जीवन के अन्तिम भाग में तो जब से वह जैनों के समागम में आया, तभी से उसने उसको सर्वथा ही त्याग कर दिया।"

बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर M. A. B. L. M. R. A. S. महोदयके संग्रहस्थ एक गुटकेमें प्राचीन कवित्त इस प्रकार लिखा मिला है :—

आदरियो चड़ोजती ताइ अकबर, लोक हुआ सहु लवे लवे।
गढजिणि जबे कीजती गायां, जीरनके को तटे जवे ॥१॥
पति असुरां लागो आइ, पाए कवे चरणा दिसि केरि।
मंडलि तियांले सुरहे मारता, मुरगा हीटला तेथ मर ॥२॥
एहवो धरम आदरे अकबर, जिण धर्म देखी वांनड़ो जत्त।
भोजन किरला तिके गसंना, पर मंस साना लियो परत्त ॥३॥

भावार्थ—सूरिजी को वन्दनार्थ सम्राट सामने गए उनके साथ उनकी प्रजा और अनुगामी अमीर उमराव भी थे। गुरुके चरणोंमें सम्राटने दोनों हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। उनके उपदेश से सम्राट जैन धर्म का इतना आदर करने लगा कि उसके फल स्वरूप

जिस क़िल्ले में गायें कत्ल होती थी, मुर्गे, हिटले आदि जानवर मारे जाते थे अब उनका कत्ल होना बंद हो गया। इतना ही नहीं सम्राट ने मांस भक्षण, जो पहले करता था उसका त्याग कर दिया।

सम्राट जहाँगीर कथित शेष ग्यारह वर्षसे अधिक समय तक और डा० विन्सेन्ट स्मिथका अपने जीवन के अन्तिम भाग के कथन से स्पष्ट है कि सम्राट के हृदय में इतने गहरे दया-भाव के होने का प्रबल कारण जिनचन्द्रसूरिजी और उनके शिष्य श्रीजिनसिंहसूरिजी के धर्मोपदेश ही हैं। क्योंकि सं० १६६२ में अकबर का देहान्त हुआ और सं० १६४९ से अकबर को सूरिजी के सत्समागम का लाभ मिला। सूरिजी सं० १६५१ में अकबर के पास ही थे। इससे ऊपर के उभय कथनों की परिपुष्टि होती है।

इस कथनकी पुष्टि करनेवाले और भी बहुतसे प्रमाण मिलते हैं। डा० स्मिथने आगे इस प्रकार लिखा है :—

"But the Jain holy men undoubtedly gave Akbar *prolonged instruction for years*, which-largely influenced his actions and they secured his assent to their doctrines so for that he was reputed to have been converted to Jainism.

—"Jain Teachers of Akbar"

अर्थात्—मगर जैन साधुओंने वर्षों तक अकबरको उपदेश दिया था अकबरके कार्यों पर उस उपदेशका बहुत प्रभाव पड़ा था। उन्होंने अपने सिद्धान्त यहां तक मनवा दिये थे कि लोग सम्राटको जैन समझने लग गये थे। लोगोंको यह समझ केवल अनुमानसे ही

नहीं थी किन्तु उसमें वास्तविकता भी थी। कई विदेशी मुसाफिरों को भी अकबर के व्यवहारों से यह निश्चित हो गया था कि अकबर जैन सिद्धान्तों का अनुयायी था।

इसके सम्बन्ध में डा० स्मिथ अपने "अकबर" नामक ग्रन्थ में एक मार्केकी बात प्रगट करते हैं। उसने उक्त पुस्तकके २६२ वें पृष्ठमें पिनहेरो (Pinheiro) नामके एक पोर्चुगीज पादरीके पत्रके उस अंशको उद्धृत किया है जो उपर्युक्त कथनको प्रमाणित करता है। यह पत्र उसने लाहौरसे ता० ३ दिसम्बर सन् १५९५ को लिखा था, जो इस प्रकार है :—

He follows the sect of the Jains (Vertei).

अर्थात्—अकबर जैन सिद्धान्तों का अनुयायी है (उसने कई जैन सिद्धान्त भी उस पत्र मे लिखे हैं)।

इस पत्रके लेखनका समय सं० १६५२ (सन् १५९५) है। करीब उसी समय श्रीजिनचन्द्रसूरिजी महाराज, श्रीजिनसिंहसूरिजी आदि लाहोर में अकबर के पास थे। अतः अकबर को जैन-धर्मानुयायी कहलाने का श्रेय सूरिजी को ही है। क्योंकि यह प्रभाव सूरिजी के सतत धर्मोपदेश का ही है।

प्रोफेसर ईश्वरीप्रसाद अपनी पुस्तक *A short History of Muslim Rule in India* प्रथम संस्करणके पृष्ट नं० ४०६ पर लिखते हैं :—

"The Jain teachers who are said to have greatly influenced the emperor's religions out-

look were Hiravijaya Suri, Vijayasena Suri, Bha-nuchandra Upadhya-ya and Jinchandra. From 1578 onwards one or two Jain teachers always remained at the court of the Emperor. From the first he received instructions in the jain doctrine at Fatehpur and received him with great courtesy *and respect. The last (i e. Jinchandra) is reported to have converted the emperor to Jai nism........................*Yet the Jains exercised a far greater influence on his habits and made of *life than the jesuits........................The tax on* pilgrims to the Shatrunjaya hills was abolished and the holy places of the Jains were placed *under his control.* In short, Akbar's giving up of meat, the prohibition of injury to animal life were due to the influence of Jain teacher's.

अर्थात्—वे जैनगुरु जिनके विषयमें किम्वदन्ती है कि उन्होंने सम्राटके धार्मिक विचारों पर भारी प्रभाव डाला, हीरविजयसूरि, विजयसेन सूरि, भानुचन्द्र उपाध्याय और *जिनचन्द्र* थे। सन् १५७८ के पश्चात् एक या दो जैन गुरु सम्राट की राज सभा में सदैव रहा करते थे। प्रारम्भ से उसने (अर्थात् सम्राट अकबर ने) जैन सिद्धांतों की शिक्षा फतहपुर में प्राप्त की थी और जैन गुरु को वह अत्यन्त श्रद्धा एवं आदर के साथ स्वागत करता था। कहा जाता है कि जिनचन्द्र सूरिने सम्राटको जैन-धर्ममें दीक्षित कर लिया था.........
.........तिसपर भी जैन लोगोंका सम्राटके आचरण और चालढाल पर जैसुएट लोगोंकी अपेक्षा बहुत अधिक प्रभाव था...............।

शत्रुञ्जय पर्वतके यात्रियों पर का कर हटा दिया गया था और जैनों के तीर्थ-स्थान सम्राट की संरक्षता मे रखे गये थे। संक्षेप में मासाहारपरित्याग और जीव-हिंसा का विरोध जैन गुरुओं के प्रभाव के द्वारा ही हुए थे।

साहित्य महारथी श्रीमान् मोहनलाल दलीचंद देसाइ B.A. L.L.B. (Vakil High-Court, Bombay) अपनी पुस्तक "जैन साहित्य नो इतिहास पृ० ५५६में भी इसप्रकार लिखते हैं :—

"तेमज खरतर गच्छ ना जिनचन्द्रसूरि आदि ए सम्राट अकबर पर धीमे धीमे उत्तरोत्तर विशेष प्रमाण मां-प्रभाव पाड़ी तेने जीव दया ना पूरा रंगवालो कर्यो हतो तेमां किञ्चित् मात्र शक नथी ए बात नी साक्षीते बादशाहे बाहर पाड़ेला फरमानो पर थी, तेमज अबुल-फजलनी 'आइन-इ-अकबरी', बदाउनीना "अल-बदाउनि", 'अकबर नामा' वगेरे मुसलमान लेखकोए लखेला ग्रन्थोपर थी स्पष्ट जणाय छे।"

केवल अकबर पर ही नहीं, किन्तु उनके पुत्र सलीम आदि पर भी सूरिजीका प्रभाव यथेष्ट था। उनका सारा परिवार सूरि-महाराजका परम भक्त हो गया था। सम्राटके सभासद गण आदि पर भी सूरिजीका खासा प्रभाव था। जिनमे शेख अबुलफजल * आजम

* अबुलफजलका जन्म सं० १५५१ ई० (हि० स० ९५८ के मोहर्रम की छठी तारीखको) में हुआ था। सन् १५७४ में वह अकबरके दरबारमें दाखिल हुआ। धीरे २ पद वृद्धि होती गई इ० स० १६०२ में उसे पांच हजारीका मनसब मिला। सम्राट उसके शान्तस्वभाव, निष्कपटवृत्ति

खान, खानखाना अब्दुर्रहीम× एवं नवाब मुकुरबखान आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। इसका उल्लेख तत्कालीन सूरिजी की गहूंलियों में पाया जाता है†।

सं० १६१७में पाटणमें धर्मसागर नामक तपागच्छीय उपाध्याय-को ८४ गच्छ ने एकत्र होकर संघ से बहिष्कृत किया और उनके तत्व तरङ्गिणी वृत्ति* आदि ग्रंथोंको अप्रमाणिक ठहराया और असभ्य ग्रंथोंको जलशरण कर दिये गये थे। एवं धर्मसागरने उस दुष्कृत्य का सङ्घ के समक्ष "मिच्छामि दुक्कड़म्" दिया। यह सब वर्णन हम

और स्वामी-भक्ति पर विशेष स्नेह और विश्वास रखते थे। अबुलफजल अकबरका सर्वस्व था, इस कथनमें भी अतिशयोक्ति नहीं होगी।

× *खानखाना का जन्म सं० १६१३ मार्गशीर्ष शु० १४ को हुआ था* इसका पूरा नाम 'खानखानान मिर्जा अब्दुर्रहीम' था, इसके पिताका नाम बैरम खाँ था। इनके गुजरात विजय करने पर सम्राटने प्रसन्न हो कर खानखानाका खिताब दिया और पांच हजार फौजका सेनापति बनाया इसके विषयमें विशेष देखो "खानखाना-नामा" और आइन-ए-अकबरी।

† *अवलियट अकबर, ताउ अंगज, सबल शाहि सलेम।*
शेख अबुल, आजम, खानखाना, मानसिंह सुं प्रेम ॥१॥
गच्छपति गाइयइ जिनचन्द सूरि मुनि महिराण।
[*समयसुन्दर कृत जिनचन्द सू० गीत*]

* आ तत्वतरंगिणी वृत्ति नी सं० १६१७ नी लिखित प्रत पाटण ना वाडी पार्श्वनाथ भंडार डा० १९ मांछे तेमां जणाव्युं छे के आ ग्रंथ नो कर्ता सर्वगच्छ सूरिओ थी जिन शासन मां थी उत्सूत्र प्ररूपणा करवा माटे बहिष्कृत करेल धर्मसागर छे।
[जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास पृ० ५८२]

चौथे प्रकरणमें कर चुके हैं। इतना होनेपर भी सागरजीने अपनी कुटेव न छोडी, क्योंकि जिसका जैसा स्वभाव और अभ्यास हो जाता है, उसे छोड़ना असाध्य नहीं तो दुःसाध्य अवश्य ही होता है। किसी राजस्थानी कविने क्या ही अच्छा कहा है:—

"ज्यांरा पड़्या स्वभाव क जासी जीय सु

नीम न मीठा होय सींचो गुड़ घीय सुं ॥"

यह कहावत सागरजी पर पूर्णतः चरितार्थ हुई। सं० १६२९ में उन्होंने फिर "प्रवचन-परीक्षा" नामक विषैला और साहित्यमें

सुप्रसिद्ध साहित्य-सेवी विद्वान मुनि श्री विद्याविजयजी "ऐतिहासिक रास संग्रह भा० ४" में उत्सूत्र कंद-कुद्दाल ग्रंथको सं० १६८३ की लिखित प्रतिके पुष्पिका लेखसे धर्मसागरजीका बनाया हुआ न होकर सदयवच्छ श्रावक के भण्डार से संप्राप्त प्राचीन ग्रंथ है। ऐसी अपनी सम्मति प्रकट करते हैं। लेकिन दर्शनविजयजी कृत "विजयतिलकसूरि रास" आदिके वाक्योंपर विचार करने से उक्त ग्रन्थ धर्मसागरजीका ही बनाया हुआ सुनिश्चित है। सं० १६८३ की प्रशस्ति लेखकने धर्मसागरजीके पक्ष या बहकानेमें आकर ही उस ग्रन्थको प्राचीन प्रमाणित करनेका दुस्साहस किया ज्ञात होता है। और सागरजी के स्वभाव पर मनन करते हुए यह बात विशेष सम्भव पर है।

धर्मसागरजीके विषयमें विशेष जाननेके लिये देखें (१) धर्मसागर गणि रास और श्री जिनविजयजी का "महोपाध्याय धर्मसागर" नामक लेख (आत्मानन्द प्रकाश पु० १९) और उनकी उत्सूत्र-प्ररूपणाके लिए देखो तपागच्छीय कृत निम्नोक्त ग्रन्थ :—

फलस्वरूप ग्रन्थ निर्माण किया। जिसमें अनेक जैन सम्प्रदायोंका खण्डन और केवल अपनी आचरणाको सत्य बतलानेका विफल प्रयत्न किया। इस ग्रन्थके सिवाय और भी उन्होंने इसी वर्षमें "इर्यापथिकी षट्त्रिंशिका" और सं० १६२८ में "कल्प किरणावली" नामक वृत्ति बनाई। कहना न होगा कि सागरजी ने अपने स्वभावानुसार इन ग्रन्थोंको विकृत और खण्डनात्मक शैलीसे ही रचा था। अपनी विद्या के अभिमान में उन्मत्त होकर भयङ्कर असत्य आक्षेपोंके साथ असभ्य और अति कटु-वचनोंसे श्री जिनदत्त सूरिजी आदि युग-प्रधान प्रभावक महापुरुषोंके अवरणवाद गाए।

---

(१) कुमताहि विष जांगुली (२) षट्त्रिंशज्जल्प विचार (३) रत्न हितोपदेश (४) बारहबोल रास (५) सोहम कुल पट्टावली (६) कल्प सबोधिका वृत्ति (७) विजयतिलकसूरि रास (८) षट्त्रिंश मध्यस्थ जल्प विचार (९) लघुषट्त्रिंश जल्प विचार (१०) १०८ बोल सझाय (११) छत्तीस बोल बारह बोल संग्रह (पाटण) (१२) केवली स्वरूप सझाय (१३) विजयदान, विजयहीर और विजयसेनसूरिके ७-१२ और १० बोल इत्यादि।

खरतर गच्छवालों ने अपने गच्छकी आचरणाको सिद्धान्त युक्त प्रमाणित सिद्ध करते हुए धर्मसागरजी के उत्सूत्रों का खंडन रूपमें (१-२) जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर द्वय (२६-१४१ प्रश्न), (३) गुणविनयजी कृत कुमति मत खण्डन (सं० १६६५), (४) उन्हीं की ५१ बोल चौपई सवृत्ति तथा (५) लघु तपोट विचार सार (६) धर्मसागर खंडन आदि ग्रन्थ बनाए।

सागरजी का 'मिथ्या दुष्कृत' भी कल्पसूत्रवृत्तिमें कुम्भारके "मिच्छामि दुक्कड़म्" कथानकके सदृश्य ही हुआ, उनकी इस प्रवृत्तिसे जैन शासनमें द्वेषाग्निकी ज्वाला प्रज्वलित हो उठी जिसका कुफल आज भी गच्छोंके पारस्परिक वैमनस्य रुप में भोगा जा रहा है। अन्य गच्छवालोंको इससे विशेष क्षति नहीं हुई किन्तु तप-गच्छ वालोंके कितने ही विद्वानोंने उनका पक्ष लिया जिसके परिणाम स्वरूप इस गच्छकी संगठन शक्ति बहुत क्षीयमान हो गई और आपसी द्वेष इतना अधिक वृद्धिगत हुआ जिससे 'आणन्द सूर' और 'देव सूर' के नामसे सदाके लिये गच्छ-भेद हो गया।

हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने सम्राट के सामने उपस्थित विद्वन् मंडली में उपरोक्त प्रवचन-परीक्षादि ग्रन्थों की निःसारता और असभ्यता को सिद्ध किया विद्वानों ने भी उसे अप्रमाणित और अमान्य प्रमाणित किया †।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् सूरिजी ने लाहोरसे विहार किया। उस समय उनके साथ वहुतसा संघ था। उसके साथ सूरि-

---

† वितथतया श्रीशाहिराज समक्षं निराकृत (दूरीकृत) कुमति कृतोत्सूत्राय कुवचनमय (असभ्य संदानमय) प्रवचन परीक्षादि व्याख्यान विचारैः। [सं० १६६२ में प्रतिष्ठित श्रीबीकानेर, ऋषभदेवजीकी प्रतिमापर लेख]

महाराजने गुरु-मुकुट× स्थानमें मंत्रीश्वरकर्मचन्द्रके बनवाए हुए श्रीजिनकुशलसूरिजी के स्थानकी यात्रा की जिसका उल्लेख रत्ननिधानजी कृत 'जिनकुशल सूरि स्तवन' में इस प्रकार है :—

मतिसागर धर्मचन्द्र मंत्रीश्वर मगिण जन दुख काटइं ।
थिरथानक गुरु पगला थापी महिमण्डलि जस साटइं ॥ ३ ॥
युगप्रधान जिनचंन्द्र महामुनि जिनमाणिक सूरि पाटइ ।
श्री लाहोर सकल संघ सेती जातरा करत सुहु घाटइ ॥४॥

वहांसे ग्रामानुग्राम विचरते हुए सूरि-महाराज हापाणइ पधारे। वहांके संघके विशेष आग्रहसे उन्होंने सं० १६५२ का चतुर्मास हापाणइ किया। सूरीश्वरके विराजनेसे धर्म-जागृति एवं प्रभावना-उन्नति अच्छी हुई।

× यह गुरु-मुकुट स्थान लाहौरके समीप ही विद्यमान है दादाजी के चरणोंके लेखके विषयमें श्रीमान् प्रो० बनारसीदास जैन एम० ए० से ज्ञात हुआ कि वे अक्षर घिस जानेके कारण पढ़े नहीं जाते।

सागरजी का 'मिथ्या दुष्कृत' भी कल्पसूत्रवृत्तिमें कुम्भारके "मिच्छामि दुक्कडम्" कथानकके सदृश्य ही हुआ, उनकी इस प्रवृत्तिसे जैन शासनमें द्वेषाग्निकी ज्वाला प्रज्वलित हो उठी जिसका कुफल आज भी गच्छोंके पारस्परिक वैमनस्य रुप में भोगा जा रहा है। अन्य गच्छवालोंको इससे विशेष क्षति नहीं हुई किन्तु तप-गच्छ वालोंके कितने ही विद्वानोंने उनका पक्ष लिया जिसके परिणाम स्वरूप इस गच्छकी संगठन शक्ति बहुत क्षीयमान हो गई और आपसी द्वेष इतना अधिक वृद्धिगत हुआ जिससे 'आणन्द सूर' और 'देव सूर' के नामसे सदाके लिये गच्छ-भेद हो गया।

हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने सम्राट के सामने उपस्थित विद्वन् मंडली में उपरोक्त प्रवचन-परीक्षादि ग्रन्थों की निःसारता और असभ्यता को सिद्ध किया विद्वानों ने भी उसे अप्रमाणित और अमान्य प्रमाणित किया †।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् सूरिजी ने लाहोरसे विहार किया। उस समय उनके साथ बहुतसा संघ था। उसके साथ सूरि-

† *वितथतया श्रीशाहिराज समक्षं निराकृत (दूरीकृत) कुमति कृतोत्सूत्र* प्राय कुवचनमय (असभ्य संशनमय) प्रवचन परीक्षादि व्याख्यान विचारै.।
[सं० १६६२ में प्रतिष्ठित श्रीबीकानेर, ऋषभदेवजीकी प्रतिमापर लेख]

"वली तपाए घणीवार पोथी नइ सामल्इ पातस्या अकबर हजूरि पोथी खोटी करी जय पामया।"

(जिनकृपाचन्द्रसूरिज्ञान-भण्डार पट्टावली)

महाराजने गुरु-मुकुट× स्थानमें मंत्रीश्वरकर्मचन्द्रके बनवाए हुए श्रीजिनकुशलसूरिजी के स्थानकी यात्रा की जिसका उल्लेख रत्ननिधानजी कृत 'जिनकुशल सूरि स्तवन' में इस प्रकार है :—

मतिसागर कर्मचन्द्र मंत्रीश्वर मगिण जन दुख काटई ।
थिरथानक गुरु पगला थापी महिमण्डलि जस साटई ॥ ३ ॥
युगप्रधान जिनचंद्र महामुनि जिनमाणिक सूरि पाटइ ।
श्री लाहोर सकल संघ सेती जातरा करत सुहु घाटइ ॥४॥

वहांसे ग्रामानुग्राम विचरते हुए सूरि-महाराज हापाणइ पधारे। वहांके संघके विशेष आग्रहसे उन्होंने सं० १६५२ का चतुर्मास हापाणइ किया। सूरीश्वरके विराजनेसे धर्म-जागृति एवं प्रभावना-उन्नति अच्छी हुई।

× यह गुरु-मुकुट स्थान लाहौरके समीप ही विद्यमान है दादाजी के चरणोंके लेखके विषयमें श्रीमान् प्रो० बनारसीदास जैन एम० ए० से ज्ञात हुआ कि ये अक्षर घिस जानेके कारण पढ़े नहीं जाते।

दसवां-प्रकरण

पंच-नदी साधना और प्रतिष्ठाएं

होरमे सम्राट ने श्रीजिनदत्तसूरिजी के चरित्र को श्रवण करते हुए पंच नदी के पीरोंके साधन प्रसगसे विशेष चमत्कृत हो सूरिजीको भी साधन करनेके लिये विनती की थी। सम्राटके कथन* एव सघकी उन्नति के हेतु सूरिजी ने पंच नदी साधन करनेका विचार किया । उस प्रसगको विशेप अनुकूलता प्राप्तकर आपने वहासे विहार किया। ग्रामानुग्राम मे धर्म प्रभावना करते हुए सघ के साथ मुलतान पधारे

---

* पाटणके श्री वाडी पार्श्वनाथ मन्दिरके शिलालेख (स० १६५३) में इस प्रकार लिखा है।

श्री जिनमाणिक्यसूरि तत्पट्टालङ्कार सार दुर्व्वार वादि विजयलक्ष्मी शरण पूर्व क्रिया समुद्धरण स्थान स्थान प्राप्त जय प्रतिदिन वर्द्धमानोदय उदय सदय त्रिभुवन जन वशीकरण प्रवण प्रणव ध्यानोपशोभित पवित्र सूरि मत्र विहित भव दूरि कृत सकल वादिदम्भय निज पाद विहार पाविता वनितल अनुक्रमेण सवत् १६४८ श्री स्तम्भ तीर्थ चतुर्मासक स्थान समुद्भूता मित महिम श्रवण दर्शनोत्कण्ठित जलालुद्दीन प्रभु पातिसाहि श्रीमदकब्बर

सूरिजीका आवागमन सुनकर नगरके सारे लोग जिनमें खान, मल्लिक और सेठ आदि भी आये थे। सूरिजीके दर्शनसे हर्षित होकर खूब धूमधामसे उनका नगर प्रवेशोत्सव किया गया। धर्म प्रभावना करते हुए सूरिजी वहांसे पंच नदीके तटपर चन्द्रवेलि पत्तन में पधारे। इस प्रवासमें सूरिजीको सम्राटकी आज्ञा से सर्वत्र अनुकूलता रही। स्थान-स्थानपर आपको आदर, सन्मान मिला। अभयदानादि धर्म-तत्वोंका अच्छा प्रचार हुआ ×। सिन्धु देश और पंजाब प्रान्तमें आपकी प्रशस्त कीर्ति फैली एवं जैन धर्म की उन्नति और महती वृद्धि हुई।

समाकारण मिलन स्वगुण गण तन्मनोनुरञ्जन समासादित सकल भूतलाखिल जन्तु सुखकारि आषाढ़ाष्टाह्निकामारि फुरमान श्री स्तम्भ तीर्थं समुद्र मीन रक्षण फुरमाण तत्प्रदत्त श्री सत्तम युग-प्रधान पद धारक तद्वचनेन च नयन सर रस रमा मित (१६५२) संवति माघ सित द्वादशी शुभ तिथौ अपूर्व पूर्व गुर्व्वाम्नाय साधित पंच नदी प्रगटी कृत ५ख पीर प्राप्त पाम वरत दादि। विशेष श्री संघोन्नतिकारक विजयमान गुरु युगप्रधान श्री १०८ श्रीजिनचन्द्रसूरीश्वराणां················।

हमें इस शिलालेखका फोटू खरतरगच्छनायक श्रीजिनकृपाचन्द्र सूरिजीके विद्वान शिष्य प्रवर्त्तक मुनिराज श्री सुखसागरजी से मिला और इसकी नकलें गणाधीश श्री हरिसागरजी और विद्वद मुनिवर्य्य श्री रत्न मुनिजीसे प्राप्त हुई है।

हुकमि श्री साहि नइ पंच नदी साधि नइ, उदय कियो संघ नौ सवायो।
संघपति सोमजी घणो मुझ वीनति, सोय जिणचंद गुरु आज आयो॥
[लब्धिकल्लोल कृत गहूंली]

× ठामि ठामि हुकम श्री साहि नैं, कहतां धर्म विचार।
अभयदान महियलि वरतावतां, संघ उदय जयकार॥५॥
[पद्मराज कृत पंच नदी साधन-गीत]

सं० १६५२ माघ शु० १२ रविवार पुष्प नक्षत्रके दिन शुभ मुहूर्त में आयम्बिल और अष्टम तप पूर्वक निश्चल ध्यानके साथ नौकामें बैठकर पंच नदियोंके संगम स्थानमें पधारे वहांपर पाचों नदियें अपने तीव्र वेगसे प्रवाहित होती हुई आ मिली थीं* । वहा सूरिजीके निश्चल ध्यानसे नौका स्थम्भित हो गई। आपश्री परमपवित्र देवाधिष्टित सूरि-मंत्र का ध्यान करने लगे। आपके निर्मल ध्यान एवं शील तपादि सद्गुणोंसे आकृष्ट हो, माणिभद्रादि यक्ष, पंच नदीके पाच पीर, खोड़ियादि क्षेत्रपाल आपकी सेवामें उपस्थित हुए, और धर्मोन्नतिमें सहाय्य करने का वचन दिया।

---

* पंच नदी पांचे पीर साध्या, खोड़िया क्षेत्रपाल ।

जल घहे जेय अगाध, प्रवहण थंभिया तत्काल ॥

[समयसुन्दर कृत जिनचन्द्र: गीत]

पंच नदी साधनेकी विधिकी तत्कालीन लिखी हुई प्रति (प० ३) बीकानेर में श्रीपूज्यजी श्रीजिनचरित्रसूरिजी के संग्रह में है, उसकी नकल हमारे पास है उसमें पांच पीरों के नाम इस प्रकार लिखे हैं :—

(१) खदिर (२) कान्हू (३) छंजा (४) सोमराज (५) हंज। ये पीर क्रमश इन नदियोंके अधिष्ठाता हैं :—

१ विहत्थ (झेलम), २ राव्य (रावी), ३ चिन्नाह (चिनाव), ४ व्याह (व्यास) ५ सिन्ध ।

इन पांचों के सिवाय बीबीरालनी और माणिभद्र यक्ष खोड़िया क्षेत्रपाल को भी साधा जाता है ।

सूरि महाराजका पंच नदी साधते हुए भावका सुन्दर चित्र बाबू पूरणचन्दजी नाहर के संग्रह में है ।

सूरिजी पंच नदी (के अधिष्ठाता देवोंका) साधन× करके प्रातः-काल पत्तनमें पधारे। वाजित्र बजने लगे, नगरमें अपार आनन्द छा गया। भक्त श्रावकोंने याचकों को मुंह मांगा दान दिया। घोरवाड कुलोत्पन्न शाह नानिगके सुपुत्र राजपाल ने अपने द्रव्यका सदुपयोग कर, सुयश प्राप्त किया। सूरिजी वहां से उच्चनगर आए। वहां शांतिदायक सोलहवें तीर्थङ्कर श्री शांतिनाथजी के दर्शन, वन्दन करके "देरावर" पधारे। प्रकट प्रभावी दादा साहेब श्री जिनकुशलसूरिजी के स्वर्गस्थान में चमत्कारि गुरु चरणों के दर्शन किए।

× पंचनदी की साधना संघ की समुन्नतिके लिये श्रीजिनदत्तसूरिजी ने सर्व प्रथम की थी। उनके पश्चात् जिनसमुद्रसूरिजी और जिनमाणिक्य सूरिजी के साधन करने का उल्लेख पट्टावलियोंमें मिलता है। पंच नदी साधना के विषय में श्रीजिनविजयजी सम्पादित 'खरतरगच्छपट्टावली संग्रह' (पट्टावली नं० ३) में कुछ विशेष ज्ञातव्य मिलता है। यद्यपि इस साधनामें अप्पकाय के जीवों की विराधना का प्रश्न है तथापि कारणवश नदी पार करने की जिनागमों में आज्ञा है। इस प्रश्न का विशेष स्पष्टीकरण उ० जयसोमजी ने अपने 'प्रश्नोत्तर ग्रन्थ' के प्रश्न नं० १३९ के उत्तर में इस प्रकार किया है:—

"जे खरतर गच्छि पंचनदी साधै छै वली क्षेत्रपाल योगिनी नदी प्रमुख धर्मार्थी नइ साधवा नथी कहा ते पिण साधै छै वली इहां घणी जीव विराधना था(य)इ छै ते स्युं ? तत्रार्थ—श्रीसंघ नइ समाधान निमित्ति श्रीयुगप्रधान श्रीजिनदत्तसूरिजी ए ५ नदीयां ना देवता सूरि-मंत्र नइ गुणणे तथा तप संयमइ संतोष्या हुता देवताइ पिण सन्तुष्ट थए थके वाचा लीधी हुती जे इणइ देश मांहि तुमारा गच्छनायक आवें ते इहां ५ नदी नइ एक-

वहाँसे विहार करके जैसलमेर आते हुए सूरिजीने मार्गमें अपने गुरु श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के निर्वाण-स्थान पर उनके सुन्दर स्तूप का दर्शन किया। और नवहरपुर में पार्श्वनाथजी की यात्रा

छइ मेल थए सूरि मंत्र जाप करै, अम्है पिण संघ ना विघ्न वारीस्यां एतलै वर दीधै थके श्रावक श्राविकाए पुणि तेह देवता ने बलि बाकुल नी पूजा साहम्मी भगी कीधी एतलै मेलि संघ नइ कार्ये आज पिण ५ नदी साधै छै ए-चालि छै तथा ठाणांग सूत्र मांहि पांचमें ठाणै पंच महानदी नउ कारणे "उत्तरि-त्तएवा संतरित्तएवा" इत्यादि पाठ जोज्यौ जे ऊतरतां पिण जीव विराधना थातां इरियावही प्रमुख पड़िक्कमे एवं विचारिज्यौ तथा श्रुत देवता, क्षेत्र देवता, भुवनदेवता ना काउसग्ग पड़िकमणा मांहि करी शुद्ध प्रमुख कहै छै ते विमासिज्यौ दृष्टिराग छोड़ेज्यो। वलि इम लोक कहावत सांभली छइ जे ऋषीमती हीरविजयसूरि, गच्छ नइ उदय निमत्त उच्छिष्ट चण्डालिनी देवता महलै प्रकारि साधवी मांडी हवी पण किणहीक मेलि न सधाणी किंतु कोपित थइ, पछी यति शत २ तथा २५० यती ना यान दीधा पछै वली फेरी साधी गच्छ प्रतिष्ठा पिण थइ इहां जूठ साच केवली जांणे वली धाणधार देशें मगरवाड़ गाम पाल्हणपुर ने पासि माणिभद्र नामें लोक प्रसिद्ध सिद्ध-क्षेत्रपाल छै सिंदूर तेल तिलवटीइं पूजाइ छै तिहां लहुड़ी पोसाल नां तपा आचार्य पद स्थापना नइ अधिकारि सवा मण गुल पापडी करी पूजी पछ रात्रि गुणणा करी तेहनइ आराधै छै पातिसाह पास जातां ऋषमती हीर-विजयसूरिइं पिण तेतली विधि गुल पापड़ी करावी पाल्हणपुर ना श्रावकां पासें पूजा करावी गुणणा करी श्रीजीपातिसाह पास गया, समहता थया ए वात सर्व लोक जांगे छै पाल्हणपुर ना लोक नें पूछी चौकस करिज्यो इम श्री मगरवड़ि यक्ष आराधतां मिथ्यात न थाइ एवं विमासिज्यो।

करके मिती फाल्गुन शुक्ला २ के दिन जैसलमेर पधारे। वहां के संघ को हर्ष का पारावार न रहा। सं० १६३६ के पश्चात् पूज्यश्री का जैसलमेर पधारना नहीं हुआ था, इससे लोगों के हृदयमें गुरु-दर्शन की अधिकाधिक अभिलाषा थी। वहां के रावल भीमजी × और

× ये रावल हरराजजी के पुत्र थे। इनका राज्यकाल सं० १६९० से १६६३ तक है। इनका कुछ परिचय पृ० २४ में लिख चुके हैं। ये सूरिजी के अनन्य भक्त थे जैसा कि वा० समयसुन्दरजी कहते हैं :—

रायसिंह राजा भीम राउल, सूर नय (इ) खरसान।
वड़ा वड़ा महीपति वयण मानइ, दियै आदरमान॥ गच्छपति०॥

इनके विषयमें वा० गुणविनयजी भी अपने जिनचन्द्र सूरि गहूंली में लिखते हैं :—

"राउल श्री भीम इम कहइ जी, यादव वंश वदीत रे।
पधारो जैसलमेर नइ जी, प्रीति धरी निज चित्त रे॥ १॥

ये जैन साधुओं का खूब आदर करते थे। वा० समयसुन्दरजी ने इन्हें उपदेश देकर इनके राज्यमें मयणों (मीना-जंगली जाति) द्वारा मारे जाते हुए सांड़ोंको छुड़ाया :—

जीव दया जश लीध; राउल रंजी हो भीम जेशल गिरी।
करणी उत्तम कीध, सांडा छोड़ाया हो देश में मारता॥ ३ ७
[राजसोमजी कृत, महो० समयसुन्दरजी गीत]
सांडा छोड़ाया मयणे मारता थी, राउल भीम हजूर॥ समय०॥
[हर्षनन्दन वादी कृत, समयसुन्दर गीत]

वा० राजसमुद्रजी (श्रीजिनराज सूरि) ने रावलजी की सभामें तपा-गच्छवालों को शास्त्रार्थ में परास्त किया था। जिसका उल्लेख श्रीसार कृत 'जिनराजसूरि रास' में है :—

"जैसलमेर दुरंग गढि, राउल भीम हजूरि।
वादइ तपा हराविया, विद्या प्रबल पडूरि॥

संघ ने सूरि-महाराज का प्रवेशोत्सव खूब धूमधाम से किया। संघ और रावलजी के विशेष आग्रह होने के कारण उन्होंने सं० १६५५ का चातुर्मास जैसलमेर में किया *।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् शीघ्र ही प्राग्वाट ज्ञातीय जोगी शाहके पुत्ररत्न संघपति सोमजी के नव्य-निर्मित जिनालय की प्रतिष्ठा के हेतु विनती आने के कारण सूरि महाराज जैसलमेर से विहार कर ग्रामानुग्राम विचरते हुए अहमदाबाद पधारे। वहाँ मिती माघ शुक्ला १० सोमवारको श्री आदिनाथजी आदि तीर्थंकरों के अनेक बिम्बोंकी प्रतिष्ठा की ×। आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिजी उ० श्री समयराज उ० रत्ननिधान आदि अनेक विद्वान मुनि आपश्री के साथ में थे =। संघपति सोमजी, शिवाजी ने बहुत सा द्रव्य व्यय किया था, पर पट्टावलीमें इस प्रसंगपर ३६०००) रुपया व्यय करनेका लिखा है। उ० रत्ननिधानजी अपनी जिनचन्द्रसूरि गहूंलीमें इस प्रकार लिखते हैं —

---

* सूरिजी के पंच-नदी साधन समयसे यहां तक का सारा वर्णन श्री० पद्मराजजी कृत "पंच नदी साधन (जिनचन्द्र सूरि) गीत" गा० १९ से किया गया है।

× इसी समय सूरिजी की प्रतिष्ठित श्रीशान्तिनाथजी की धातु-प्रतिमा जयपुर के श्री सुमतिनाथजी के मन्दिर में है जिसका लेख बाबू पूरणचन्द्रजी नाहरके सम्पादित "जैन लेख संग्रह" के लेखाङ्क ११९६ में छप चुका है।

= गणाधीश श्री० हरिसागरजी महाराज द्वारा सोमजी शिवा के मंदिर के लेख प्राप्त हुए हैं,उनमें इन मुनियोंका सूरिजीके साथ होनेका उल्लेख है।

राजनगर प्रतिष्ठा करी, सबल मण्डाण गुरुराइ रे।
संघवी सोमजी लाछिउ, लाह लियइ तिणठाई रे ॥११॥

सूरिजी ने सं० १६५४ का चातुर्मास अहमदाबाद में ही किया। उसके पश्चात् ग्रामानुग्राम विचरते हुए खम्भात पधारे, सं० १६५५ का चातुर्मास वहीं किया। विहार पत्र नं० १ में "*श्रीराजाजी ना तेड़ाव्या*" लिखा है। किन्तु प्रमाणाभावसे किस भक्त नृपति का आमन्त्रण था, यह नहीं कहा जा सकता।

खम्भात से विहार करके सूरीश्वर अहमदाबाद पधारे। संवत् १६५६ का चातुर्मास वहीं किया। सम्राट अकबर उस समय बरहानपुर आये हुए थे, उन्होंने सूरिजी को स्मरण किया, पश्चात् ईडर आदि ग्रामों में बहुत सी धर्मोन्नति करते हुए राजनगर पधारे। यहां पर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजी का देहान्त हुआ इस से सारे संघ में शोक छा गया। क्योंकि मन्त्रीश्वर सत्तरहवीं शताब्दिके एक उज्ज्वल रत्न थे। वे जैन शासन और देशकी सेवा और उन्नति करने में अग्रगण्य थे।

इन बातोंका उल्लेख विहारपत्र नं० १ में इस प्रकार है :—

"तत्र बरहानपुरि श्रीजीये चीतार्या पछइ ईडर प्रमुख गामे थइ घणा लाभ लेइ राजनगरि आव्या, अत्र श्रीकर्मचन्द्र मंत्री परोक्ष थया।"

मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रकी मृत्युका संवत् साहित्य संसार में अज्ञात है। इससे उनके सम्बन्धमें अनेक भ्रमात्मक किम्वदन्तियां प्रचलित

हैं, विहार-पत्र के द्वारा इस महत्वपूर्ण संवत् के निर्णय के साथ-साथ अनेक भ्रम निवारण हो जाते हैं। इस विषय में विशेष ऊहापोह मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रके जीवन-परिचयमें की जायगी।

श्रीसुन्दर कवि कृत "विमलाचल स्तवन" गा० ६ से ज्ञात होता है कि इसी वर्ष में माधव शुक्ला २ को संघ के साथ सूरि-महाराज ने गिरिराज विमलाचल की यात्रा की थी ×।

सूरीश्वर ने सं० १६५७ का चातुर्मास पाटणमें किया। वहां पर अनेक धर्म-कृत्य हुए। चातुर्मासके अनन्तर सूरिजी सीरोही पधारे, वहां के नरेश महाराव-सुरतान सूरिजीके परम भक्त थे उन्होंने तथा संघ ने आपकी अच्छी भक्ति की। मिती माघ शुक्ला १० के दिन सीरोही में प्रतिष्ठित अष्टदल कमलाकार श्रीपार्श्वनाथप्रभु की धातु मूर्ति बीकानेरके श्री चन्द्रप्रभ स्वामी के मन्दिरमें है, उसका लेख इस प्रकार है —

सं० १६५७ वर्षे माघ सुदि दसमी दिने श्री सीरोही नगरे राजाधिराज श्री सुरतान विजय राज्ये ऊपकेश वंशे बोहित्थराय गोत्रे विक्रमपुर वास्तव्य म० दस्सू पौत्र मं० खेतसी पुत्र मं० रूदाकेन सपरिकरेण कमलाकार देव गृह मण्डित पार्श्वनाथ बिम्बं कारित प्रतिष्ठित च श्रीबृहत् खरतरगच्छाधिप श्री जिनमाणिक्य सूरि पट्टालंकार दिल्लीपति ....

× सोल छप्पन माधव सुदि बीजइ, संघ सहित परिवार।
युगप्रधान जिनचन्द्र जुहारिया, श्रीसुन्दर सुखकार ॥ ९ ॥

····· ·······················वाचक साधु संयुतैः पूज्यमानं वंद्यमानं चिरंनंदतु। लि० उ० समयराजैः *।

यहांसे विहार करके सूरि-महाराज खम्भात पधारे सं० १६५८ का चातुर्मास वहाँ किया। इसके पश्चात् सं० १६५६ का चातुर्मास अहमदाबाद किया। वहां से विहार कर के पाटण पधारे।

सं० १६६० में पाटण चौमासा करके ग्रामानुग्राम विहार करते हुए महेवा पधारे। सं० १६६१ का चौमासा वहां हुआ। श्रीनाकोड़ा पार्श्वनाथजी की यात्रा की एवं बहुत से धर्मकार्य हुए। कांकरिया गोत्र का कम्मा श्रेष्ठि वहां आपका भक्त श्रावक था उसने वहां सूरिजी के कर-कमलों से प्रतिष्ठा कराई §।

---

* सूरिजी के प्रतिष्ठित अष्ट दल कमलाकार जिन प्रतिमाएं बीकानेर के और भी कई मन्दिरोंमें है। इस कमलाकार देव गृह की ८ पंखड़ियोंमें दो नहीं मिलने के कारण इस लेख का मध्यभाग असम्पूर्ण रह गया है।

§ विहार पत्र नं० १ में 'कां० कम्मइ प्रतिष्ठा करावी' लिखा है। इसके साथ और भी कई जिन बिम्बोंकी प्रतिष्ठा हुई थी जिनमें से एक मूर्ति बीकानेरस्थ कोचरोंकी गुवाड़ के आदिनाथ मन्दिर में है, जिसका लेख इस प्रकार है :—

"सं० १६६१ वर्षे मार्गशीर्ष मासे प्रथम पक्षे पंचमी वासरे गुरुवारे ऊकेश वंश बहुरा गोत्रे शाह अमरसी पुत्र साह राम पुत्ररत्न············ ···············रेण श्री शान्तिनाथ बिंबकारितं श्रीवृह···············सूरि युग-प्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः।

भरुच के मुनिसुव्रत जिनालय में इसी मिती की प्रतिष्ठित विमलनाथ प्रभु की प्रतिमा है। जिसका लेख जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भा० २ में छपा है।

सं० १६३८ के बाद सूरिजीका बीकानेर चातुर्मास नहीं हुआ था, इससे बीकानेर का संघ उन के दर्शनों के लिये उत्कंठित था, सूरिजी को अपने निकटवर्ती आये जानकर अत्यन्त हर्ष के साथ वहां पधारनेके लिये "वीनति पत्र" लेकर संघके मुख्य भक्त-श्रावकगण महेवा गये। अति आग्रह-पूर्वक बीकानेर चतुर्मास करने के लिये प्रार्थना की। संघकी अतीव भक्ति एवं आग्रहके वशीभूत हो कर आप बीकानेर पधारे। आपके शुभागमनसे वहां के महाराजा रायसिंहजी और श्रीसंघने हर्षान्वित होकर आपका नगर प्रवेश खूब समारोह के साथ कराया। बहुत वर्षोंके पश्चात् आनेके कारण संघमें प्रचुर भक्ति और धर्म-परायणता का स्रोत बहने लगा। चातुर्मास में धर्म प्रभावना खूब अच्छी हुई।

खरतर संघ ने नाहटोंकी गुवाड़ मे श्रीशत्रुञ्जयावतार श्रीऋषभ जिनालयका निर्माण कराया। जिसकी प्रतिष्ठा सं० १६६२ चैत्र कृष्णा ७ के दिन सूरिजीने सविधि सम्पन्न की। उस समय पाषाण की ४० जिन मूर्तियों की प्रतिष्ठा की ×, जिनमें से अधिकांश मूर्तियें वहां अद्यावधि विद्यमान है। कई मूर्तियें अन्यत्र भी पाई जाती हैं जिनमें तीन मूर्तियें श्रीसुपार्श्वनाथजी के मन्दिर में और एक मूर्ति बोरोंसेरीके उपाश्रयस्थ देहरासरमें मूलनायक रूपमें विराजमान है।

× अड़सठ अंगुल प्रतिमा बड़ी, उज्वल दल आरासे घडी।
झिगमिग ज्योतितणो विस्तार, जय जय शत्रुंजय अवतार ॥२॥

*　　*　　*　　*

दोइ रस शशि मित वरसैरे, चेत वदी सातम दिवसैरे।
युगवर श्रीजिनचन्द यतीशैरे, प्रतिष्ठा कीधी जगीशैरे ॥५॥

इस प्रतिष्ठाके समय सूरिजीके साथ उनके शिष्य आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिजी उ० श्रीसमयराजजी उ० रत्ननिधानजी वाचक पुण्यप्रधानजी आदि थे। * पाषाण प्रतिमाओं के अतिरिक्त इसी समयकी प्रतिष्ठित कई अष्टदल कमलाकार मूर्तियें भी मिलती हैं जिनमें से १ आदिनाथजी के मन्दिर मे और कइ अन्य मन्दिरों मे भी देखो गई हैं।

इसके पहिले सं० १६६२ मिती वैसाख वदी ११ के दिन प्रतिष्ठित धातु मूर्ति भी श्रीसुपार्श्वनाथजी के मन्दिर मे है जिनका लेख इस प्रकार है :—

वलि श्रावक श्राविकारो रे, प्रतिमा चालीश विचारीरे।
उच्छव करि इहां वित्त वावइ रे, निज ऋद्धि तणो फल भावइरे ॥६॥
(सं० १६६४ पोष सुदी ९ सुमतिकल्लोल कृत ऋषभस्तवन)

"संवत सोल बासठि समइ, चैत्र सातमि वदि जेहो जी।
युगप्रधान जिनचन्द्रजी बिम्बप्रतिष्ठ्या एहो जी ॥८॥
मूलनायक प्रतिमा नमूं, आदीसर निसदीसो जी।
सुन्दर रूप सुहामणउ, बीजा वलि च्यालीसो जी ॥९ श्री॥
(समयसुन्दर कृत स्तवन गा-११)

* इन सबका नाम बीकानेरके श्री ऋषभदेवजीके मन्दिर के लेखों में पाया जाता है। ये सब लेख हमारे संग्रह में हैं। मूलनायकजी का लेख विस्तृत होनेके कारण यहां नहीं दिया। बीकानेरके समस्त लेखोंको भविष्यमें पुस्तकाकार प्रकाशित करनेकी हमारी शुभाकांक्षा है।

दे पुनरत्न सा०वन्नाकेन वल्हादे पुत्र नथमल कपूरचन्द्र प्रमुख परिवार सश्रीकेन श्री श्रेयास बिंबंकारितं प्रतिष्ठितं च श्रीवृहत्खरतर गच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालंकार हार श्रीशाहि प्रतिबोधक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः पूज्यमानं चिरं नंदतु ॥ श्रेय. ॥"

मिती वैसाख सुदि ७ के अनन्तर विहार करके लवेरा पधारे, सं० १६६४ का चातुर्मास वहांपर हुआ। जोधपुर से राजा सूरसिंहजी वंदनार्थ आये वे सूरिजी से धर्मगोष्टि करके हर्षित हुए और युगप्रधान गुरुवर्य का सन्मान बढाने के लिये अपने राज्य में सूरिजी को सर्वत्र वाजित्र बजाते हुए श्रावक लोगों के ले जाने मे कोई बाधा न दे, इसलिये परवाना लिखकर दिया, जिसकी नकल इसी पुस्तक के परिशिष्ट में छपी है। ये महाराजा सूरसिंहजी सूरिजी के प्रसिद्ध भक्त थे, जिसका नामोल्लेख समयसुन्दरजी अपने (अपूर्ण) आलिजा गीत मे इस प्रकार करते हैं :—

---

* ये सं० १६९२ के श्रावण महीने में लाहोर में अपने पिता उदयसिंह के उत्तराधिकारी हुए। माघ शुक्ल ९ जोधपुर में राज्याभिषेक हुआ। इन्हें सम्राट ने दो हजारी जात और सवासात हजारों का मनसब दिया। ये बडे वीर, दानी और नीतिचतुर विद्वान थे एक ही दिन में इन्होंने चार कविओं को १ लाख का दान दिया था। सं० १६७० में इनका स्वर्गवास हुआ।

× एक पट्टावली में सं० १६६८ माघ शुक्ला में तीर्थाधिराज श्रीशत्रुञ्जय पर नव्य जिन प्रासाद में सूरिजी के करकमलों से अर्हत् बिम्बों की प्रतिष्ठा कराने का उल्लेख इसप्रकार है :—

"सं० १६६२ वर्षे वैसाख वदी ११ शुक्रे उ० जातीय शिवराज सुत पासा भा० सादिक सुत कुंवरसी भा०............दि सपरिवारैः श्रीमुनिसुव्रत बिम्बं का० प्र० श्रीवृहत्..............श्रीजिनचन्द्र"

सूरिजीने सं० १६६३ का चातुर्मास भी लाभ जानकर बीकानेर में ही किया विहारपत्र मे "तत्र प्रतिष्ठा" लिखा है। सम्भव है कि डागोंकी गुवाड़वाले श्रीमहावीर स्वामी के मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई हो किन्तु वहा कोई शिलालेखादि न मिलने से हम निश्चय-पूर्वक नहीं कह सकते। इसी मन्दिर में सं० १६६४ मिती वैसाख सुदी ७ को प्रतिष्ठित धातु प्रतिमा है, जिसका लेख इस प्रकार है।

"सं० १६६४ वर्षे वैसाख सुदि ७ गुरुवारे राजा श्रीरायसिंह विजयराज्ये श्रीविक्रमनगर वास्तव्य श्रीओसवाल ज्ञातीय बोहित्थर गोत्रीय सा० वणवीर भार्या वीरमदे पुत्र हीरा भार्या हीरादे पुत्र पास भार्या पाटम दे पुत्र तिलोकसी भार्या तारा दे पुत्ररत्न लखमसी केन अपर मातृ रंगा दे पुत्र चोला सपरिवार सश्रीकेन श्रीकुंथुनाथ बिम्बं कारितं प्रतिष्ठितं च श्रीवृहत्खरतरगच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्य सूरि पट्टालंकार युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः पूज्यमान चिरं नंदतु ॥ कल्याण मस्तु ॥"

'श्रीचिन्तामणिजी' मन्दिर के गुप्त-भंडार में भी इसी दिन की प्रतिष्ठित धातु मूर्ति है, जिसका लेख यह है :—

"सं० १६६४ प्रमिते वैसाख सुदि ७ गुरु पुष्ये राजा श्रीरायसिंह जी विजय राज्ये श्री विक्रम नगर वास्तव्य श्री ओसवाल ज्ञातीय गोलच्छा गोत्रीय सा०रूपा भार्या रूपा दे पुत्र मिन्ना भार्या माणक

दे पुत्ररत्न सा०वन्नाकेन वन्हादे पुत्र नथमल कपूरचन्द्र प्रमुख परिवार सश्रीकेन श्री श्रेयास विंबकारित प्रतिष्ठितं च श्रीवृहत्खरतर गच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालंकार हार श्रीशाहि प्रतिबोधक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभि पूज्यमान चिर नदतु ॥ श्रेय ॥"

मिती वैसाख सुदि ७ के अनन्तर विहार करके लवेरइ पधारे, सं० १६६४ का चातुर्मास वहापर हुआ। जोधपुर से राजा सूर सिंहजी वंदनार्थ आये वे सूरिजी से धर्मगोष्टि करके हर्षित हुए और युगप्रधान गुरुवर्य का सन्मान बढाने के लिये अपने राज्य में सूरिजी को सर्वत्र वाजित्र बजाते हुए श्रावक लोगों के ले जाने मे कोई बाधा न दे, इसलिये परवाना लिखकर दिया, जिसकी नकल इसी पुस्तक के परिशिष्ट में छपी है। ये महाराजा सूरसिंहजी सूरि जी के प्रसिद्ध भक्त थे, जिसका नामोल्लेख समयसुन्दरजी अपने (अपूर्ण) आलिजा गीत में इस प्रकार करते हैं —

---

* ये स० १६६२ के श्रावण महीने में लाहोर में अपने पिता उदयसिंह के उत्तराधिकारी हुए। माघ शुक्ल ५ जोधपुर में राज्याभिषेक हुआ। इन्हें सम्राट ने दो हजारी जात और सवासात हजारी का मनसब दिया। ये बडे वीर, दानी और नीतिचतुर विद्वान थे एक ही दिन में इन्होंने चार कवियों को १ लाख का दान दिया था। सं० १६७० में इनका स्वर्गवास हुआ।

× एक पट्टावली में स० १६६८ माघ शुक्ला मे तीर्थाधिराज श्रीशत्रुञ्जय पर नव्य जिन प्रासाद में सूरिजी के करकमलों से अर्हत् बिम्बों की प्रतिष्ठा कराने का उल्लेख इसप्रकार है :—

शाहि सलेम सहु उमरा, भीम सूर भूपाल ।

चीतारइ तुंनइ चाह सुं, पूज्यजी पधारो कृपाल ॥५॥

सूरिजी लवेरा से विहार करके मेड़ता पधारे। सं० १६६५ का चातुर्मास मेड़ता मे किया। अहमदाबाद के विनीत आमन्त्रण से सूरिमहाराज राजनगर पधारे। वहां से ग्रामानुग्राम विचरते हुए खम्भात पधारे। सं० १६६६ का चातुर्मास खम्भात में किया। उसके पश्चात् सं० १६६७ का चातुर्मास अहमदाबाद में करके पाटण पधारे। सं० १६६८ का चातुर्मास पाटण में किया। इन वर्षों में और भी बहुत-सी जिन मन्दिरों की प्रतिष्ठाएं सूरिजी के कर कमलोंसे हुई।

"संवत् १६६८ वर्षे माघ सुदि मांहें श्रीशत्रुंजय उपरि नवीन प्रासाद, तिहां इण प्रतिमा नी प्रतिष्ठा कीवी, बीजो पणि घणी प्रतिष्ठा कीधी।"

[बीकानेर ज्ञानभण्डार—पट्टावली]

इसी वर्ष में प्रतिष्ठित श्रीधर्मनाथ बिम्ब का लेख बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर के जैन लेख संग्रह में भी इस प्रकार है :—

"सं० १६६८ श्रीधर्मनाथ बिंबं का० सा० हीरानंदेन प्र० श्रीजिनचन्द्र सूरिभिः"

उ० क्षमाकल्याणजी गणि कृत पट्टावली में श्रीजिनसिंहसूरिजी के शिष्य राजसमुद्रजी (श्रीजिनराजसूरि) को इसी वर्ष में आसावलीपुर में वाचक पद देनेका उल्लेख इस प्रकार है :—

"सं० १६६८ आसाउलीपुरे श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः वाचक पदं प्रदत्तम्" श्रीसार कवि कृत "जिनराजसूरि रास" में भी वाचक पद देनेका इस प्रकार उल्लेख है :—

ग्यारहवां प्रकरण

महान् शासन-सेवा

म्राट अकबर न्यायपरायणता से राज्यशासन करते हुए वि० सं० १६६२ मिती कार्तिक सुदी १४ मंगलवारकी रात्रि को कालधर्म प्राप्त हुए। सम्राट के सब धर्मोंपर समान भाव और प्रजावात्सल्य गुणपर प्रजा बड़ी प्रसन्न थी। मुसलमान शासकोंमें यही एक ऐसे सम्राट हो गये हैं, जिनके समय में हिन्दू और मुसलमान दोनोंने खूब शान्ति से जीवननिर्वाह किया। सम्राट की मृत्यु के अनन्तर हिन्दू और मुसलमान दोनों के हृदय शोकाकुल हो गये, सर्वत्र हाहाकार छा गया, जिसका कुछ वर्णन "बनारसी-विलास" में पाया जाता है। सम्राट के देहावसान के अनन्तर उनके पुत्र शाहजादा सलीम "नूरुद्दीन जहांगीर" की उपाधि धारण कर आगरेके सिंहासनारूढ़ हुए। सूरिजी के लाहौर पधारने के समय से ही शाहजादा सलीम उनको सम्मान की दृष्टि से देखा करता था और उनका भक्त हो गया था।

सम्राट जहाँगीर अत्यधिक मद्यपान ~ किया करते थे और शीघ्र क्रोधी स्वभावी थे, इन दोनोंमेंसे एक भी दुर्गुण हो तो मनुष्य अनेक अविचार और अनर्थमय कार्य कर डालता है, तो जहां दोनोंकी विद्यमानता हो वहा तो कहना ही क्या ?

सं० १६६८× मे एक– शिथिलाचारी वेषधारी दर्शनीको अनाचार सेवन करते जान, सम्राटने उसे देश निकाला दे दिया और अन्य सर्व

~ सम्राट् स्वयं अपनी आत्म-जीवनी (जहांगीर नामा) में इसे स्वीकार करते हैं।

× विहारपत्र नं० १ और लब्धिशेखर कृत जिनचन्द्रसूरि गीत (अवतरण पृष्ठ १४६) से यह घटना सं० १६६८ में हुई थी, सिद्ध होता है। गीत से तो यह भी ज्ञात होता है कि सं० १६६८ में, जब कि सूरिजी का चातुर्मास पाटणमें था आगरे संघका विज्ञप्तिपत्र (चातुर्मासके समय ही) आया था और चातुर्मासके सम्पूर्ण होनेपर शीघ्र ही विहार कर सूरिजी आगरे पधारे थे। सवत् १६६९ में तो सूरिजीने सम्राट्को प्रतिबोध देकर साधुविहार प्रतिबंधक हुक्मको उन्मू न करवाके साधुसङ्घकी महान् रक्षाके साथ जैन शासन की अपूर्व सेवा करनेका सौभाग्य प्राप्त किया था, यह सं० १६६९ में ही रचित हर्षनन्दन कृत 'आचार दिनकर प्रशस्ति' से सिद्ध होता है—

"राज्ये गाउल भीम नाम नृपतेः कल्याणमल्लस्य च ।
वर्षे विक्रम तस्तु षोडश शते, एकोनसत्ससते ॥१॥
वृद्धे खरतरगच्छे श्री मज्जिनभद्रसूरि
श्री जिनमाणिक्य यतीश्वर पट्टालंकार
जाग्रट भाग्यजये प्रबुद्ध यवनाधीश,
साक्षात् पंचनदीश साधन विधौ, ~ ॥

जहाँ कहीं दर्शनी, सेवडे हैं, उन्हें गृहस्थ-वेषधारक बना दिये जांय अन्यथा मेरे राज्यमेंसे बाहर निकाल दिये जाँय *

इस कठोर और अन्यायपूर्ण शाही हुक्म को सुनकर दर्शनी लोग इतस्ततः भागने लगे, कइ जङ्गलोंमें कइ गुफाओंमें कइ अनान्य देशोंमें चले गये। कुछ लोग तो भयके मारे पृथ्वीके भीतरी, तलघरोंमें जा छिपे, इस प्रकार जिसने जिधर अनुकूलता देखी—

---

* खरतरगच्छीय साहित्यमें तो इस घटनाका विस्तृत वर्णन मिलता ही है, जिसके कई प्रमाण आगेकी फुट नोटमें दिये जायेंगे। तपागच्छीय साहित्यमें भी इस प्रकार उल्लेख है—

"एहवइ पृथ्वीपति जहांगीर, दोषी वचने लागो वीर।
वेषधारी उपर कोपीयो, मुतकलनइ देसोटो दियो।
मलेछ न जाणइ तेह विचार, आचारी मोकल अणगार ॥ ४३६ ॥
नासरडुं पडियो बहु देसि, भला हुंता तेणे राख्या वेष।

(विजयतिलक सूरि रास, ऐ० रा० सं० पृष्ठ ३३)

इस घटनाका विशेष ज्ञातव्य, भानुचन्द्र चरित्र, जहांगीरनामा, क्षमाकल्याणजी कृत पट्टावली आदि में भी पाया जाता है।

वास्तवमें सम्राट्का एक व्यक्ति विशेषके अनाचार से सारे साधुसंघको अनाचारी मान सबको देश निर्वासनका हुक्म देना अन्यायपूर्ण था। हमारे चरित्र नायकने सम्राट्को उसकी इस गहरी भूलको सुझाकर उस घातक हुक्मको रद्द या उन्मूलन करानेका गौरव प्राप्त किया था, यह तत्कालीन अनेकों प्रमाणोंसे भलीभांति सिद्ध है।"

भाग निकले। उनमें से कितनों को पलायमान होते हुए देखकर यवनोंने पकड़कर गिरफ्तार कर लिये और उन्हें काल-कोठरीमें डाल दिया, जहांपर अन्न-जल भी नहीं दिया जाता था *।

---

* पातिसाहि सलेम सटोप, कियउ दर्शनियां सुं कोप।
ए कामगगारा कामी, दरबार थी दूरि हरामी ॥ १७॥
एकन कुं पाग बन्धावी, एकन कुं ना आस अणावो।
एकन कुं देसवटउ जंगल दीजइ, एकन कुं पखाली कीजइ ॥१८॥
ए साहि हुकम सांभलिया, तसु खडक थकी खलभलीया।
जजमान मिली संजनना, दरहाल करे गुरु जतना ॥१९॥
के नासि हिन्दू पूठि पडिया, केई मइवासइ जइ चड़िया।
केइ जंगल जाइ बइठा, केइ दौड़ि गुफा मांहि (जइ) पइठा ॥२०॥
जे नासत यवने झाल्या, ते आणि भाखसी घाल्या।
पाणी नइ अन्न जळ पाल्या, वयरोड़ा वयर सुं साल्या ॥२१॥
इम सांभलि शासन हीला, जिणचन्द सूरीश सुशीला।
गुजरात धरा थी पधारइ, जिन शासन वान वधारइ ॥२२॥
अति आसति वलि गुरुचाली, असुरां भय दूरइ टाली।
उग्रसेन पुरइ पउधारइ, पूज्य साहि तणइ दरबारइ ॥२३॥
पूज्य देखि दीदारइ मिलिया, पतिसाह तणा कोप गलिया।
गुजरात धरा क्युं आए, पतिसाहि गुरु बतलाए ॥२४॥
पतिसाहि कुं देण आशीस, हम आए शाहि-जगीश।
काहे पाया दुःख शरीर, जाओ जउख करो गुरपीर ॥२५॥
इक साहि हुकुम जउ पावां, बन्दियडां बन्दि (घ) छुड़ावां।
पतिशाहि खयरात करीजइ, दरशणियां पुरु (हूओ) दीजइ ॥२६॥

इस प्रकार की विकट परिस्थिति के कारण आगरा संघ ने सूरि जीको समर्थ जानकर उनको पत्र द्वारा संकटनिवारणार्थ आगरा पधारने की विनती की †। इस पत्र से वहां की सारी परिस्थिति से ज्ञात होकर जैन शासन की अवहेलना दूर कर रक्षा करने के लिये सूरिजी ने महान् साहस करके आगरे की ओर विहार किया। त्वरासे विहार करते हुए थोड़े दिनों में सूरिजी अपनी शिष्य-मंडली के साथ आगरा पहुंचे, और शाहीदरबार में जाकर सम्राट से

पतिशाहि हुंतउ जे रूठउ, पूज्य भाग बलइ अति तूठउ।
जाउ विचरउ देश हमारे, तुम्ह फिरतां कोइ न वारइ ॥२७॥
धन २ खरतरगच्छराया, दर्शनियां दंड छुड़ाया।
पूज्य सयश करि जगि छाया, फिरि सहरि मेड़तइ आया ॥२८॥
[युग-प्रधान-निर्वाण रास]

अनुक्रमि श्रीगुरु विहरता सहि ए, आया पाटण मांहि।
चउमासो प्रभु तिहां करइ सहि ए, मन आणी उच्छाह ॥४॥
लेख आयउ आगरा थकी सहि ए, जाणी सगली वात।
साहि सलेम कोपइ चढ़इ सहि ए, कुमति बांध्या रात ॥५॥
चउमासउ करि पांगुर्या सहि ए, करता देश विहार।
उग्रसेनपुर आविया सहि ए, वरत्या जय जय कार ॥६॥
श्री पातिसाह बोलाविया सहिए, जंगम जुगह प्रधान।
धरम मरम कहि बूझव्यउ सहि ए, तुरत दिया फरमान ॥७॥
जिन शासन उजवालियो सहि ए, शाह श्रीवंत कुलचंद।
साधु विहार सुगता किया सहि ए, खरतर पति जिणचन्द ॥८॥
[लब्धिशेखर कृत गहुंली]

मिले। अपने पूज्य युगप्रधान गुरुको आये देखकर सम्राट जहांगीर अत्यन्त प्रमुदित हुए, उनके दर्शनमात्र से सम्राट का क्रोध शान्त हो गया और नम्रतापूर्वक वार्तालाप करने लगा।

"आपने वृद्धावस्थामे गुजरात से यहा तक पधारनेका कष्ट क्यों किया, सेवा फरमावें।" जहांगीरने कहा।

"सम्राट! तुम्हे आशीर्वाद देने के लिये हम यहा आये हैं।"

"यह मेरा अहोभाग्य है, आपको इतनी दूर से पधारने में शारीरिक कष्ट हुआ होगा, अतः अभी जाकर विश्राम लें।"

"अभी विश्राम करनेका समय नहीं है। तुम्हारे फरमानसे जैनसघ मे जो अशान्ति फैल रही है, उसे निवारणार्थ ही मेरा यहा आगमन हुआ है। एक व्यक्ति के दोप से सारा समाज दण्डनीय नहीं हो जाता। सब मनुष्य एक समान प्रकृतिवाले नहीं होते, बडो-बडो की भी भूल हो जाती है। अत हे सम्राट! विचार करो। तुमने जो साधु विहार बन्द किया है, उसे मुक्त कर दो।" सूरिजीने उद्देश्य स्पष्ट कर कहा।

"आपने जो कहा वह ठीक है, किन्तु मेरी समझ मे भुक्तभोगी होकर साधु बनना निरापद होता है।" सम्राटने अपना मन्तव्य प्रकट किया।

"सम्राट! चिरकाल से आत्मा इन्द्रियोंके विषयो मे आशक्त बनी हुई है। अत. गृहस्थावासमे रहकर उन विषय-वासनाओं से विरक्त होने की भावना का उद्भूत होना बहुत कठिन है। क्योंकि आत्माको ये सदा से प्रिय हैं। अतः विषय-वासना के साधनोंको

पहले ही त्याग कर देना अच्छा है। ब्रह्मचर्य्य को जैन-दर्शन में वहुत ही ऊंचा स्थान दिया गया है। उसके पालन और रक्षाके हेतु नव कड़ी आज्ञाएँ शास्त्रकारोंने बतला दो है, जिन से सुखपूर्वक निर्विघ्नतया ब्रह्मचर्य्य व्रत स्थिर रह सके, वे इस प्रकार है :—

(१) जहा स्त्री, पुरुष, पशु और नपुंसक निवास करते हों, उस स्थान मे नहीं रहना।

(२) विषय विकारों की जागृति और अभिवृद्धि करनेवाली वार्ताएं तक न करना और न सुनना।

(३) जहा स्त्री बैठी हो, उस स्थान व उस आसनपर दो घड़ी तक न बैठना।

(४) दीवाल की ओट में भी जहा स्त्री-पुरुष काम-क्रीड़ा और प्रेम वार्ता करते हों, वहां न ठहरना और न उसे सुनना।

(५) पूर्वावस्था के भुक्त भोगों को स्मरण तक न करना।

(६) सरस स्निग्ध भोजन और कामोद्दीपक पदार्थों का उपभोग नहीं करना।

(७) स्त्री-पुरुष किसी को भी सराग दृष्टि न देखना।

(८) सर्वदा आवश्यकता से भी कम भोजन करना, जिससे आलस्य और विकार उत्पन्न न हो।

(९) शरीर को किसी भी प्रकार से शृङ्गार या शोभा न करना ताकि सराग दशा जागृत न हो।

अब तुम स्वयं विचार कर देखो कि इन प्रतिज्ञाओं को निभाने वाला किस प्रकार आचारच्युत हो सकता है। हां! जो भ्रष्ट

हुए हैं वे इन नियमों को यथावत् न पालन करने के कारण ही। जैन शासन उन्हें किसी भी हालत मे उपादेय नहीं समझता और न सहानुभूति ही रखता है। अत. समस्त साधुओं पर अश्रद्धा ला कर उन्हें कष्ट पहुचाना तुम्हारे जैसे विचारशील न्यायवान और प्रजा हितेच्छु सम्राट के लिये उचित नहीं कहा जा सकता।" सूरिजी ने सम्राट की युक्ति का निराकरण करते हुए कहा।

'अच्छा, मेरे राज्य मे जहा इच्छा हो, बिना रोक टोक के विचरें, किसी को कोई विघ्न नहीं होगा!"

"तो फिर शीघ्र ही गिरफ्तार किये हुए छोड़ दिये जाँय! और भविष्य के लिये अप्रतिबन्ध साधु विहार होने के लिये सर्वत्र शाही फरमान जाहिर कर दिये जॉय।"

"हा गुरुदेव! ऐसा ही होगा। आप निश्चिन्त रहिये।"

इस प्रकार वार्तालाप होनेके अनन्तर सूरिजी उपाश्रय मे पधारे। सम्राट के द्वारा फरमान जाहिर कर दिया गया। श्री सङ्घ के हर्ष का पारावार न रहा। सूरिजी ने सङ्घ के आग्रह से सं० १६६९ का चातुर्मास वहीं किया। उपरोक्त घटना का वर्णन कविवर समयसुन्दरजी ने अपने छद इस प्रकार किया है:—

सुगुरु जिणचन्द्र सौभाग्य सवरों लियो,
चिहुं दिशै चन्द्र नामौ सवायौ।
जैन शाशन जिके डोलतौ राखियौ,
साखियौ जगत सगलै कहायौ॥ १॥

एक दिन पातिशाह आगरै कोपियौ,
दर्शनी एक आचार चूकौ।
शहर थी दूरि काढौ सबै सेवड़ा,
मेवड़ां हाथ फुरमाण मूक्यो ॥ २ ॥
आगरै शहर नागौर अरु मेड़तै,
महिम लाहोर गुजराति मांहैं।
देश दन्दोल सबलौ पड्यौ तिहां किणे,
तुरत ना पंथिया तुंबक वाहे ॥ ३ ॥
दर्शनी केई पर द्वीप में चढि गया,
केइ नासी गया कच्छ देशे।
केइ लाहोर केइ रह्या मूंहि मां,
दर्शनी केई पाताल पैसे ॥ ४ ॥
तिण समय युगप्रधान जगि राजियौ,
श्री जिनचन्द्र तेजै सवायौ।
पूज्य अणगार पाटण थकी पांगुर्या,
आगरै पातिस्या पास आयौ ॥ ५ ॥
तुरत गुरु राय नै पातशाह तेड़िया,
देखि दीदार अति मान दीधा।

अजब की छाप फुरमाण करि आपिया,
केडला गुनहु सहु माफ कीधा ॥ ६ ॥
जैन शासनतणी टेक राखी खरी,
ताहरे गाज कोई न तोले ।
खरतर गच्छ नै शोभ चाढ़ी करी,
समयसुन्दर विरुद सांच बोलै ॥ ७ ॥

सम्राट पर सूरिजी का कितना गहरा और जबरदस्त प्रभाव था यह इस घटना से भली भांति जाना जाता है। जैन शासन की अति प्रभावना करने के कारण आपश्री की "सवाई युगप्रधान" नाम से प्रसिद्धि हुई।*

कहा जाता है कि जब सूरिजी आगरा पधारे और सम्राट को युगप्रधान बड़े गुरु के पधारने के समाचार मिले, तब उन्होंने अपनी आज्ञाका भङ्ग न हो, इसलिये सूरिजी को राज-मार्ग से न पधार कर लोकोत्तर मार्ग से आने का कहलाया, तब शासन की प्रभावना के हेतु सूरिजी ने ऊनी कम्बल या लोवड़ी यमुना नदी में बिछा कर मन्त्र-शक्ति द्वारा उसी के ऊपर बैठे हुए पार होकर सम्राट से मिले थे। इस अद्भुत शक्ति को देख कर सम्राट अत्यन्त चकित हो गये।

---

* श्री साहि सलेम राज्ये ताद्य (तपा) कृत जिनशासन मालिन्यतः श्री साधु विहारो निषिद्ध साहिना तत्रावसरे श्री उग्रसेनपुरे गत्वा साहि प्रतिबोध्य च साधुनां विहार स्थिरी कृतः तदा लब्ध "सवाई युग-प्रधान" बड़ागुररिति विरुदो येन गुरूणाः।

[तत्कालीन पट्टावली]

एक दिन कोई विद्वान् भट्ट, जिसने काशी † के पण्डितों को विजय कर लिया था, जहागीर के दरबार मे आया और गर्वपूर्वक शास्त्रार्थ या वाद करने की उद्घोषणा करने लगा। तब सम्राटने अपने गुरु श्री जिनचन्द्रसूरिजी को उससे वाद करने मे समर्थ समझ कर उन्हे शास्त्रार्थ करने के लिये विनम्र निवेदन किया। सूरिजी ने अपनी असाधारण विद्वता से उसे परास्त करके प्रसिद्धि प्राप्त की। शास्त्रार्थ मे भट्ट को हराने से "युगप्रधान भट्टारक" पद की ख्याति प्राप्ति की। इस विषय का एक (प्राचीन) प्रसिद्ध कवित्त यहा लिखते हैं —

"मसूर पठान (?) गरब्ब कियौ भैया वाद वद् कोई पडित जागै।
शाहि सलेम बुलाय श्रीपूज्य कु मोहि भरोसौ चन्द्र न भागै॥
भट्ट हार गयो इक्क चोट शब्द की जीत भई यु जैन के तागै।
वाद जित्यउ जिणचन्द भट्टारक यु पतिशाहि दिल्लीपति आगै॥

सूरि-महाराज के आगरे मे चातुर्मास करने से सघ मे खूब धर्मध्यान होता रहा। उन्होने सम्राट जहागीरपर अलौकिक और अनुपम प्रभाव डाल कर जो स्तुत्य शासन-सेवा की वह शब्दो द्वारा वर्णन नहीं की जा सकती। यह प्रकरण पढने से पाठको को श्री जिनचन्द्रसूरिजी की अनुकरणीय शासन सेवा, अदम्य उत्साह, अटूट साहस, निर्मल तप सयम और धैर्य्य गम्भीरादि गुणो का कुछ परिचय हुआ ही होगा।

† "जित काशी जद पामियउ, करि गौतम ज्यु सिद्धि साधी र ॥ ११ ॥
[युगप्रधान निर्वाण रास]

बारहवां-प्रकरण

निर्वाण

आगरे में अद्वितीय शासन-प्रभावना करके सूरि-महाराज मेडता पधारे। वहा चोपडा गोत्रीय श्रेष्ठि आसकरण आदि अनेकों धनवान और राज्यमान्य श्रावक सूरिजी के परम-भक्त थे। सूरि महाराज के पधारने से सघ मे अधिकाधिक धर्म ध्यान होने लगे।

सूरिजी का मेडता नगर में आगमन सुन कर बीलाडे के संघ को अत्यन्त हर्ष हुआ। उन्होने एकत्र होकर सूरिजी को बीलाडा मे चातुर्मास करने के लिये आमन्त्रित करने का परामर्श किया। वे मात्र विचार करके ही नहीं रह गये, परन्तु तत्काल हो सघ के प्रतिष्ठित व्यक्ति जिनमें कटारिया गोत्र के श्रावक प्रधान थे, मिल कर मेडता आये। सूरि महाराज को वन्दना करने के अनन्तर अत्यन्त अनुनय विनय पूर्वक वहा चातुर्मास के निमित्त पधारने की नम्र विज्ञप्ति की। उनके आग्रह से सूरिमहाराज बीलाडा पधारे। उस समय आप के साथ वा० सुमति कल्लोल, वा० पुण्यप्रधान, प० मुनिवल्लभ, प० अमीपाल आदि साधु थे। स० १६७० का चातुर्मास वहीं किया।

---

* जैसलमेर से पा० विमलतिलक आदि ने मिती चत्र सुदि १० को सूरि-

सूरि-महाराज के विराजने से वहा सघ मे अधिकाधिक धर्म ध्यान हुए। मुनिगण स्वाध्याय, ध्यान, सयम और तपश्चर्या करने मे विशेष रूप से तल्लीन हुए। धर्मिष्ठ श्रावकगण पौषध, प्रतिक्रमण, शास्त्र-श्रवण और द्रव्य का सद्व्यय करने मे खूब प्रवृत्तिशील बने। पर्यूषण पर्वाधिराज के दिनो की तो वात ही क्या ? सर्वत्र धर्म भावना का श्रोत प्रवाहित हो चला, जिसका वर्णन करना लेखनशक्ति से बाहर है।

पर्यूषण पर्व सानन्द आराधन करने के पश्चात् सूरिजी ने ज्ञानोपयोग से अपना आयुष्य निकट जानकर शिष्य-वर्ग को विशेष रूप से शिक्षा देना प्रारम्भ किया—"तुम लोग जैन शासन की उन्नति करने के साथ-साथ आत्मोन्नति मे सदा कटिबद्ध रहना ! गच्छ का भार आचार्य "जिनसिंहसूरि" निर्वाहेंगे, तुम लोग सदा तत्परता से उनकी आज्ञा का पालन करना ! इत्यादि।

स्थानीय श्रावक, श्राविका को भी उनके उचित हित-शिक्षा देते हुए चतुर्विध सङ्घ से क्षमत-क्षामणा की। अन्य देश-देशान्तरो के सङ्घ को भी पत्र द्वारा धर्मलाभ, क्षमत-क्षामणा लिखवाये। तत्पश्चात् चौरासी लक्ष जीवा योनि को शुद्ध मन से क्षमत-क्षामणा कर

जीके प्रति एक पत्र दिया, जिसमें ये नाम लिखे हैं, वह सस्कृत पत्र इसी पुस्तकके परिशिष्टमें छपा है। उसमें जिनसिंहसूरिजी का नाम नहीं है, इससे ज्ञात होता है कि उस समय वे सूरिजी के साथ नहीं थे। पीछे चातुर्मास के समय गुरु महाराज के पास बीलाडा आय होंगे।

पापस्थानकों की निन्दा करते हुए समाधि से अनशन ग्रहण कर लिया। चार प्रहर के अनशन को पालते हुए उत्कृष्ट धर्म ध्यान में लीन हो कर अपने पौद्गलिक देह को विसर्जन कर मिती आश्विन कृष्णा २ के दिन स्वर्गधाम सिधारे।

वह जगत् की ज्योति सदा के लिये विलीन हो गई। दुर्दैव कराल काल ने ऐसे महापुरुषों को भी न छोडा। पुद्गल की नि.सारता ने आज अपना स्पष्ट परिचय दे दिया, उस सुन्दर और पूज्य देह ने सर्वदा के लिये रूखा उत्तर दे दिया। समस्त देश मे विषाद और हाहाकार छा गया। सर्वत्र दिन होते हुए भी अन्धकार अनुभूत होने लगा। वह तेजमयी प्रभा सदा के लिये अदृश्य हो गई। वह दीप्त ज्ञानप्रदीप काल-वायु के उद्दंड झकोरो से अन्धकार के अन्तस्थल मे जा छिपा। गुरु-विरह की दारुण ज्वाला लोगोंके हृदय मे प्रज्वलित हो उठी, नेत्रो से वह ज्वाला अश्रुओं का रूप धारण कर झडी-सी उमड पडी। उस समय का दृश्य अति दयनीय और नेत्रों से न देखे जाने योग्य हो गया। सब लोग म्लान मुख होकर शोक-सागर मे डूबने लगे।

सूरिजी की अन्त्येष्टि क्रिया करने के लिये स्थानीय सङ्घ ने सुन्दर विमान के सदृश मंडी बनाई और शोकाकुल हृदय से शव को निर्मल गंगोदक से प्रक्षालन कर चन्दनादि का विलेपन किया। कृष्णागरके सुगन्धित धूपसे अर्चित करते हुए उसे विमानमें रखा। वाजित्रादिके साथ शवको उत्सव पूर्वक ग्रामके मध्य २ होकर ले जाने लगे। मार्ग मे गुरु दर्शनार्थ लोगों की भीड़ से निस्तृत

रास्ते भी संकुचित मालूम होने लगे। क्रमसे बाणगङ्गाका तट निकट आनेपर पवित्र स्थान में सूरिजी का शव रखा गया। चन्दन की चिता सजाकर घृतादिसे देहका अग्नि संस्कार कर दिया गया वह पुद्गल पुञ्ज सबके देखते २ क्षारके रूपमे अवतीर्ण हो गया सूरिजीके अतिशय से उनकी मुंहपत्ति (मुखवस्त्रिका) नहीं जली * लोगोने इस प्रकट चमत्कारको आश्चर्य सहित देखा। श्री शान्तिनाथ भगवानका नाम स्मरण करते हुए संघ वापिस स्वस्थान आया।

लोग अपने विरह दु.खको इस प्रकार प्रकट करने लगे :— "हा गुरुदेव ! आप कहां चले गये ? हमसे ऐसा क्या अपराध हुआ। अब हमें किसका आधार है ? जैन संघकी विपत्ति अवहेलना आदि को कौन मिटावेगा। हे ज्ञाननिधान ! आपके बिना अब हमारा संशय कौन दूर करेगा ? हे युगप्रधान ! अब हम गुरुजी कहकर किसे पुकारेंगे।" इत्यादि ×।

---

* देखो निर्वाण रास और नयरंग कृत पट्टावलीमें भी इस प्रकार लिखा है :—

वैश्वानर वेहनउ सगउ, पण अतिशय संजोग।
नवि दाझी पूज्य मुंहपति, देखइ सगलो लोग॥
(निर्वाण रास)

येषां विशिष्टातिसयेन देहे दग्धेप्यधाक्षीन्नहि धस्रवास.।
प्रोद्यत् प्रभाव प्रथिता जयन्तु युगप्रधान जिनचन्द्र पूज्याः॥ २॥

× यहाँ तक का सारा वृत्तान्त कवि समयप्रमोद कृत "युगप्रधान निर्वाण रास" से लिया गया है। यह रास हमारी ओर से प्रकाशित "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" में देखना चाहिये।

जिस स्थान पर सूरिजी का अग्नि संस्कार हुआ वहा पर बीलाडा के सघ ने उनके स्मारक रूपमें एक सुन्दर स्तूप बनवाया और उसमे सूरिजी की चरण पादुकाएं स्थापित कराई, जो अद्यावधि बाणगगा के तट पर विद्यमान है । जिसका लेख इस प्रकार है .—

"सवत् १६७० मगसर सुदि १० गुरुवासरे सवाई युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि चरणपादुके कारापित श्री बीलाडा श्री संघेन प्र० श्री जिनसिंह सूरिभि ।"

और भी अनेक स्थानों मे आपके चरण स्थापित किये गये थे, बीकानेरमे शहरके बाहर एक स्थान मे आपकी चरण पादुकाएं स्थापित हैं जिसे आजकल "रल दादाजी" कहते हैं । अनेको भक्त लोग गुरु दर्शनार्थं नित्य, (विशेषतया सोमवारको) जाया करते हैं । दादाजी श्री जिनचन्द्रसूरिजी भक्तोंके मन वाछित पूर्ण करनेवाले हैं, अनेक चमत्कार भी सुननेमे आते हैं । वहा का पादुका लेख यह है :—

"सं० १६७३ वर्षे वैशाख मासे अक्षय तृतीयाया सोमवारे श्री खरतरगच्छे श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालंकारहार युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिणा पादुके श्री विक्रमनगर वास्तव्य समस्त श्रीसंघेन कारिते शुभम् ।"

बीकानेरके नाहटोकी गवाडमे श्री ऋषभदेव भगवानके मन्दिर में मूल गम्भारेके दाहिनी तरफ सूरिजी की पाषाण-निर्मित अति सुन्दर मूर्ति है जिसका लेख इस प्रकार है .—

"सं० १६८६ वर्षे चैत्र वदि ४ दिने श्री खरतरगच्छाधीश्वर युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरिणा प्रतिमा का० जयमा श्रा० प्र० श्री युग-प्रधान श्री जिनराजसूरिराजैः।"

जैसलमेरमें भी शहरके उत्तरकी ओर १ मील पर देदानसर नामक तालावके पास श्री जिनकुशल सूरिजी का स्थान है वहा भी आपकी पादुकाएं हैं जिसका लेख इसप्रकार है :—

सं० १६७२ वर्षे वैशाख सुदि ६ सोमवारे भट्टारक सवाइ युगप्रधान श्री श्री श्री श्री। श्री जिनचन्द्रसूरि पादुका प्रतिष्ठिता।

(जैन लेख संग्रह भा० ३ By P. C. Nahar)

उसी दिनका लेख दादाजी के स्थानके पूर्व की तरफ स्थम्भके आले में निम्नोक्त लेख छः पंक्तियों मे खुदा है :—

संवत् १६७२ वर्षे वैसाख सुदि ६ दिने सोमवारे श्री जैसल्मेर वास्तव्य राउल श्री कल्याणदासजो विजयराज्ये कुंवर श्री मनोहर दासजी। सवाई युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरीश्वर पादुके कारिते युगप्रधान भट्टारक श्री जिनसिंहसूरि॥ श्री खरतर संघेन तैव सर्वदा श्री संघस्य समुन्नति सुख श्रेयो वृद्धिः। वाचयेतामिति॥ पं० उदयसिंह लिपि कृतम्॥ श्रीः श्रीः श्री॥

(जैन लेख संग्रह भा० ३ By P. C. Nahar)

स्तम्भ तीर्थ मे भी सूरिजीके चरण पादुके विद्यमान हैं जिसका लेख इस प्रकार है :—

"सं० १६७७ (?) वर्षे माघ वदि १० दिने गुरुवारे युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरीणा पादुके कारिते खरतरगच्छे ओस वंशे ·······

.........ते सं० जसराज भार्य्या जसल दे पुत्र मं० माडण केन प्रति० युगप्रधान श्री जिनसिंह सूरिवरैः।"

(जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भाग २ लेखांक ८८२)

इन स्थानोंके अतिरिक्त मुलतान, अहमदाबाद, बाहड़मेर, पाटण, आदि स्थानोंमें भी आपश्री को चरण पादुकाएं और मूर्तियें प्रतिष्ठित होने का उल्लेख पाया जाता है*।

सूरिजी की स्वर्ग-तिथि मिती आश्विन कृष्णा २ (गुजराती भादवा वदि २) को अब भी बम्बई भाईखला, सूरत, भरुच, पाटण आदि नगरोंमें 'गुरु दूज' के नामसे दादा साहबके स्थान पर मेला होता है।

---

* जससमुद्र कृत गीत में :—

श्री जिनचन्द्र सूरीश्वरू, खरतर गच्छ गणधार मेरे युगवर।
थुम्भ सकल थिर थापना, विक्रमपुर सिणगार मेरे युगवर ॥ १ ॥

कुंभकरण कृत गीतमें :—

मूलवक (मुलतान) में थुंभ मंडानो, परतउ सहु मउ पूरे।
कुम्भकरण जंपइ कर जोड़ी, दुष्मण करि सहु दूरे ॥ ३ ॥

हेममन्दिर कृत गुरु गीत में :—

जिहो मूल थम्भ अति सुन्दरू, दादा थीलाड़े थिर ठाम।
जीहो राजनगर विक्रमपुरे, दादा पूरे वंछित काम ॥ ६ ॥ स० ॥
जीहो बाहड़मेरइ दीपतउ, दादा जेसाणइ मुलतान।
जीहो अणहिल्पुर खंभाइतंइ, सुर नर करइ वखाण ॥ ७ ॥ स० ॥

यद्यपि सूरिजी का नश्वर पौद्गलिक देह आज हमारे प्रत्यक्ष नहीं है तथापि उनकी मूर्तिमान् अमरआत्मा और अनुकरणीय गुण समूह आज भी हमें आदर्श मार्ग सुझाने को परम साधन-भूत है। उनके पावन कृत्य और प्रशस्त कीर्ति की गौरव-गाथा सारे विश्व में दीप्तमान आलोककी भाँति चिरस्थायी रहेगी।

कविवर समयसुन्दरजी क्या ही मार्मिक शब्दों में कहते हैं

मुयइ कहइ ते मूढ नर, जीवइ जिनचन्द सूरि।
जग जपइ जस जेहनो, पुहवी कीरति पडूर॥ ८॥
चतुर्विध सघ चीतारस्यइ, जा जीविस्यइ ता सीम।
वीसारया किम वीसरइ, हो निर्मल तप जप नीम॥९॥

तेरहवां प्रकरण

विद्वत् शिष्य-समुदाय

विश्व मे ऐसे महापुरुष बहुत ही कम मिलते हैं कि जिनका कथन और कर्तव्य एकसा हो। लम्बी-चौडी हाँकनेवाले सदा प्रचुर-प्रमाण मे होते हैं, किन्तु कमी है तो कर्तव्यनिष्ट और सच्चरित्र पुरुषो की। जो स्वयं इन गुणो से सम्पन्न होते हैं उनका दूसरो पर भी अमित प्रभाव पड सकता है।

हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी जैसे प्रकाण्ड विद्वान थे वैसे ही दुर्द्धर्ष चारित्र पालन करने मे भी अग्रगण्य थे। आचार्य-पद प्राप्ति के अनन्तर ही आप क्रियोद्धार करके जिस दृढता के साथ उत्कृष्ट सयम पालने मे कटिबद्ध रहे उस चारित्रका प्रभाव उत्तरोत्तर वृद्धिगत होता रहा। फलत आपके उपदेश से सैकडो भव्यात्माओ ने सर्वविरति चारित्र धर्म और सैकड़ो ने देशविरति व्रत ग्रहण किये और हजारो ग्रन्थ लिखवा कर श्रुतज्ञान को चिरस्थायी रखने के लिये भण्डारो मे स्थापित किये।

सैकड़ों नवीन जिन-प्रासाद और जिन-बिम्बों की प्रतिष्ठाएं हुई। धार्मिक सप्त-क्षेत्रोंमें करोड़ों रुपये वितरण किये गए। संक्षिप्त में इतना ही कहना पर्य्याप्त होगा कि उनके चारित्र के तेजोमय प्रताप से ही सम्राट अकबर और जहाँगीर आदि मुग्ध हो गए और कठिन से कठिन कार्य भी सुगमता से सफल होने लगे।

कहा जाता है कि सूरिजी का आज्ञानुयायी साधु-समुदाय २००० से भी अधिक संख्या में था ×। आपने इतने विपुल प्रमाण में साधु साध्वियोंको दीक्षित किये थे कि उतनी संख्यामें बहुत ही कम आचार्यों ने दीक्षित किये होंगे। साधु बनने के पश्चात् पूर्वावस्थाका नाम परिवर्त्तन कर खरतर गच्छ में जिन ८४ नन्दियों * में से नाम स्थापना करनेकी प्रणाली है उन चौरासी में से ४४ नन्दियों में नाम स्थापना करने का सौभाग्य सूरि-महाराज को प्राप्त हुआ था। प्रत्येक नन्दि में २०।२५ साधुओं के दीक्षित होने का अनुमान किया जाय तो भी सूरिजी के हस्त-दीक्षित और उपसम्पदा प्रहित साधुओं की संख्या लगभग एक हजार से ऊपर ही होती है।

यह बात केवल कल्पना ही नहीं, किन्तु तथ्य के बहुत सन्निकट है क्योंकि क्षमाकल्याणजी अपनी पट्टावली में आपके ६५ शिष्य होने का उल्लेख करते हैं। हमने भी बहुतसी खोज शोध करके

×'श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञान भण्डार' बम्बई से प्रकाशित 'यु० जिनचन्द्रसूरि जीवन चरित्र' पृ० ११ में है।

* ४४ नन्दिके नाम परिशिष्ट में 'विहार पत्र' के साथ देखिये। इसके विषय में कभी स्वतन्त्र लेख में आलोचना करेंगे।

उनमें से २५-३० शिष्यों के नाम एकत्र किये हैं, जिनका संक्षिप्त परिचय आगे लिखा जायगा। प्रत्येक शिष्य के अगर कमसे कम पांच-पांच शिष्य प्रशिष्य भी अनुमानित † किये जायं तो ५०० के लगभग उनकी संख्या भी हो जाती है। तो उससमय और भी कई शाखाओं के जैसे:—जिनदत्तसूरि-संतानीय, जिनकुशलसूरि—क्षेमकीर्ति-शाखा, सागरचन्द्रसूरि-शाखा, जिनभद्रसूरि-शाखा, जिनहंससूरि-शाखा और जिनमाणिक्यसूरि-शाखा× के विद्वान,

† सूरिजी के समय में उनके प्रशिष्यों के भी प्रशिष्य विद्यमान होने के प्रमाण मिलते हैं। जैसे—उ० श्रीसमयसुन्दरजी आपके प्रशिष्य थे और उनके शिष्य वादी हर्षनन्दनजी के शिष्य जयकीर्तिजी आदि भी सूरिजी के ही दीक्षित थे। सूरिजी के कई शिष्यों के शिष्य प्रशिष्यों आदि की संख्या १०-१५ तक की भी मिली है तथापि हमने साधारणतया गड़ में केवल ५ ही लिखी है।

× एक प्राचीन पट्टावली में लिखा है कि इन्हों ने एक ही नन्दि में ६४ साधुओं को दीक्षा दी थी और १२ मुनियों को "उपाध्याय" पद प्रदान किया था। इसी ग्रंथ के २३ वें पेज में आपके २४ शिष्य होने का उल्लेख कर चुके हैं उनमें से हमें ६ नाम उपलब्ध भी हुए हैं:—

(१) कविकनक:—मेघ कुमार चौढालिया कर्त्ता।

(२) विनयसोम:—इनका "फलोधी पार्श्व स्त०" गा० १७ का हमारे संग्रह में है।

(३) वा० विनयसमुद्र:—इनका "ऋषभ स्त०" गा० २२ का हमारे संग्रह में है। इनके वा० हर्षशील (विशाल), गुणरत्न आदि कई शिष्य थे। हर्ष विशालजीके शिष्य उ० ज्ञानसमुद्रके शिष्य वा० ज्ञानराजके शि० लब्धोदयजी अच्छे कवि हुए हैं। इनकी "पद्मिनी चरित्र चोपई" (सं० १

पूनम), गुणावली चौ० (उदयपुर) उपलब्ध है, इस चौपई में आपके इससे पूर्व अन्य छः चौपईयें रचने का उल्लेख है । गुणरत्नजी ने सं० १६३० में श्री जिनचन्द्रसूरिजी के आदेश से संयति सन्धि (पत्र ४ स्वामी नरोत्तमदास जी एम० ए० के संग्रह में) बनाई । इनकी विशिष्ट कृति 'नमस्कार प्रथम पद अर्था" अनेकार्थरत्न मञ्जूषा" नामक ग्रन्थमें छपी है । इनके शिष्य वा० रत्नविशाल शि० त्रिभुवनसेन शि० मतिहंस शि० महिमोदय जी भी अच्छे कवि हुए हैं, इनके श्रीपाल रास (सं० १७२२ मिगसर तेरस जहानाबाद), गणित साठिसो, जन्मपत्री पद्धति (पत्र ११४ श्रीपूज्यजी के संग्रह में), सं० १७२२ ज्योतिष रत्नाकर, पट-पंचासिकावृत्तिबाला० (श्रीपूज्यजी सं०) आदि ग्रन्थ प्राप्त हैं । त्रिभुवनसेनके गुरु भ्राता लब्धि विजय इनके विद्यागुरु थे ।

(४) भुवनधीर :—हमारे संग्रह की आदिनाथ स्तोत्र की लेखन प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि ये भी श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के शिष्य थे ।

(५) वा० कल्याणधीर :—ये पारख गोत्रीय, अच्छे विद्वान थे । 'इनके शिष्य (१) धर्मरत्न कृत जयविजय चौपई (सं० १६४१ विजया दशमी, आगरा) उपलब्ध है। (२) भणसाली गोत्रीय वा० कल्याणलाभजी थे इनके शिष्य (A) कमलकीर्ति ने जिनवल्लभसूरिजी कृत वीर चारित्र बाला० (सं० १६९८ श्रा० कृ० ९ जैसलमेर में कृत और लिखित प्रति बाबू अमरचन्दजी बोथरा नाथनगर, के संग्रह में है), महीपाल चरित्र (स० १६७६ विजयादसमी हाजीखानडेरा—इनके शिष्य चारित्रलाभ लिखित, जयचन्दजी के भण्डार में है) और कल्पसूत्र टबार्थ पत्र ९९ (सं० १७०१ मरोट में शि० चारित्रलाभ पठनार्थ लि० जयचन्दजी के भण्डार में है) । इनके शि० सुमतिलाभ, शि० सुमतिमंदिर, शि० जयनंदन शि० लब्धि सागर कृत ध्वजभुंजग कुमार चौ (स० १७७० आश्वन वदी ९ चूडा) उपलब्ध है (B) कुशलधीरजी एक उत्तम कवि हुए हैं, इनके रचित (१) भोज चोपई (सं० १७२९ माघ वदि १३ सोजत, शि० धर्मसागर

दीक्षित किये थे * अतएव उन सब की संख्या भी कम से कम उतनी ही मान ली जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

सूरिजी की दीक्षित साध्वियों के नाम की 'नन्दियें' अद्यावधि हमें उपलब्ध नहीं हैं अतः हम उनकी संख्या का ठीक ठीक निर्णय नहीं कर सकते किन्तु साधु-संघ से साध्वियों की संख्या भी कम नहीं कही जा सकती। इस आंकड़े से अगर संख्या की कुछ न्यू-

---

आग्रहात्) (२) लीलावती रास (सं० १७२८ सोजत) (३) पृथ्वीराज कृत वेलि बाला० (सं० १६९६ विजया दशमी शिष्य भावसिंह के आग्रह से, नाहरजी के संग्रहमें गु० नं० ९०)। (४) उद्यम कर्म संवाद और अनेक स्तवनादि भी उपलब्ध है। (C) कनकविमल—इनका नाम वेलि बाला० की प्रशस्ति में है। (५) धर्मप्रमोद—इनकी कृति "महाशतक श्रावक सन्धि" हमारे संग्रहमें है और चैत्यवन्दन-भाष्य वृत्ति (तत्वार्थ दीपिका सं० १६६४ पो० ब० १०) बीकानेर ज्ञान-भण्डार में है।

(६) क्षेमरंगः—इनके लिखित बन्धस्वामित्व-स्तवावचूरि श्रीपूज्यजी के संग्रह में है।

श्रीजिनमाणिक्यसूरि शाखा में और भी कतिपय विद्वान और कवि हुए हैं। सं० १७०० में जिनरंगसूरिजी से गच्छभेद हुआ उस समय से कुशलधीरजी आदि के अतिरिक्त जिनमाणिक्यसूरिजी का शिष्य-परिवार उनका आज्ञानुयायी हो गया था।

* 'क्रियोद्धार नियमपत्र' से ज्ञात होता है कि दीक्षा देने का अधिकार गच्छनायक को ही था यदि अन्य दीक्षित करते तो भी उनकी आज्ञा से, और खासकर बड़ी दीक्षा तो सूरिजी ही देते थे। जिनसिंहसूरिजी दीक्षित राजसमुद्रजी और सिद्धसेनजी को बड़ी दीक्षा भी श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने दी थी।

नता भी रही हो तो भी पूर्व दीक्षित आज्ञानुवर्ती साधु-साध्वियों की सख्या मिला देने से कुल २००० से ऊपर हो सिद्ध होती है।

'विहार पत्र' के साथ जिन ४४ नन्दियो के नाम हैं वे नाम भी अनुक्रम से लिखे गये हैं, यह एक महत्व की बात है। इससे उस समय के सारे विद्वानो के दीक्षा-समय का निर्णय करने मे सुगमता और सहायता मिलती है, अगर इसके साथ सवतानुक्रम रहता तो सोने मे सुगन्ध का सा काम होता, अस्तु।

हम इस प्रकरणमे नन्दि-अनुक्रम के अनुसार ही सूरिजी के शिष्य समुदाय का सक्षिप्त परिचय देंगे।

(१) सकलचन्द्र गणि—आप रीहड गोत्रीय, सूरिजी के प्रथम शिष्य थे। आगरे से दिये हुए स० १६२८ के पत्र मे, जो कि इसी ग्रथके पृ० ५३ में छपा है, आपका नाम है। आपके रचित एक गहूली गा०७ † के अतिरिक्त अभी तक दूसरी कोई कृति नहीं मिली। आपके चरणपादुके बीकानेर से ४ कोश "नाल" नामक ग्राम में सूरिजी के प्रतिष्ठित विद्यमान हैं जिसका लेख इस प्रकार है—

" • वर्षे •• ••• • सुदि ३ दिने शनै सिद्धि योगे श्रीजिनचन्दसूरि शिष्यमुख्य प० सकल चरणपादुका

---

† स० १९८६ मे जब रतलाम से श्री० नथमलजी गादिया परमपूज्य आचार्य श्रीजिनहरसागरसूरिजी के दर्शनार्थ बीकानेर आये थे तब उनकी धर्म पत्नी ने व्याख्यान के समय यह गहूली गाई थी, हमने वही सग्रह कर ली है, इसकी हस्तलिखित प्रति हमें नहीं मिली।

श्रीखरतरगच्छाधीश्वर युगप्रधान प्रभुश्री····श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः प्रतिष्ठितं·······हड़ जयवंत लूणाभ्यां कारिते ॥"

स्तूप के आले का मुख संकीर्ण होने से यह लेख बहुत प्रयत्न करने पर भी संपूर्ण नहीं पढ़ सके इससे इनका स्वर्गवास का संवत् निर्णय न हो सका।

प्रख्यात कविश्रेष्ठ महोपाध्याय *समयसुन्दरजी* आपके ही शिष्यरत्न थे। इनका जन्म साचौर वास्तव्य पोरवाड़ शाह रूपसी की भार्या लीलादेवी की कुक्षि से हुआ था। लघुवयमें आपने सूरिजी के पास चारित्र ग्रहण किया। इनके विद्यागुरु वा० महिमराजजी और वा० समयराजजी थे। आपकी विद्वताकी प्रतिभा बहुत बढ़ी चढ़ी थी। सं० १६४९ में सूरिजीकेसाथ आप भी लाहौर पधारे थे। वहां अकबर की सभा में "अष्टलक्षी" जैसा विद्वत्तापूर्ण ग्रंथ सुनाकर मिती फाल्गुन शुक्ला २ को वाचक पद प्राप्त करने का उल्लेख हम इसी पुस्तक के आठवें प्रकरणमें कर चुके हैं। सिन्धु देशमें विहार करके मखनूमशेख को प्रतिबोध देकर पांचनदी के जलचर जीवों और विशेषतया गायों की रक्षाका प्रशंसनीय कार्य किया था। जेसलमेर में रावल भीमजी को उपदेश देकर सांडा जीवों को मोंनोसे मारते हुए छुड़ाया था। मण्डोवर व मेड़ताधिपति को रंजित करके शासन शोभा बढ़ाई थी। सं० १६७१ में जिनसिंहसूरिजी ने "लवेरे" में आपको उपाध्याय पद दिया था। सं० १६८७।८८ में दुष्काल के कारण साधु-धर्म में किञ्चित् शिथिलता आ गयी थी उसका परित्याग करते हुए सं० १६९१ में क्रियोद्धार किया।

आपने हजारों स्तवन सझाय और सैकड़ों ग्रंथ रच कर साहित्य की अनमोल सेवा की थी। साहित्य-संसार में इनका नाम सदा स्वर्णाक्षरोंसे अङ्कित रहेगा। आपका विस्तृत जीवन चरित्र भविष्य में हम आपकी कृतियों के साथ प्रकाशित करेंगे अतः यहां विशेष नहीं लिखा गया है। सं० १७०२ में चैत्र शुक्ला १३ को अहमदाबाद में आप स्वर्ग सिधारे।

संवत् अनुक्रम से आपकी कृतियों की सूची इस प्रकार है :—

"सं० १६४१ भावशतक (खंभात), सं० १६४६ लाहौर में अष्ट-लक्ष्मी (अर्थ-रत्नावली), सं० १६५१ जिनकुशलसूरि-अष्टक और २४ जिन २४ गुरु नाम गर्भित पार्श्वस्तवन, सं० १६५२ विजयदशमी खंभातमें जिनचन्द्रसूरि गीत, सं० १६५६ अक्षयतृतीया जैसलमेर में २७ राग गर्भित स्तवन, सं० १६५७ चैत्रवदी ४ आबूतीर्थयात्रा स्तवन, सं० १६५८ चैत्री पूर्णिमा शत्रुंजय यात्रा स्तवन, और विजय-दशमी अहमदाबाद में संघपति सोमजी अभ्यर्थना से चौबीसी और इसी संवत में अष्टापद स्तवन, सं० १६५९ विजयदशमी खंभात में शांबप्रद्युम्न चौपइ, सं० १६६१ चैत्र वदी ५ नागोर में पार्श्वनाथ स्तवन, सं० १६६२ सांगानेरमें दानादि चौढालिया, इसी संवतके माघ महीने में घंघाणी पद्मप्रभु स्तवन, सं १६६३(४?) रूपकमाला चूर्णि (वृति जे० भं० सू०)सं० १६६४ फाल्गुन-आगरामें करकंडु प्रत्येक बुद्ध रास, चैत्र वदी १३ को दुमुह प्रत्येक बुद्ध रास, जंबू रास (जेसल०भं०)और नमि प्रत्ये० रास,सं० १६६५ ज्येष्ठ शुक्ल १५को नगगइ प्रत्ये० रास,इसी संवत् में चैत्र शुक्ल १० अमरसर में चातुर्मासिक व्याख्यान पद्धति,

सं० १६६६ वीरमपुरमें कालिकाचार्यकथा, सं० १६६७ मि० सु० १० मरोट में पौषधविधि स्तवन, इसी संवत् में उच्चनगर में श्रावकाराधना, सं० १६६८ मुलतान में मृगावतीरास और माघ शुक्ल ६ को यहां ही कर्म-छत्तीसी, सं० १६६६ सिद्धपुर में पुण्यछत्तीसी, यहां ही समाचारीशतक नामक विशाल ग्रंथ रचना प्रारम्भ किया, सं० १६६६ (?) शील छत्तीसी, सं० १६७० आसोज अहमदाबाद में नववाड शील सज्झाय, सं० १६७१ आबू स्तवन, सं० १६७२ मेडता, समाचारी शतक की समाप्ति, इसी समय ही सिंहलसुत-प्रियमेलक रास बनाया, इसी संवतमें पौषदशमी को यहां पर ही विशेषशतक, सं० १६७२(३?) भादवा में पुण्यसारचौपई, सं० १६७३ वसंत मेडतामें ही नलदमयंती चौपइ और कार्तिक शुक्ल ५ को गाथालक्षण, संवत १६७४ मे भी यहीं विचारशतक, सं० १६७६ मिगसर राणकपुर यात्रा स्तवन,- (सं० १६७७ ज्येष्ठ वदी ५ प्रतिष्ठासमय में मेडते में थे देखो 'जैनलेख संग्रह' लेख ङ्क ४४३) सं० १६७७ माह महीना साचोरमें महावीर स्तवन, यहीं सीताराम चौ० की १ ढाल, (सं० १६७६ भादवा वदि ११ गुर्वावली पत्र १ स्वयं लिखित हमारे संग्रहमे) सं० १६८१ नभ मास जैसलमेर में गणधरवसही स्तवन, इसी संवत में यहीं वल्कलचीरीरास और मौनएकादशी स्तवन, सं० १६८१ कार्तिक शुक्ला १५ को लोद्रवपुर यात्रा स्तवन, सं० १६८२ श्रावण नागोरमें शत्रुंजयरास, इसी वर्ष तिमरीपुर मे वस्तुपाल-तेजपाल रास, सं० १६८३ मिगसर बीकानेरमें आदिनाथ स्तवन, संवत् १६८३ (८१-८६ पाठान्तर) यहां पर ही श्रावक १२ व्रत कुलक, सं० १६८४ श्रावण लूणकरणसर में दुरियर

वृत्ति, इसी संवत में यहीं संतोषछत्तीसी और कल्पसूत्र पर कल्पलता नामक वृत्तिका प्रारम्भ, सं० १६८५ फाल्गुनमें यहीं विशेषसंग्रह, इसी संवत् मे विसंवादशतक और बारह व्रत रास (जे० भं० सू०) सं० १६८५ रिणी में 'यति आराधना' और यहीं कल्पलतावृत्ति संपूर्ण की, सं० १६८६ गाथासहस्री, सं० १६८७ पाटणमें जयतिहुअण-वृत्ति, इसी संवत् में भक्तामर सुबोधनी वृत्ति, यहीं विशेषशतक लेखन समय दुष्काल वर्णन श्लोक, सं० १६८८ अहमदाबाद में दुष्कालवर्णन (गा० ३६) 'यहीं कार्तिक मास नवतत्त्वशब्दार्थ वृत्ति, सं० १६८६ अहमदाबाद में हो स्थूलिभद्र सझाय और राजधानी में दुःखित गुरु वचनम्, सं० १६६० खम्भातमें सवैयाछत्तीसी, सं० १६६१में यहीं पर दशवैकालिक सूत्र वृत्ति, काती वदी ३ थावच्चा चौ०, दिवाली को ४७ दोप सझाय, सं० १६६२ माधव महीनेमें यहीं रघुवंश वृति. सं० १६९३ ज्येष्ठ में अहमदाबाद में संदेहदोलावली पर्याय, सं० १६६४ दिवाली जालोर में वृतरत्नाकरवृत्ति, यहीं चौमासे में क्षुल्लककुमार रास, सं० १६६५ जालोरमें ही चम्पकश्रेष्ठि चौपइ, सप्तस्मरण वृति (सुखबोधिका), सं० १६६५ फाल्गुण शुक्ला १५ को प्रल्हादनपुर में कल्याणमंदिर वृत्ति, आंकेठ में गौतमपृच्छाचौपइ, सं० १६६६ नभमास वदि अहमदाबाद में दण्डकवृत्ति, आसोजमें धनदत्त चौपई, सं० १६६७ चैत्र में वहीं साधुवंदना, सं० १६६८ श्रावण शुक्ल ५ को पुंजरत्न ऋषि रास इसी संवत मे वहीं आलोयण छतीसी, सं० १७०० माह मासमें वहां द्रौपदीचौपइ की वृद्धावस्था होने पर भी रचना की। वहीं पर आपका स्वर्गवास हुआ।

बिना संवतकी बड़ी २ और उल्लेखनीय कृतियां निम्नोक्त हैं:—

(१) समाचारीशतक (२) सीतारामचौपइ (३) कल्पलता (इनका उल्लेख उपरोक्त नोंध में आ चुका है), (४) सारस्वत-रहस्य (५) सानिट धातु (६) खरतरगच्छ पट्टावली (७) विमलयमल स्तुति वृत्ति (८) अल्पाबहुत्वगर्भितस्तव स्वोपज्ञटीका (९) ऋषभभक्तामर (१०) द्रौपदी संहरण (११) महावीर २७ भव, (१२) षडावश्यक बालावबोध (१३) प्रश्नोत्तर पद (विचार जे० भं० सू०),(१४) वाग्भट्टालंकार वृत्ति (१५) भोजनविच्छत्ती, इत्यादि । छोटे बड़े स्तवन सझाय अष्टक आदि मिलाकर सैकड़ों की संख्या में हमारे संग्रहमें हैं जिन्हें यथा-समय प्रकाशित करेंगे ।

उ० समयसुन्दरजी के अनेकों विद्वान शिष्य थे जिनका परिचय कविवर के जीवनचरित्र में दिया जायगा । यहां मात्र उनके उद्भट विद्वान शिष्य वादी हर्षनंदनजी का कुछ परिचय दिया जाता है ।

वादी हर्षनंदनजी प्रकाण्ड विद्वान थे इनके विद्वत्ता की प्रशंसा कविवर भी अपनी कल्पलता-वृत्ति आदि में करते हैं । न्याय और व्याकरणके विषय में तो आपकी विद्वता विशेष उल्लेखनीय है । "चिन्तामणि महाभाष्य" जैसे महान् उत्कृष्ट ग्रंथोंको आपने अध्ययन किए थे । इनके बनाये हुए १ मध्यान्ह व्याख्या० पद्धति (सं० १६७३ पाटण) २ ऋषिमंडल वृत्ति ४ खण्ड (सं० १७०५ बीकानेर) ३ स्थानांग गाथागत वृत्ति (सं० १७०५ वा० सुमतिकल्लोल के साथ) लींबडी भं०, ४ उत्तराध्ययन वृत्ति सं० १७११ बीकानेर ज्ञान०) ५ *आदिनाथ-व्याख्यान* ६ *आचारदिनकरप्रशस्ति* ७ शत्रुंजय

यात्रा परिपाटी स्तवन सं० १६७१, तथा गौड़ीस्त० १६८३ एवं अन्य स्तवन गहुंलियां इत्यादि उपलब्ध हैं।

(२) नयविलासः—इनका नाम भी आगरे से दिये हुए पत्र में आता है। इनका बनाया हुआ लोकनाल-बालावबोध (सं० १६५४ लिखित) श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भंडार, बीकानेर में है।

(३) ज्ञानविलासः—आपके शिष्य समयप्रमोदजी कृत (१) जिनचन्द्रसूरि निर्वाण रास (२) चौपर्वी चौपई (सं० १६७३ जूठा ग्रामे पत्र १४ स्वयं लिखित) बीकानेर ज्ञान भण्डार में है, (३) अभयदेवसूरि कृत साहम्मीकुलक टबा (सं० १६६१ फा० कृ० ७ वीरम पुरे कृत व लिखित), (४) जिनचन्द्रसूरिजी गीत (सं० १६४६) इत्यादि, छोटी मोटी कई कृतियां उपलब्ध हैं।

हमारे संग्रहस्थ भगवती सूत्र की प्रशस्ति (सं० १६७६) से ज्ञात होता है कि ज्ञानविलासजी के लब्धिशेखर, ज्ञानविमल, नयनकलस आदि और भी कई शिष्य थे।

(४) हर्षविमलः—इनका नाम सं० १६२८ के आगरे वाले पत्र में आता है।

इनके शिष्य श्रीसुन्दरजी थे जिनका बनाया हुआ अगड़दत्त प्रबन्ध पत्र ६ हमारे संग्रह में है और छोटी-कृतियां भी कई उपलब्ध हैं।सं० १६६१ मि० व० ५ के लेख में भी आपका नाम आता है (जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भा० २ ।

(५) कल्याणकमलः—इनका नाम भी उपरोक्त पत्र में आता है। इनका (१) "जिनप्रभसूरि कृत षट्भाषा स्त० अवचूरि" (पत्र २

हमारे संग्रह में है)। (२) सनत्कुमार चौपई तथा नेमिनाथ स्त०, ऋषभ स्त० आदि भी उपलब्ध हैं।

(६) वा० तिलककमलः—इनके शिष्य वा० पद्महेम (गोलच्छा गोत्रीय) थे। जिन्होंने वाड़ीपार्श्वनाथ (पाटण), और जिनदत्तसूरि स्तूप (मुलतान) की प्रतिष्ठा की। उनके शिष्य (१) वा० दानराज (गोलच्छा गोत्रीय) (२) वा० निलयसुन्दर (३) वा० नेमसुन्दर (४) प० आनन्दवर्द्धन (५) हर्षराज आदि बहुतसे शिष्य हुए। वा० दानराजजी के शिष्य वा० हीरकीर्ति—गोलच्छा गोत्रीय थे, इनका स्वर्गवास सं० १७२६ आ० शु० १४ को जोधपुर में हुआ। इनके शिष्य (A) वा० राजहर्ष (B) मतिहर्ष थे। (A) वा० राजहर्षके शिष्य वा० राजलाभजी अच्छे कवि हुए हैं, इनकी धन्ना-शालिभद्र चौपई (सं० १७२६ आ० शु० ५ वणाड, बीकानेर ज्ञान-भण्डार) भद्रानद संधि आदि अनेक कृतिया उपलब्ध हैं, जिनका परिचय स्वतन्त्र निबन्ध में देंगे। राजलाभजी के शिष्य पं० राजसुन्दर, क्षमाधीर और उनके शिष्य गुणभद्र, नयणरंग आदि थे। हीरकीर्तिजी के दूसरे शिष्य (B) मतिहर्षजी के वा० भुवनलाभ और महिमामाणिक्य नामक दो शिष्य थे। वा० भुवनलाभजी के तेजसुन्दर और महिमा-माणिक्यजी के महिमसुन्दर, मुक्तिसुन्दर, श्रीचन्द्रादि शिष्य थे।

(७) नयनकमलः—इनके शिष्य जयमन्दिरजी के शि० कनककीर्ति अच्छे कवि हुए हैं। जिनका (१) नेमिनाथ रास (स० १६९२ माघ सुदि २ बीकानेर), (२) द्रौपदी रास (सं० १६९३ वैसाख सु० १३ जैसलमेर) आदि उपलब्ध हैं।

(८) युगप्रधान श्रीजिनसिंहसूरि—ये बड़े प्रतिभाशाली और दिग्गज विद्वान थे। गुरुदेव के साथ वर्षों तक रहकर इन्होंने विनय, विद्वता, व्याख्यानकलादि गुण प्राप्त किये थे। संक्षेप में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि सूरिजी के अधिकांश गुण इन में आ गये थे। आपने सम्राट् अकबर के दरबार में सूरिजी से भी पहले जाकर उन्हें अपनी लोकोत्तर प्रतिभा से जैन-धर्मका अनुरागी बनाया था। सं० १६२८ के आगरे के पत्र में सूरिजी के साथ आपका भी नाम पाया जाता है।

इनका जन्म सं० १६१५ के मार्गशीर्ष शुक्ला १५ को खेतासर ग्राम में हुआ। इनके पिताका नाम चोपड़ा गोत्रीय शाह चापसी और माताका नाम चापल देवी था। इनका मूलनाम मानसिंह था, इससे सम्राट अकबर इन्हें इसी नाम से सम्बोधन किया करते थे। हम इस पुस्तक के "पाचवें प्रकरण" में लिख चुके हैं कि स० १६२३ में जब श्रीजिनचन्द्रसूरिजी बीकानेर पधारे थे, तब आपने केवल आठ वर्षकी अवस्था में वैराग्य वासित होकर सूरि-महाराजके पास भागवती-दीक्षा ग्रहण की थी। सूरिजी ने इनका नाम "महिमराजजी" रखा और विद्वान, निर्मल-चरित्रपात्र और विनयवान होने के कारण स० १६४० में माघ शुक्ला ५ को जैसलमेर में सूरिजी ने इन्हें वाचक पद से अलंकृत किया।

"श्रीजिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास"से जाना जाता है कि सम्राट अकबर के आमन्त्रण से सूरि-महाराज ने अन्य ६ साधुओंके

साथ आपको ही सम्राट के दरवार में भेजा था। इनके दर्शन से सम्राट अत्यन्त प्रसन्न हुए और प्रतिदिन धर्म-चर्चा करने लगे।

हम सातवें प्रकरणमे लिख चुके हैं कि जब शाहजादा सलीम के मूल नक्षत्र मे कन्याका जन्म हुआ था, तब मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के प्रबन्ध से आपने ही दोषनिवारणार्थ 'अष्टोत्तरी-स्नात्र' सविधि सम्पन्न कराया था। सूरिजी की आज्ञा से सम्राट के साथ काश्मीर-विहार कर जैन धर्म की अतिशय उन्नति की। गजनी और गोलकुण्डा जैसे देशोंमें तथा काबुल पर्यन्त अमारि उद्घोषणा करवाई। रास्तेमे आये हुए तालाबों के जलचर जीवों की रक्षा की। काश्मीर विजय करने के पश्चात् श्रीनगर मे सम्राट को उपदेश देकर आठ दिनकी अमारि उद्घोषणा प्रकाशित कराई।

इनके सहवास से सम्राट पर अमित प्रभाव पडा उन्होने सूरिजीसे निवेदन कर इन्हे आचार्य-पद दिलाया, अपने मुखसे "जिनसिंहसूरि" नाम स्थापन करनेका निर्देश किया तथा उस अवसर पर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र ने जो करोडो रुपये व्यय कर उत्सव मनाया, वह सब अगले प्रकरणोंमे लिख चुके हैं। अत यहा दुहराना अनावश्यक है।

इसके बाद कहीं सूरिजी के साथ और कहीं उनकी आज्ञा से अन्यत्र चातुर्मास किये, अनेक शिलालेखों और ग्रन्थ प्रशस्तियो मे, आपका नाम मिलता है।

स० १६५६ के मिती मार्गशीर्ष शुक्ला १३ को बीकानेर मे बोथरा गोत्रीय धर्मसी शाहकी भार्या धारलदेवी के पुत्र राजसिंह को दीक्षा दी। वहा से विहारकर जब सूरिजी के पास आए, तब उन्हे बडी दीक्षा दिलाई और 'राजसमुद्र' नाम रखा।

सं० १६६१ के माघ शुक्ला ७ को बीकानेर के शाह वच्छराज के पुत्र चोला को अमरसर मे दीक्षा दी, उसके साथ उसके बड़े भाई विक्रम और माता मिरगादेवी ने भी दीक्षा ली थी। थानसिंह श्रीमाल ने दीक्षा-महोत्सव किया। चोला को राजनगर मे श्रीजिन-चन्द्रसूरिजी ने बड़ी दीक्षा देकर सिद्धसेन मुनि नाम दिया। उप-रोक्त राजसमुद्रजो और सिद्धसेनजी दोनों जिनसिंहसूरिजी के पट्टधर आचार्य बने, वे "जिनराजसूरि" और "जिनसागरसूरि" नाम से प्रसिद्ध हुए।

सं० १६६०-६१ के लगभग (इलाही सन् ४९ ता० ३१ खुरदाद) अषाढो अष्टान्हिका फरमान के खो जाने से इन्होंने नया फरमान सम्राट अकबर से प्राप्त किया था, जिसका उल्लेख उसी फरमान मे सम्राट ने किया है।

सं० १६६२ के चैत्र कृष्णा ७ को जब बीकानेर में सूरिजी ने श्रीऋषभदेवस्वामी के मन्दिर की प्रतिष्ठा की, उस समय आप भी सूरिजी के साथ थे, ऐसा यहा के लेखों से जाना जाता है। सं०१६६१ के लख मे भी आपका नाम है।

सुप्रसिद्ध विद्वान कविवर समयसुन्दरजी के आप विद्या-गुरु थे और आपने सं० १६७१ मे लवेरे में उन्हे उपाध्याय पद दिया था।

राजसमुद्र कृत "श्रीजिनसिंहसूरि गीत" से ज्ञात होता है कि सम्राट जहाँगीर को अपनी अलौकिक प्रतिभा से प्रतिबोध देकर अभयदान का पटह बजवाया था *। सम्राट ने प्रसन्न होकर

* वचन चातुरी गुरु प्रति बूझवी, शाहि सलेम नरिन्दो जी।
अभयदान नउ पड़ह बजावियो, श्रीजिनसिंह सुरिन्दो जी ॥२॥
(राजसमुद्र कृत गीत)

अपने पिता का अनुकरण करते हुए आचार्य-महाराज को मुकरबखान नवाब को भेज कर युग-प्रधान पद दिया था ×।

सं० १६७० का चातुर्मास गुरुदेव के साथ वेनातट (बीलाड़ा) में किया था। उसके पश्चात् गच्छनायक-पद प्राप्त कर अनेक स्थानों में विहार करने लगे। सं० १६७१ में मेड़ता वास्तव्य चोपड़ा गोत्रीय शाह आसकरण ने शत्रुञ्जय महातीर्थ के यात्रार्थ संघ निकालने का विचार किया तब आपको भी वीनति-पत्र भेज कर उस संघ में सम्मिलित हो गिरि-राज की यात्रार्थ बुलाए थे। मिती पौष शुक्ला १३ को मेड़ते से संघ ने प्रयाण किया और गूढा आए वहां बीकानेर का विशाल संघ भी इस संघ के साथ हो गया। स्थानों २ पर देववन्दन पूजनादि कर आबू तीर्थ की यात्रा का लाभ लेते हुए मिती चैत शुक्ला १५ के दिन गिरिराज श्रीसिद्धाचलजी पर युगादि-जिनेश्वर के दर्शन किए।

संघपति आसकरण को गच्छनायक श्रीजिनसिंहसूरिजी ने 'संघपति' पद प्रदान किया ※।

गिरिराज की यात्रा कर खंभात आये वहां स्तंभना पार्श्वनाथजी के दर्शनकर पाटण, अहमदाबाद होते हुए बड़ली पधारे, वहां

× जेहनो युग परंपरा वितने विषे धरी जहांगीर-सलेम संतुष्टहृदय थकइ श्रीमुकरबखानइ पोते मोकली महोत्सव पूर्वक युगप्रधान पदवी (दीधी) इहवा श्रीजिनसिंहसूरि। [जिनरंगसूरि राज्ये लि० चौमासी व्याख्यान]

श्रीसिंघ रे युगप्रधान पदवी लही, आया मुकरबखान रे।
साजग मन चिन्ता हुआ, मल्या दुरजन मान रे॥ ४॥
[हर्षनन्दन कृत गीत]

※ इस यात्राके वर्णनात्मक दो "चैत्य परिपाटी स्तवन" हमारे संग्रहमें हैं।

श्रीजिनदत्तसूरिजी के चरण-पादुकाओं के पुनीत दर्शन किए। वहा से विहार कर गच्छनायक श्रीजिनसिंहसूरिजी सीरोही पधारे। सघ ने हर्षित होकर उत्सव पूर्वक नगर-प्रवेश कराया। वहा क राजा राजसिंह ने आपकी खूब भक्ति की। वहा से विहार कर जालोर पधारे, श्रीसघ ने समारोह पूर्वक आपका स्वागत किया वहा से खडप और द्रुणाडइ होत हुए घंवाणी पधार। वहा प्राचीन [इन मूर्तियो की प्राचीनता आदि के विषय मे "समयसुन्दरजी कृत घवानी स्तवन" में अच्छा वर्णन है।] मूर्तियो-५ के दर्शन किये। वहा से अनुक्रम से विहार कर बीकानेर पधारे।

शाह वाघमल ने आपका धूमधाम से प्रवेशोत्सव किया। स० १६७४ का चातुर्मास यहीं किया, धर्म प्रभावना अच्छी हुई।

सम्राट जहागीर बहुत वर्षों से आप के दर्शनाभिलाषी थे। आप का चातुर्मास वीकानेर मे ज्ञान होने से उसने अपने प्रधान उमरावो को शाही-फरमान देकर भेजे और उन को आग्रह पूर्वक दर्शन देने की विनती लिखी। शाही-पुरुष वीकानेर में आए और फरमान देते हुए आगर पधारने को वीनति की *। वीकानेर का सघ एकत्रहोकर

---

* दिव श्रीशाहि सप्रेम, मानसिंह सु धरि प्रेम।
वड वडा साहस धीर, मूकइ आपणा वजीर ॥१॥
तुम्ह बीकाणइ जाउ, मानसिंहजी कु बुलावो।
इक घर मानसिंह आवइ, तउ मन मुझ सुख पावइ ॥२॥
ते बीकाणइ आया, प्रणमई मानसिंह पाया।
दीधा मन महिराण, पतिशाही फुरमाण ॥३॥
मिलियउ संघ सुजाण, वाच्या ते फुरमाण।
तेड़ाया पतिशाह, सहुको धरइ उच्छाह ॥४॥
[श्रीसार कृत "जिनराजसूरिरास" स० १६८१]

फरमान पढ़ कर खूब आनन्दित हुआ। आचार्य महाराज ने सम्राट का आग्रह जान कर वहां जाना आवश्यक समझा। बीकानेर से विहार कर मेड़ता पधारे, वहां के संघ की अतिशय भक्ति देख कर एक महीने तक वहीं विराजे। उसके पश्चात् वहां से विहार कर सम्राट के पास जाने के लिये प्रयाण किया। परन्तु मनुष्य का विचारा कुछ नहीं होता दुर्दैव काल ने किसी को नहीं छोड़ा, आपका शरीर अस्वस्थ हो गया इस से आगे न बढ़ कर वापिस मेड़ता आना पड़ा। अपना आयुष्य सन्निकट जान कर उन्होंने अनशन ग्रहण कर लिया। चौरासीलक्ष जीवायोनि से क्षमतक्षामणा कर शुद्ध ध्यान में लीन हो सं० १६७४ के मिती पोष शुक्ला १३ को श्रीजिनसिंहसूरिजी स्वर्ग सिधारे। सारे संघ में शोक छा गया, क्योंकि वे एक प्रतिभाशाली और महान् प्रभावक आचार्य थे। श्रीसारजी कृत "जिनराजसूरि रास" मे लिखा है कि आप प्रथमदेवलोक* में महर्द्धिक देव हुए।

आणंदइ चउमासो करि, आया मेवड़ा बहु हित धरि।
तेड़ावइ श्रीसाहि सलेम, मेड़ता आया कुशले खेम ॥१६॥
[धर्मकीर्ति कृत "जिनसागरसूरि रास" सं० १६८१]

विशेष जाननेके लिये हमारी ओर से प्रकाशित "ऐतिहासिकजैनकाव्य-संग्रह' देखना चाहिये।

* संइ मुखि लीधउ संथारउ, कीधउ सफ़ल जमारो।
शुद्ध मनइ गहगहता, पहिलइ देवलोक पहुता ॥ १० ॥

सम्राट अकबर को जैन-धर्मानुरागी बनाने मे जिनचन्द्रसूरिजी के साथ साथ आपका भी बहुत कुछ प्रभाव था। काश्मीर विहार मे सम्राट पर इनके पवित्र चारित्र का जो प्रभाव पडा, उसी के फल स्वरूप सम्राटने सूरिजो से इन्हे आचार्य पद दिलाया था उसका हम शब्दों द्वारा वर्णन नहीं कर सकते। सम्राट जहागीर आपको बहुत सम्मान की दृष्टि से देखते थे। नवाब मुकरबखान आदि पर भी आपका गहरा प्रभाव था *।

आपने कई जगह प्रतिष्ठाएं भी की थी जिनका लेख "जैन-धातु-प्रतिमा-लेख संग्रह" आदि मे है। साध्वी विद्यासिद्धि कृत 'गुरुणी-गीत' से जाना जाता है कि उनकी गुरुणी को 'पहुत्तणी' पद आपने ही दिया था।

आपको स्तवन, सज्झायादि कतिपय छोटी कृतियां भी मिली हैं।

बोकानेर के श्री रेल दादाजी मे आपकी पादुकाऐं एक स्तूप मे प्रतिष्ठित हैं जिनका लेख इस प्रकार है :—

"सं० १६७६ वर्षे जेष्ट वदि ११ दिवे युग-प्रधान श्री ६ श्रीजिन सिंहसूरि सूरीश्वराणा पादुके कारिते प्रतिष्ठिते च ॥ शुभं भवतु ॥"

बीकानेर मे नाहटों की गुवाड़के श्री ऋषभदेवजी के मन्दिर में आपकी पादुकाए हैं, जिनका लेख इस प्रकार है :—

---

*समरइ सगला उंबरा, मुकरबखान नवाब हो।

*   *   *   *

ए पतिशाही मेवडउ, ऊभउ करइ अरदास हो।
एक घडी पडयुं नहीं, चालो श्रीजी पास हो ॥ ७ ॥

[वादी हर्षनन्दन कृत 'आलिजा गीत']

"संवत १६८६ वर्षे चैत्र वदि ४ दिने युगप्रधान श्रीजिनसिंह सूरिणां पादुके कारिते जयमा श्राविकया भट्टारक युगप्रधान श्रीजिन राजसूरिराजे।"

आपके बहुत से विद्वान शिष्य थे, जिनमें से कइयों के नाम भी हमें उपलब्ध हुए हैं। उन सब को बड़ी दीक्षा युगप्रधान श्रीजिन चन्द्रसूरिजी ने प्रदान की थी, इससे उनके नाम भी नन्दि अनुक्रम से लिखते हैं :—

(१) *हेममन्दिर*—आप प्रकाण्ड विद्वान थे। बीकानेर ज्ञान-भंडार में, आपको श्रावक श्राविकाओं द्वारा वहराये हुए ग्रन्थों की कई प्रतियें विद्यमान हैं। आपका एक श्रीजिनकुशल सूरि स्थान स्तवन गा० ६ का उपलब्ध है।

(२) *हीरनन्दन*—ये भी आपके शिष्य थे, इनके शिष्य लालचन्दजी अच्छे कवि हुए हैं, जिनकी (१) मौन एकादशी स्त० गा० १७. (सं० १६६८ लि०), (२) अदत्तादानविषये देवकुमारचौपाई (सं० १६७२ श्रा० सु० ५ अलवर, यति सूर्यमलजी के संग्रह में), (३) हरिश्चन्द्र रास (सं० १६७६ काली पूनम, घंघाणी, श्रीपूज्यजी के संग्रह में), (४) वैराग्य बावनी गा० ५३ पत्र २ (सं० १६६५ भाद्रवा सुदि १५) आदि कृतियें उपलब्ध हैं।

(३) *श्रीजिनराजसूरि*—आपका दीक्षा नाम राजसमुद्र था। आप एक प्रतिभाशाली और अच्छे विद्वान आचार्य हुए हैं। इनके रचित (१) ठाणांगवृत्ति (२) नैषध काव्य वृत्ति (सं० ३६०००) अलभ्य है और (३) धनाशालिभद्र रास (सं० १६७८) (४) जंबूरास (सं० १६६६ अहमदाबाद) (५) चौवीसी (६) वीसी आदि बहुतसी

कृतिया उपलब्ध हैं। आपका विस्तृत परिचय हमारी ओर से प्रकाशित 'ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह' मे देखना चाहिये।

(४) *पद्मकीर्ति*—ये भी आपके विद्वान शिष्य थे। इनके शिष्य पद्मरंगजी के २ शिष्य थे। (१) पद्मचंद्र —इनका जंबूरास (सं० १७१४ का० सु० १३ सरसा) उपलब्ध है। (२) रामचन्द्र—ये भी अच्छे विद्वान, कवि और वैद्यक शास्त्र वेत्ता थे। इनकी कृतियो मे वैद्य विनोद चौपाई (सं० १७२० मि० सु० १३ बुधवार, हमारे सग्रह मे) और दस पचक्खाण स्त० (स० १७३१ पोष सुदि १०) उपलब्ध है।

(५) *श्रीजिनसागरसूरि*—इनका दीक्षा नाम सिद्धसेन था। इनका विशेष परिचय प्राप्त करने के लिए भी "ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह" देखना चाहिये।

(६) *जीवरंग*—ये भी आप के शिष्य थे। सं० १६८२ के मिती मिगसर सुदि १३ को इनके लिखी हुई "मुनि मालका" पत्र ८ (हमारे संग्रह मे अ० प्र० नं० १२२) उपलब्ध है।

जिनसिंहसूरिजी के शिष्यों के नाम और भी कई ग्रन्थो एवं प्रशस्तियों मे पाये जाते हैं, परन्तु खरतर गच्छ मे इस नाम के तीन आचार्य भिन्न २ शाखाओं में उसी समय हो गए हैं। इस लिये अनिश्चित होने से उनका परिचय नहीं दिया गया है।

(९) **समयराजोपाध्याय**—आप सूरिजी के प्रधान शिष्यो मे से थे। आगरे के सं० १६७८ वाले पत्र मे आपका नाम भी है। आप अच्छे विद्वान् थे, "अष्टलक्षी" की प्रशस्ति मे इन्हें कविवर.

समयसुन्दरजी अपना विद्यागुरु बतलाते हैं। इनके बनाई हुई कृतियो मे (१) धर्ममजरी चौ० (स० १६६२ मा० सु० १० बीकानेर), पर्यूषण व्याख्यान-पद्धति पत्र १२ (हमारे सग्रहमे), शत्रुंजय ऋषभ-स्त० गा० १४ अवचूरि और सस्कृत व भाषा के कई स्तवन उपलब्ध हैं।

स० १६७७ ज्येष्ठ वदी ५ मेडता के शिलालेख मे आपका नाम आता है। इनके शिष्य अभयसुन्दर, उनके शिष्य कमललाभोपाध्याय शि० लब्धिकीर्ति शि० राजहस शि० देवविजय शि० चरणकुमारके लिखी हुई "सारस्वत" की प्रति श्रीपूज्यजी के सग्रहमे है।

(१०) धर्मनिधानोपाध्याय—इनका नाम भी आगरा-वाले पत्रमे होनेसे स० १६२८ के पूर्व दीक्षित होना सुनिश्चित है। इनका "जीरावला पार्श्व स्त०" और "चतुर्विंशति जिन० स्त०" (प्राकृत) उपलब्ध हैं। इनके शिष्य (१) सुमतिसुन्दर का शान्तिस्तवन (स० १६५० का० सु० १३ वीरमपुर) और अन्य कई छोटी कृतिया उपलब्ध हैं। (२) धर्मकीर्ति—ये अच्छे कवि थे। इनकी कृतियो (१) नेमिरास (स० १६७५ फा० सु० ५ रवि) (२) मृगाङ्क पद्मावती चौ० (अपूर्ण हमारे सग्रह मे) (३) जिनसागरसूरि रास (स० १६८१ पौष सुदी ५), (४) २४ जिन २४ बोल० स्त० (५) साधुसमाचारीबाला० (स० १२६६ मा० सु० ४ बीकानेर लि०) (६) सत्तरीसय बाला० (पत्र ४ क्षमाकल्याण भण्डार) और कई स्तवनादि उपलब्ध हैं। इनके शिष्य "दयासार" थे, जिन्होने इलापुत्रचौ० (दयासारचौ० स० १७१० नभसुदि१६सुहावानगर) और अमरसेन वयरसेन चौ०

(स० १७०६ विजया-दशमी शीतपुर) रची, क्षमाकल्याणजी के भण्डार मे है। धर्मकीर्तिजीके विद्यासार, महिमसार, राजसार आदि और भी कई शिष्य थ जिनमे राजसार कृत कुलध्वज-रास (स० १७०४ आ० सु० ५ रवि०) उपलब्ध है। (३) समयकीर्ति, इनके लि० स० १६७१ मि० व० १० "पच्चस्त्खान निर्युक्ति" बीकानेर ज्ञानभडार मे है। आपके शिष्य श्रीसोम ने "भुवनानन्द चौ०' (स० १७२५ मि० सु० ५ आसनीकोट मे अपने शिष्य सुमतिधर्म के लिए) बनाई। '

स० १६७१ वै० सु० १३ के शत्रुजय के शिलालेख में धर्मनिधान जी का नाम है। स० १६७४ मि० व० ५ जेसलमेरमे इनके साथ धर्मकीर्ति जी भी थे ऐसा वहा के लेख से मालुम होता है

(११) रत्ननिधानोपाध्याय—आपका नाम भी स० १६२८ के आगरेवाले पत्र मे है। आपका सं० १६३३ का नरहरपार्श्व स्त० उपलब्ध है। स० १६४६ म सूरिजी के साथ आप भी लाहौर गये थे, वहा मिती फाल्गुन शुक्ला २ को आपको उपाध्याय पद मिला, जिसका उल्लेख आगेके प्रकरणो में हो चुका है। आपका नाम कई प्रशस्तियो में मिलता है, जिनसे ज्ञान होता है कि आप अधिकाश सूरिजीके साथ ही रहे थे।

आप व्याकरणके प्रकाण्ड विद्वान थे। वा० गुणविनयजी ने कर्मचन्द्रमंत्रि वंश प्रबन्ध वृत्ति (१६५६ स०) मे इनको ' सांगहेमाब्दानुशासनाध्येतार " लिखा है। कविवर समयसुन्दरजी कृत रूपक-

मालाचूर्णि का आपने ही संशोधन किया था। आपके बनाये हुए बहुत से स्तवन उपलब्ध हैं।

इनके शिष्य रत्नसुन्दर थे जिनके भी कई स्तवनादि मिलते हैं।

(१२) रंगनिधान—इनका नाम 'नित्य-विनय-मणि जीवन जैन लायब्रेरी' की कालिकाचार्यकथा की प्रशस्ति मे पाया जाता है।

(१३) कल्याणतिलक—इनके पठनार्थ सं० १६३० का लिखा हुआ "मृगध्वजचरित्र" श्रीपूज्यजीके संग्रह में है।

(१४) सुमतिकल्लोल—इनकी (१) एक शुकराज चौ० (सं० १६६? चैत्र दसमी—प्रथमाभ्यास, जय० भण्डार पत्र १४) (२) स्थानांगसूत्रवृत्ति गत गाथा पर 'वृत्ति' वादी हर्षनन्दन के साथ स० १७०५ की रचित, लींबडी के भण्डार में है। (३) वीरानेर ऋषभ स्त० (स० १६६४) आदि कई कृतिया उपलब्ध हैं। आपके संशोधित पिण्डविशुद्धि की प्रति (शि० विद्यासागर पठनार्थ), श्री-पूज्यजी के संग्रह मे है। इन्हीं विद्यासागर लिखित "प्राकृतव्याकरण दोधकावचूरि" उपलब्ध है।

(१५) वा० हर्षवल्लभ—आपकी मयणरेहा चौ० (स० १६६२ महिमावती) गा० ३७७ पत्र ९ हमारे संग्रह में है। दूसरी कृति उपासक दशांग वाला० (स० १६६?) उपलब्ध है।

(१६) पुण्यप्रधान—आप भी सूरिजी के विद्वान शिष्य थे। बीकानेर आदिनाथ-प्रशस्ति लेखमें आपका नाम है। सं० १६७०

ज्येष्ठ बदि ५ मेड़ता के शिलालेख में भी आपका नाम आता है। इनका गोड़ी पार्श्व स्त० मिलता है। आपके सुमतिसागरोपाध्याय नामक विद्वान शिष्य थे जिनका सिद्धाचल स्त० गा० १२ (सं० १६८५ फा० कृ० १४) का उपलब्ध है।

सुमतिसागरजी के शिष्य (१) ज्ञानचन्द्र—अविद्त्ता चौ० (मुलतान, जिनसागरसूरि राज्ये) और प्रदेशी चौ०, ये दोनों कृतिया बीकानेर—ज्ञानभण्डार में हैं, अपूर्ण हमारे संग्रह में भी हैं। इनके शिष्य रंगप्रमोद थे जिनकी "चम्पकचौपाई" (१७१५ वै० बदि ३ मुलतान) उपलब्ध है। (२) साधुरंग—इनकी 'दयाछत्तीसी' (सं० १६८५ अहमदाबाद) हमारे संग्रह में है। वा० साधुरंगजी के शिष्य विनयप्रमोद शि० विनयलाभ (बालचन्द) थे इनकी वच्छराज देवराज चौ० (सं० १७३० मुलतान), सिंहासनबत्तीसी (सं० १७४८ श्रावण बदि ७ फलोधी, पूनमचन्दजीयति के संग्रह में है), 'सवैयाबावनी' गा० ५६ हमारे संग्रह मे है। वा० साधुरंगजी के शि० महोपाध्याय राजसागरजी थे, इनके शिष्य ज्ञानधर्मजीके शि० दीपचन्द्र गणिके शि० देवचन्द्रजी हुए। ये सुप्रसिद्ध विद्वान और अध्यात्मतत्त्वके वेत्ता थे। इनके जीवन के लिए 'देवविलास' और कृतियोंके लिये 'श्रीमद् देवचन्द्र' भाग १-२-३ देखना चाहिए। उनके अतिरिक्त हमें (१) शान्तरस-भावना (२) सप्तस्मर्ण टबा (३) आत्म-शिक्षा और कई स्तवनादि उपलब्ध हुए हैं। श्रीमद् देवचन्द्रजीके मनरूप, विजयचन्द्र और रायचन्द्र आदि कई शिष्य थे। विजयचन्द्रके रूपचन्द्र नामक शिष्य थे।

(१७) **महो०सुमतिशेखर**—इनके शि० (१) ज्ञानहर्ष जी थे, जिन्होंने खेतसी शिष्यके साथ 'पर्युषण व्या० पद्धति' पत्र (लिखा १२ सं० १७०५ प्र० आ० कृ० १४ बुध जिनरत्नसूरि राज्ये), हमारे संग्रह में है। इन्हीं ज्ञानहर्षजी का पार्श्वस्त गा० १३ उपलब्ध है। (२) वा० चरित्रविजय (३) महिमाकुशल (४) रत्नविमल (५) महिमाविमल थे, इन्होंने सं० १७३३ का चातुर्मास सक्कीग्राम में किया, उस समय महिमाकुशल के (मिति भाद्रवा सुदि ६) लिखित "नाहर जटमल कृत बावनी" पत्र० श्रीपूज्यजीके संग्रहमे है।

(१८) **दयाशेखर**—इनके लिखा हुआ नवकार बाला० पत्र ४ श्रीपूज्यजीके संग्रहमे है।

(१९) **भुवनमेरु**—इनके शिष्य पुण्यरत्न शि० दया-कुशल शि० धर्ममन्दिर एक अच्छे कवि हुए हैं। उनकी कृतियोंमे (१) मुनिपतिचरित्र (सं० १७२५ पाटण), (२) दयादीपिका चौपाई (सं० १७४० मुलतान), (३) मोह-विवेक रास (सं० १७४१ मि० सु० १० मुलतान), (४) परमात्म-प्रकाश चौपई (सं० १७४२ का० सु० ४ मुलतान), (५) आतमभ्रमप्रकाश (६) नवकाररास (बृहत्स्तवनावलीमें मुद्रित), चौमासी व्याख्यान (जैन ग्रन्थावली पृ० ३४३), संखेश्वर स्त० (सं० १७२३) आदि कई उपलब्ध हैं।

(२०) **लालकलश**—इनके शिष्य ज्ञानसागर शि० कमलहर्ष के सं० १६६४ चैत्र सु० ७ राजनगर मे लिखित "पुंजराजी टीका" पत्र १११ श्रीपूज्यजी के संग्रह में है।

इनके अतिरिक्त सूरिजी के शिष्यों में राजहर्ष, निलयसुन्दर, कल्याणदेव, हीरोदय, वादी विजयराज, हीरकलश, ज्ञानविमल, (क्षमाकल्याणजी कृत पट्टावली में उल्लेख), के नाम भी पाये जाते हैं, किन्तु श्रीजिनचन्द्रसूरिजी के नामके उन्हीं की विद्यमानतामें अन्य (१) पिप्पलक शाखा, (२) आद्यपक्षीय, आदि खरतरगच्छकी शाखाओंमें कई आचार्य हो गये हैं। अतः उपरोक्त नामवाले शिष्योंका, किस शाखाओंके आचार्य के शिष्य थे यह निर्णय नहीं कर सकने के कारण परिचय नहीं दिया गया है।

सं० १६८६ में श्रीजिनसागरसूरिजी से "लघु-आचार्य" नामक शाखा निकली थी। उसके पश्चात् हमारे चरित्रनायक का अधिकांश शिष्य-परिवार उनके आज्ञानुयायी होनेका उल्लेख "श्री निर्वाणरास"* में है। युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिजी की परम्परा में अब भी पं० नेमीचन्दजी यति (बाहड़मेर) आदि कई यतिवर्य्य विद्यमान हैं, और उसी शाखाके अनुयायी हैं।

---

* खरतर गीतारथ साधु भला भला जी, मानइ मानइ पूज्य की आण।
समयसुन्दरजी पाठक परगड़ा जी, पाठक पुण्यप्रधान ॥ २ ॥
जिनचंद्रसूरि ना शिष्य मानइ सहु जी, बड़ा बड़ा श्रावक तेम।
धनवन्त धींगा पूज्य तणइ पखइ जी, बड़-भागी गुरु एम ॥ ३ ॥

विशेष जाननेके लिये हमारी ओरसे प्रकाशित 'ऐतिहासिकजैन काव्य संग्रह' देखना चाहिये।

चौदहवाँ-प्रकरण

आज्ञानुवर्ती साधु-संघ

रिजी के विशाल शिष्य-समुदाय का परिचय इसके पहले प्रकरणमे लिख चुके हैं। शिष्यो के अतिरिक्त तत्कालीन आज्ञानुवर्ती साधु संघ का भी सूरिजी के जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध है, अतएव उनका परिचय देना भी अत्यावश्यक समझ कर यहा सक्षेप मे लिखते हैं।

(१) महोपाध्याय पुण्यसागर—आप सतरहवींशताब्दि के प्रौढ प्रतिभाशाली और गीतार्थ विद्वानो मे अग्रगण्य थे। ये उदयसिंहजी की सहधर्म्मिणी उत्तमदेवी की रत्नगर्भा कुक्षि से अवतरित हुए थे। सिकन्दर लोदी बादशाह को रंजित कर ५०० बन्दियो को कारागारसे मुक्त करानेवाले जिनहंससूरिजी (स० १५५५-८२) ने अपने हस्तकमल से आपको दीक्षित किया था। हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्र-सूरिजी को सूरिपद के योगोपधान तप आदि आपने ही वहन कराये थे, जिसका वर्णन तीसरे प्रकरण मे २६ वें

पृष्ठमें कर चुके हैं। सूरिजी आपको आदर की दृष्टिसे देखते थे। समय-समयपर सैद्धान्तिक विषयों और विधि मार्ग के विषयों में आपसे परामर्श लिया करते थे *। आपके रचित निम्नोक्त ग्रन्थ उपलब्ध हैं :—

(१) सुबाहुसन्धि (सं० १६०४ श्रीजिनमाणिक्यसूरि आदेशात्), (२) मुनिमालका (जिनचन्द्रसूरि उपदेशात्), (३) प्रश्नोत्तर काव्य वृत्ति (सं० १६४०), (४) जंबूद्वीप पन्नति वृत्ति (१६४५ जैसलमेर रा०भीम राज्ये), (५) नमि राजर्षि गीत गा० ५४, (६) पैंतीस वाणी अतिशय गर्भित स्त० गा० २७, (७) पंचकल्याण स्त०, (८) पार्श्व जन्माभिषेक गा० १९ (९) महावीर स्त० गा० २१, (१०) आदिनाथ स्तवन गा० २६ (बीकानेर), (११) अजित स्तवन आदि छोटी कृतियां बहुत-सी उपलब्ध हैं। आपकी कृतियों की भाषा, प्रौढ़ और शैली प्राचीन है।

आपने सं० १६५० में जेसलमेरमें जिनकुशलसूरिजीकी पादुकाएँ प्रतिष्ठित की थी। सम्भव है कि इसके थोड़े समय पश्चात् वहीं आपका स्वर्गवास हुआ हो। क्योंकि उस समय आपकी अवस्था लगभग ८०-९० वर्ष की होगी। आपके उ० पद्मराज, हर्षकुल, जीवराज आदि कई शिष्य थे, जिनमें पद्मराजजी अच्छे विद्वान थे,

* देखो शिवनिधान कृत 'लघु विधिप्रपा'। जिनसिंहसूरिजी लि० सामाचारी विषयक पत्र हमारे संग्रह में है, जिसमें लिखा है :—

ए व्यवस्था। श्रीजिनचन्द्रसूरिजी यह श्रीपुण्यसागर महोपाध्याय श्री साधुकीर्त्युपाध्याय नइ पूछी नइ कीधी छइ सं० १६२१ वर्षे ॥

उनके बनाए हुए (१) भुवनहिताचार्य कृत रुचिरदण्डक वृत्ति (सं० १६४४), (२) अभयकुमार चौ० (१६५० जैसलमेर) (३) सनत्कुमार रास (सं० १६६६ जै० गु० क०) (४) क्षुल्लककुमारप्रबन्ध (सं० १६६० मुलतान गा० १४१ हमारे संग्रह मे) उपलब्ध है. इनके अतिरिक्त छोटी-मोटी और भी कई कृतिया मिलती हैं। स० १६४५ मे जम्बूद्वीपपन्नति-वृत्तिकी रचनामे, अपने गुरुश्री को बहुत कुछ सहाय्य दिया था।

इनके शिष्य वा० ज्ञानतिलक जी भी अच्छे विद्वान थे, सं० १६६० दीवालीके दिन उन्होंने "गौतम-कुलक" पर विस्तृत टीका रची थी। जम्बूद्वीपपन्नतिवृत्ति के प्रथमादर्शके लेखक आपही थे। इनके भी रचित कई स्तवनादि उपलब्ध हैं।

महोपाध्यायजीके विषयमे विशेष ज्ञातव्य "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" में देखना चाहिये। सं० १६१७ पाटणमे श्रीजिनचन्द्-सूरिजी कृत "पौषध प्रकरण वृत्ति" का आपने संशोधन किया था।

(२) धनराजोपाध्यायः—आप अच्छे विद्वान थे। स० १६१७ में रचित श्रीजिनचन्द्रसूरिजी की 'पौषधप्रकरण वृत्ति' के संशोधकों में आपका भी नाम आता है। 'आत्मानन्द प्रकाश' में प्रकाशित 'महो० धर्मसागर गणि' नामक लेख में उनके शिष्य के लिखित पत्रोंकी नकल में स० १६१७ को अभयदेवसूरि सम्बन्धी चर्चा मे आपको धर्मसागरका प्रतिद्वन्दी लिखा है। आपकी चरण-पादुका बीकानेर (नाहटोंकी गुवाड) के श्री आदिनाथजी के मन्दिरमे है, जिसका लेख इस प्रकार है:—

"सं० १६६२ चैत्र वदि ७ दिने श्रीधनराजोपाध्याय पादुके।"

(३) **महोपाध्याय साधुकीर्ति**—जिनभद्रसूरिजी की परम्परा में वा० दयाकुशलजी के शिष्य वा० अमरमाणिक्यजी के आप नामाङ्कित शिष्यों में से थे। आप ओसवाल-वंश के सुचिंती गोत्रीय वस्तुपाल जी की सुशीला पत्नी खेमलदेवी के पुत्र थे। सं० १६१७ में रचित 'पौषध प्रकरण वृत्ति' के संशोधकों में से आपभी एक थे। सं० १६२५ आगरे में सम्राट अकबर की सभा में पौषध के विषय में शास्त्रार्थ करके तपागच्छवालों को निरुत्तर किया था। सं० १६३२ में माघ सुदि १५ को श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने आपको 'उपाध्याय' पद से अलंकृत किया था। समय-समय पर सूरिजी आपसे सैद्धान्तिक विषयों में परामर्श किया करते थे। सं० १६४६ में माघ वदि १४ को जालोर में आपका स्वर्गवास हुआ। वहां आपका स्तूप भी संघ ने बनवाया था। इनके विषय में भी विशेष जानने के लिए "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" देखना चाहिये। इनकी कृतियां निम्नाङ्कित उपलब्ध हैं।

सं० १६११ दीवाली, सत्रसमरण बाला० (बीकानेर, मन्त्रीश्वर संग्रामसिंह की अभ्यर्थना से), सं० १६१८ आ० शु० ५ पाटण में "सतरहभेदी" पूजा, सं० १६२४ विजयादशमी, दिल्ली में "आषाढ-भूति प्रबन्ध" और 'मौनैकादशी स्त०' सं० १६३५ ज्येष्ठ शुक्ला ३ भक्तामर स्तोत्रावचूरि (शि० वच्छा पठनार्थ स्वयलिखित प्रति, हमारे संग्रहमें है) सं० १६३६ नागौर में जिनचन्द्रसूरिजी के आदेश से नमिराजर्षि चौपई सं० १६३८ अमरसर, शीतल जिन स्त०,

शेषनाममाला (पत्र ४२ श्री पूज्यजी के संग्रह में), दोषापहार-बालावबोध और बहुतसे स्तवन आदि मिलते हैं।

आपके शिष्य (१) वा० विमलतिलक, (२) साधुसुन्दर (३) महिमसुन्दर आदि अच्छे विद्वान थे।

(१) वा० विमलतिलकजी—इनके शिष्य विमलकीर्ति-रचित चन्द्रदूतकाव्य (सं० १६८१), पद-व्यवस्था, दंडक-बाला०, नवतत्त्व बाला०, जीवविचार बाला०, जयतिहुअण बाला०, प्रतिक्रमण विधि-स्तवनादि उपलब्ध हैं।

(२) साधुसुन्दर—ये व्याकरण के दिग्गज विद्वान थे, इनकी कृतियों में (१) उक्तिरत्नाकर (सं० १६७०-७४), (२) धातुरत्नाकर (सं० १६८० दीवाली), (३) शब्दरत्नाकर (*शब्दप्रभेदनाममाला*) तीनों ग्रंथ श्रीपूज्यजी के संग्रह में है। (४) पार्श्वस्तुति (सं०१६८३) आदि उपलब्ध हैं। इनके शिष्य उदयकीर्ति कृत पदव्यवस्था-टीका सं० १६८१ में रचित उपलब्ध है।

(३) महिमसुन्दर—इनका (१) शत्रुञ्जयतीर्थोद्धार-कल्प गा० ११६ का (सं० १६६१ ज्येष्ठ शुक्ला ८ जेसलमेर में रचित) बीकानेर ज्ञानभंडार में, (२) नेमि-विवाहला (सं० १६६५ भा० सु० ६) उपलब्ध है। इनके शिष्य (१) नयमेरुजी थे। उनके शिष्य केशवदासजी थे जिनकी एक बावनी (सं० १७३६ श्रा० सु० ५ मं०), वीरभाण उदयभाण रास (सं० १७४५ विजयदशमी नवानगर) उपलब्ध है। (२) ज्ञानमेरुजी थे, जिनकी गुणावली चौ० (सं० १६७६ आ० १३ विगयपुर ? फतहपुर) और विजयसेठ-विजया-प्रबन्ध

(सं० १६६५ सरसा, सा० थिरपाल आग्रह से, हमारे सग्रहस्थ गुटके मे) आदि कृतिया उपलब्ध हैं। महो० साधुकीर्तिजी के प्रशिष्य "विमलकीर्तिजी" के परिचय स्वरूप, दो गीत हमारे पास हैं। जिन मे उनका स्वर्गवास सं० १६९२ मे हुआ लिखा है। उनके शि० विमलचंद्र शि० विजयहर्षके शिष्य धर्मवद्धनजी (धर्मसी) अठारहवीं शताब्दी के एक प्रतिभाशाली विद्वान थे। विमलकीर्ति आदि के विषय मे भी हम "धर्मसीजी" के चरित्रमे विशेष लिखेंगे।

(४) **कनकसोम**—ये उपा० साधुकीर्तिजी के गुरु-भ्राता थे। इन्होंने कई चौपाइयें और स्तवनादि रचे थे। जिन मे बडी कृतियें निम्नाङ्कित उपलब्ध हैं—

(१) जइत-पद वेलि (सं० १६२५ आगरा), (२) जिनपालित, जिनरक्षित रास (सं० १६३२ नागोर, संग्रहस्थ गुटके मे), (३) आषाढभूति संबन्ध (सं० १६३८ विजयादशमी खंभात), (४) हरिकेशी सन्धि (सं० १६४० कार्तिक, वैराट), (५) आर्द्रकुमार चौ० (सं० १६४४ श्रावण, अमृतसर), (६) मंगलकलश रास (सं० १६४९ मिगसर, मुलतान), (७) जिनवल्लभसूरि कृत पाच स्तवनो पर अवचूरि (सं० १६१५ में स्वयं लिखित, यति चुन्नीलालजी के संग्रह में) (८) थावचा-सुकोशल चरित्र (सं० १६५५ नागोर), पत्र ७ श्रीपूज्यजी के सग्रह में (९) कालिकाचार्य कथा (जेसलमेर सं० १६३२ आषाढ सु० ५, अन्तिम-पत्र हमारे संग्रह मे है), (१०) सं० १६२८ लिखित जिनचन्द्रसूरि-गीत, (११) हरिवल सन्धि आदि।

इनके शिष्य (१) रंगकुशल की अमरसेन-वयरसेन-सन्धि (सं० १६४४ संग्रामपुर) हमारे संग्रह में है। (२) लक्ष्मीप्रभ कृत अमरदत्त मित्रानन्द रास (सं० १६७३) और 'मृगापुत्रसन्धि' उपलब्ध है। (३) कनकप्रभ का दश-विधियतिधर्म गीत पत्र ४ (श्री पूज्यजी के संग्रह में)। (४) यशकुशल, इनका स्वर्गवास सिन्ध प्रान्त में हुआ था

वा० कनकसोम जी "नाहटा" गोत्रीय थे। सं० १६४८ में जब सूरिजी सम्राट के आमन्त्रण से लाहोर पधारे उस समय आप भी साथ ही थे। इनके लिखे हुई (१) वृत्तरत्नाकर की प्रति (सं० १६२३ चै० ब० ११) और (२) षड्शीतिकी प्रति (सं० १६२५ चै० सु० ५ अहमदावाद) जयचन्द्रजी के भंडार में है।

(७) वा० नयरंग—आप श्रीजिनभद्रसूरिजी की विद्वन् परम्परा में वा० समयध्वज शि० ज्ञानमन्दिर शिष्य वा० गुणशेखर के शिष्य थे। आपके गुरुभ्राता समयरंगजी भी थे जिनका "गौड़ी पार्श्व स्तवन" हमारे तरफसे प्रकाशित 'अभयरत्नसार' में छपा है। वा० नयरंगजी अच्छे विद्वान थे इनकी निम्नोक्त कृतियां उपलब्ध हैं:—

(१) सं० १६१८ विजयादशमी खंभात, श्री जिनचन्द्रसूरि आदेशात् "सतरह भेदी पूजा" (अन्तिम ४ पत्र हमारे संग्रह में है), (२) विधिकंदलो—मूल प्राकृत सं० १६२५ आषाढ़ कृ० १० गुरु० श्रीजिनचन्द्रसूरि जी की आज्ञा से वीरमपुर में (इसकी स्वोपज्ञ वृत्ति सहित प्रति, श्रीपूज्यजी के संग्रह में है), (३) परमहंस-

संबोध चरित्र (सं० १६२४ विजयादसमी, वालापताकापुरी), (४) केशी प्रदेशी सन्धि (गा० ७२, हमारे संग्रह में), (५) गौतम पृच्छा गा०५७ (हमारे संग्रह मे), (६) जिन प्रतिमा छत्तोसी गा०३५, और (७) कल्याणक स्त० गा० ३१, दोनों श्री पूज्यजी के संग्रह मे हैं, और भी कई स्तवनादि छोटी कृतियें उपलब्ध हैं।

इनके विमलविनयजी नामक शिष्य थे, जिनकी अनाथी सन्धि गा० ६२ (सं० १६४७ फा० सु० ३ कसूरपुर, हमारे संग्रह में है) एवं कई स्तवनादि प्राप्त हैं। इनके राजसिंह, धर्ममन्दिर आदि कई शिष्य थे। जिनमें राजसिंह कृत (१) आरामशोभा चौ० (सं० १६८७ जे० सु० बाहड़मेर) पार्श्व-स्तवन, विमल-स्तवन और जिनराजसूरि गीत हमारे संग्रह में हैं। धर्ममन्दिरजी की भावारिवारण स्तोत्र, सं० १६५१ सरस्वतीपत्तन मे लिखित प्रति प्राप्त है। धर्ममन्दिरजी के शिष्य महो० पुण्यकलश जी के भी कई स्तवन, हमारे संग्रह मे हैं। इनके शिष्य जयरंग (जैतसीजी) अच्छे कवि हुए हैं, जिनके रचित (१) अमरसेन वयरसेन चौ० (सं० १७०० दीवाली जेसलमेर) (२) कयवन्ना चौ० (सं० १७२१ बीकानेर) और दशवैकालिक सझायादि उपलब्ध हैं। जयरंगजी के तिलकचन्द्र नामक शिष्य भी अच्छे कवि थे, इनकी प्रदेशी सम्बन्ध (सं० १७४१ जालोर) नामक कृति जैन गूर्जर कवियों के दूसरे भाग में नोंध की हुई है।

(६) वा० कुशललाभ—आप वा० अभयधर्मजी के शिष्य थे। आप अच्छे कवि थे, आपकी कृतियें (१) माधवानल चौपई

(सं० १६१६ फा० सु० १३ जैसलमेर), और (२) ढोला-मारवण चौ० (सं० १६१७ चै० सु० ३ जैसलमेर) आनंदकाव्य महोदधि मौ० ७ में प्रकाशित हैं। (३) तेजसार रास (सं० १६२४ वीरमगांव), (४) अगड़दत्त रास (सं० १६२६ वीरमगांव), (५) पूज्य वाहणगीत (देखो हमारी ओरसे प्रकाशित ऐ० जैन काव्य संग्रह) (६) स्तंभना पार्श्व स्त० (७) नवकार छंद (८) भवानी छंद (६) गौड़ी पार्श्व छंद आदि उपलब्ध हैं।

(७) **चारित्रसिंह**—आप वा० मतिभद्र जी के शिष्य थे। विद्वान और कवि थे। इनकी निम्नोक्त कृतियें उपलब्ध हैं:—

(१) चतुःशरण प्रकीर्णक सन्धि गा० ६१ (सं० १६३१ जैसलमेर), अन्तिम पत्र हमारे संग्रह में) (२) सम्यक्त्व विचार स्तव० बाला० (सं० १६३३ झझेरपुर—अन्तिम २ पत्र हमारे संग्रह में हैं) (३) कातंत्र-विभ्रमावचूर्णि (सं० १६३५ ? धवलकपुर—श्रीपूज्जी के सं० और कृपा० सं० में है), (४) मुनिमालका (सं० १६३६ रिणी—हमारी ओर से प्रकाशित अभयरत्नसार में) (५) रूपक-माला-वृत्ति पत्र ३ (जिनचन्द्रसूरिराज्ये—हमारे संग्रह में), (६) शास्वत-चैत्य स्त० गा० ३८, (७) खरतर गच्छ गुर्वावली गा० २१, (८) अल्पाबहुत्व स्त० गा० २० इत्यादि, कई स्तवन हमारे संग्रह में हैं, एवं श्रीपूज्यजी के संग्रह में सं० १६३७ के लिखे हुए गुटके में आपके ११ स्तवन, सझायादि हैं।

(८) **महो० जयसोमजी**—आप क्षेमशाखा में प्रमोद-माणिक्यजी के शिष्य थे। श्री जिनमाणिक्यसूरिजी ने सं० १६०५-१२

के बीच में इन्हे दीक्षित कर जयसोम नाम रखा था, इससे पहले सं० १६०५ को प्रशस्ति में आपका पूर्व नाम जेसिंघ लिखा है। ये असाधारण मेधावी और प्रकाण्ड विद्वान थे। सं० १६४६ के पूर्व मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रने आप के पास बीकानेर में ११ अंग श्रवण किए थे। सं० १६४९ में सूरिजी के साथ आप भी अकबर के पास लाहौर गए थे। सूरिजी ने वहां मिती फाल्गुण शुक्ला २ के दिन आपको उपाध्याय पदसे अलंकृत किया था। इन्होंने सम्राट् की सभा मे किसी विद्वान को शास्त्रार्थ में निरुत्तर किया था। सं० १६७५ में वैसाख सुदि १३ को शत्रुंजय प्रतिष्ठा के समय आप भी श्री जिनराजसूरिजी के साथ थे। आपने श्रीजिनचन्द्रसूरि विरचित पोषधविधि प्रकरण वृत्ति (रचा सं० १६१७ पाटण) का पुनः अवलोकन करके संशोधित प्रति लिखी थी। कविवर समयसुन्दरजी ने आपका "सिद्धान्तचक्रचक्रवर्त्ती" विशेषण लिखा है। उपा० रत्ननिधानजी* आदि भी आपसे सैद्धान्तिक विषयोंमें प्रश्नोत्तर किया करते थे। आप कवि भी उच्च कोटि के थे, संस्कृत, प्राकृत और प्रचलित लोक भाषा मे बहुत से गद्य और पद्य ग्रंथों की रचना की, जिनकी संक्षिप्त सूची इस प्रकार है—

(१) इर्यावही षट्त्रिंशिका (सं १६४० जिनचन्द्रसूरि आदेशात्) प्राकृत गा० ३६, स्वोपज्ञ वृत्ति (सं० १६४१), (२) पोषध षट्त्रिंशिका (सं० १६४३) प्रा०, स्वोपज्ञवृत्ति (सं १६४५), ये

---

* राधनपुर में २८ प्रश्न इन्होंने निवेदन किए थे जिनकी प्रति का समयसुन्दरजी लिखित प्रथम पत्र ज्ञानभण्डारमें है।

दोनों ग्रन्थ "जिनदत्तसूरि ज्ञानभण्डार" सूरत से छपे हैं। (३) स्थापनापट्त्रिंशिका (वृत्ति)—इसका उल्लेख कर्मचन्द्र मन्त्रि-वंश प्रबन्ध वृत्ति में है। (४) कोडां श्राविकाव्रत ग्रहण रास, (सं० १६४७ अक्षयतृतीया), (५) अष्टोत्तरी-स्नात्र विधि (लाहोर में जिन-चन्द्रसूरि) कर्मचन्द्र-मन्त्रि-वंश प्रबन्ध (सं० १६५० विजयादशमी, लाहोर) जिनचन्द्रसूरि आदेशात् (६) श्राविकारेखा व्रत-ग्रहण रास (सं० १६५० कार्तिक सुदि ३), (७) २६ प्रश्नोत्तर-ग्रन्थ (मुलतानवास्तव्य गोलछा ठाकुरसी कृत प्रश्नों के उत्तर, जिनसिंह-सूरिजी की आज्ञा से लाहौर में), (८) १४१ प्रश्नोत्तर, (विचाररत्न संग्रह), (६) आदिजिन स्त० (सं० १६५५ फाल्गुण), (१०) चौवीस जिन गणधर संख्या स्त० (सं० १६५६) (११) वयर स्वामी चौ० (सं० १६५६), (१२) बारहभावना सन्धि (बीकानेर सं० १६७६-४६) और भी अनेक स्तवन, सझाय, प्रश्नोत्तर उपलब्ध है।

इनके बड़े गुरुभ्राता पद्ममन्दिर, गुणरंग और दयारंग थे इनका नाम सं० १६०५ में लिखित "सारस्वत-दीपिका" की प्रशस्ति में आता है। वा० गुणरङ्ग कृत शत्रुंजय यात्रा-परिपाटी (सं० १६१६), सामायक वृद्धिस्त० (सं० १६४६ कार्तिक) गा० ३२, अजितसमोसरण स्त०. और अष्टोत्तरशत नवकरवाली मनका स्तवन उपलब्ध है। इनके शिष्य ज्ञान-विलास के शि० लावण्यकीर्ति अच्छे कवि थे। जिनका (१) रामकृष्ण चौपई (सं० १६७७ वै० सु० ५ बीकानेर बांधव भुवनकीर्त्ति के साथ), (२) गजसुकुमाल रास उपलब्ध है।

महो० जयसोमजी के उ० गुणविनयजी, विजयतिलक, सुयशकीर्ति आदि कई विद्वान शिष्य थे। इनमे उ० गुणविनयजी इस शताब्दी के नामाङ्कित विद्वानोंमेंसे एक थे। जिनकी प्रतिभा लगभग समयसुन्दरजी से समता रखनेवाली है आपकी कृतियोंकी संख्या भी बहुत विशाल है किन्तु उनके सदृश प्रसिद्धि नहीं है। सं० १६४६मे सूरिजीके साथ आप भी लाहोर पधारे थे, वहां आपको समयसुन्दरजी के साथ ही वाचक पद मिला था। सं० १६७५ शत्रुंजय प्रतिष्ठा के समय आप भी वहीं पर थे। संवतानुक्रम से आपकी कृतियाँ निम्नाङ्कित हैं:—

सं० १६४१ खंड-प्रशस्ति-काव्य वृत्ति (श्रीपूज्यजी सं०), सं० १६४४ नेमिदूतकाव्य-वृत्ति—बीकानेर (सेठिया लाय०), सं० १६४६ नल-दमयन्ती चंपूवृत्ति (सेठिया ला०) और रघुवंश टीका (बीकानेर) सं० १६४७ प्राकृतवैराग्यशतक वृत्ति०, सं० १६५१ संबोध-सप्ततिवृत्ति० सं० १६५४ कयवन्ना सन्धि (नेमिजन्म—महिमपुर), सं० १६५५मा० व० १० मथरनगरकर्मचन्द्रमंत्रि वंशावलीरास,सं० १६५६ नोसामपुर में कर्मचन्द्रमंत्रिवंश-प्रबन्ध वृत्ति, सं० १६५७ विचाररत्नसंग्रह लेखनम्, सं० १६५७ आषाढ़पूनम पार्श्वस्त० गा० २७, सं० १६५६ लघुशान्ति टीका (पत्र ४ हमारे संग्रह में), सं० १६६० चार मंगल गीत गा० ३२, सं० १६६२ चै० सु० १३ बु० अंजनासुन्दरी प्रबन्ध, सं० १६६३ फा० सु० १३ शत्रुंजय यात्रा स्त०, सं० १६६३ चै० सु० ६ खम्भात-ऋषिदत्ताचौ०, सं० १६६४ इन्द्रियपराजयशतक वृत्ति, सं० १६६५ गुणसुन्दरी चौ०, नलदमयन्ती

प्रबन्ध नवानगर आ० कृ० ६ (हमारे संग्रह में) और कुमतिमत खण्डन (नवानगर—जिनसिंहसूरि आदेशात्-"जिनदत्तसूरि ज्ञान-भण्डार" सूरत से प्रकाशित, सं० १६७० आ० शु० १० बाहड़मेर जंबूरास (हमारे संग्रह में), सं० १६७२ जेसलमेर पार्श्व स्त० गा० १६ संस्कृत, सं० १६७४ कानीपूनम—धन्ना शालिभद्र चौ० (श्रीमालमानसिंह आग्रहसे-बीकानेर ज्ञान भं०), सं० १६७४ माधव सु० ६ बुध मालपुर—अंचलमत स्वरूप वर्णन, सं० १६७६ जिनराजसूरि अष्टक और इसी संवत के चैत्र कृ० ३ निंबाजि पार्श्वनाथ स्त०, सं० १६७६ राइद्रहपुर तपा ५१ बोल चौपड़ सटीक—आपका यह अन्तिम ग्रन्थ समस्त कृतियोंके कलश या शिखरके सदृश है, इसमें सैकड़ों ग्रंथोंके प्रमाण उद्धृत करके तपा गच्छवालों के ५१ बोलों का निराकरण किया है।

इस कृति के पत्र ८ से ४० स्वयं लिखित श्रीपूज्यजी के संग्रह में है, मूल मात्र की सम्पूर्ण नकल हमारे संग्रह में है।

बिना संवत् की स्वयं लिखित पचासों छोटी कृतियें हमारे संग्रह में है, किन्तु ग्रंथ-विस्तारके भयसे उन सबका उल्लेख नहीं किया गया है। कतिपय उल्लेखनीय अन्य कृतियों की सूची इसप्रकार है :—

(१) लुंपकमततमोदिनकर चौ० (पत्र १३४ जयपुर ज्ञान-भण्डार), (२) जिनवल्लभीय अजित-शान्ति वृत्ति, (३) सत्वस्थ शब्दार्थ समुच्चय, (४) चरण-सत्तरी करण-सत्तरी भेद (हमारे संग्रह में), (५) साधु समाचारी व्या० (प० १९ श्रीपूज्यजी सं०) (६) विजयतिलकोपाध्याय कृत आदिस्त० बालाव० (ज्ञानभंडार

के आग्रह से वापडाउ मे रचित, अन्तिम पत्र संग्रह मे), (७) प्रणिपातदण्डकयाग (णमुत्थुण वाला० स्वयलिखित हमारे संग्रह म हे), (८) प्रश्नोत्तर (ज्ञान-भण्डार), (९) अगडदत्तरास (प्रथम पत्र संग्रहमे), (१०) शत्रुञ्जय-यात्रा परिपाटी स्त० गा० ३२ (स० १६४४ बीकानेरी सब का—हमार संग्रह मे पत्र २), (११) खरतर गच्छ गुर्वावली गीत इत्यादि ।

आपके गुरुभ्राता (१) विजयतिलक शि० तिलकप्रमोद शि० भाग्य विशाल थे, जिनकी लिखी हुई गुणावली चौ० पत्र ७ बीकानेर ज्ञान-भण्डार (महिमाभक्ति विभाग) में है। (२) सुयशकीर्ति का संखेश्वर पार्श्व स्त० गा० २५ (स० १६६६) हमारे संग्रह मे है।

वा० गुणविनयजी के मतिकीर्ति नामक अच्छे विद्वान शिष्य थे, जिनकी (१) निर्युक्ति स्थापन (स० १६७६ विद्वत् लावण्यकीर्ति आग्रह, पत्र १८ क्षमाकल्याणजी-भण्डार मे), (२) अज्ञमती कृत २१ प्रश्नोत्तर (जिनराजसूरि राज्ये पत्र २६ बीकानेर ज्ञान-भण्डार), (३) गुणकित्वशोडषिका (जयपुर-भण्डार), (४) ललिताग रास (पत्र ७—अपूर्ण हमार संग्रह मे है), (५) लुपकमतोत्थापक गीत गा० ६१, (६) धर्मबुद्धिरास (स० १६६७) और भी कई स्तवनादि उपलब्ध हैं। वा० मतिकीर्तिजी के शिष्य सुमतिसिन्धुर रचित पार्श्वस्तवन (स० १६६६ मा० सु० ८ जै० गु० क० पृ० ५७४ मे नोंध है) सुमतिसिन्धुरजी के कीर्तिविलास आदि कई शिष्य थे, जिनके रचित कई स्तवनादि मिलते हैं। मतिकीर्ति के दूसरे शिष्य सुमतिसागर थे, जिनके शिष्य कनककुमार शि०

कनकविलास कृत देवराज-वच्छराज चौ० (सं० १७३८ जेसलमेर) उपलब्ध है।

उपाध्याय जयसोमजीकी शिष्य परंपरा १६ वीं शताब्दी तक विद्यमान थी। उनके नामोंकी सूची हमारे संग्रह मे हैं।

(९) ज्ञानविमलोपाध्याय—सुप्रसिद्ध उ० श्रीजयसागरजी की शिष्य परम्परा मे आप भानुमेरुजी के शिष्य थे। आपने सं० १६५४ में बीकानेर मे शब्दप्रभेद नामक व्याकरण-ग्रंथपर टीका बनाई। इनके शिष्य उ० श्रीवल्लभजी भी उद्भट्ट विद्वान थे उन्होंने (१) सं० १६५४ शीलोञ्छनाम-कोष पर टीका, (२) सं० १६६१ जोधपुर में लिङ्गानुशासनपर दुर्गपद-प्रबोध नामक वृत्ति, (३) सं० १६६७ जोधपुर में अभिधाननाममालावृत्ति (श्रीपूज्यजी के संग्रहमे), (४) विजयदेव महात्म्य—जो कि आपके आदर्श गुण-ग्राहकता का परिचायक है यह ग्रन्थ श्रीजिनविजयजी के संपादकत्व में प्रकाशित हो चुका है। आप बड़े मिलनसार और सब गच्छोंके प्रति समभाव रखनेवाले थे सं० १६५५ में जब आप बीकानेर आये तब उपकेश गच्छीय सिद्धसूरिजी के कथन से। (५) "उपकेश शब्द व्युत्पत्ति" बनाई थी। डॉ० बुह्लर साहबने अपनी रिपोर्ट में आपका एक (६) अरनाथ स्तुति सवृत्ति नामक ग्रन्थ भी नोंध किया है।

(१०) हंसप्रमोद—आप श्री जिनकुशलसूरिजीकी शिष्य परम्परा मे हर्षचन्द्रजी के शिष्य थे। आपका सारंगसारवृत्ति (सं० १६६२) नामक ग्रन्थ उपलब्ध है। भाषा कृतियों में वरकाणा

स्त० (स० १६५३ मिगसर) आदि उपलब्ध हैं। स० १६७७ मडता र शिलालेखो मे आपका नाम आता है।

आपके शिष्य चारुदत्तजी कृत कुशलसूरि स्त० (स० १६६६ मि० कृ० ७), सेत्रावा स्त० (स० १६७६ श्रावणसु० १), मुनि सुव्रत स्त० (जोधपुर, सलवाल श्रीमल्शाह कारित प्रासाद स्त० सं० १६६६) आदि उपलब्ध हैं। इनके शि० कनकनिधान कृत रत्नचूडरास (स० १७२८ श्रा व० १० श्री पूज्यजी के सग्रह मे है)।

उ० हसप्रमोदजी के पुण्यकीर्ति नामक शिष्य अच्छे कवि थे, इनका (१) रूपसेनराज चौपइ (स० १६८१ विजयादसमी मेडता), (२) मत्स्योदर चौ० (१६८२ कृपा भ०) (३) पुण्यसार रास (स० १६६६ विजयदशमी सागानेर) उपलब्ध हैं। इनके अतिरिक्त जैन-गूर्जर-कविओ प्रथम भाग मे (४) धन्ना चरित्र (स० १६८८ भा० सु० १३ रवि० बीलपुर) और (५) कुमार मुनिरास की भी नोंध है।

(११) सूरचन्द—आप श्रीजिनभद्रसूरि-शाखा में वा० वीरकलशजी के शिष्य थे। इनका बनाया हुआ (१) पचतीर्था श्लेषालङ्कार चित्रो (अपूर्ण पत्र ६ बीकानेर ज्ञान-भण्डार), अल-ङ्कार साहित्य मे एक विशिष्ट और महत्वपूर्ण ग्रंथ है, ग्रंथ अपूर्ण होनेसे रचना काल अज्ञात है। (२) जैनतत्त्वसार (स० १६६६ आश्विन पूर्णिमा बुध० अमृतसर) यह उत्तम रचना शैलीवाला ग्रन्थ हिन्दी और गुजराती भाषानुवाद सहित छप चुका है। (३) चौमासी व्याख्यान (जयचन्द्रजी का भण्डार), (४) वर्ष फला

फल ज्योतिष सज्झाय गा० ३६ और (५) जिनदत्तसूरि स्त० गा० १७ हमारे संग्रह में है। आपकी कविता बड़ी सुन्दर और रोचक है। सम्भव है कि कविवर ऋषभदासने प्रसिद्ध कवियों के नाम में जिन "सुरचन्द्रजी" का नामोल्लेख किया है, वे ये ही हों। लेकिन कृतियों की प्रचुर संख्या न मिलने से निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

(१२) उ० शिवनिधान—आप श्रीजिनदत्तसूरिजीकी शिष्यपरंपरा में, वा० हर्षसारजीके शिष्य थे। ये वे ही हर्षसारजी हैं, जिनके अकबर से मिलने का उल्लेख पृ० ६४ में कर चुके हैं। उ० शिवनिधानजीने उस समय की लोकप्रचलित गद्य भाषा में विधि विधान आदि ग्रन्थ रचकर उपकार किया है। इनके रचित (१) कल्पसूत्र बालावबोध, (२) संग्रहणीबाला (३) चौमासी व्या०, (४) लघुविधिप्रपा—जिसमें २८ विधि-विधानों का सरल विवेचन किया है, (५) कृष्ण-रुक्मिणी वेलि टबा० और कई स्तवनादि छोटी कृतियें भी उपलब्ध हैं।

इनके (१) महिमसिंह (मानकवि) नामक शिष्य अच्छे कवि हुए हैं, जिनके (१) कीर्तिधर-सुकोशल प्रबन्ध (सं० १६७० दीवाली, पुष्करण), (२) मेतार्यऋषि सम्बन्ध चौ० (सं० १६७० पुष्करण), (३) क्षुल्लककुमार चौ०, (४) हंसराज-वच्छराज प्रबन्ध (सं० १६७५—श्रीयुक्त मो० द० देसाइ के संग्रह में), (५) अर्हद्दास सम्बन्ध (सं० आसकरण पुत्र कपूरचन्द्र के आग्रह से—राय

बद्रीदास बहादुर के म्यूजियम कलकत्ता में प्रति है), (६) मेघदूतवृत्ति (सं० १६६३ शिष्य हर्षविजय पठनार्थ) आदि ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

उ० शिवनिधानजी के (२) मतिसिंह नामक भी शिष्य थे। उनके शि० वा० रत्नजय कृत आदिनाथपञ्चकल्याणक स्त० गा० २४ और उनके शिष्य दयातिलक कृत धन्नारास (सं० १७३७ कार्तिक), 'भवदत्त चौ०' (सं० १७४१ जे० सु० ११ फतैपुर—कवि के स्वयं लिखित प्रति श्रीपूज्यजी के संग्रह मे है), (३) सिंहविनय —इनके रचित उत्तराध्ययन गीत (सं० १६७५ आ० व० ८) उपलब्ध हैं।

(१३) सहजकीर्ति—आप क्षेमकीर्तिशाखा मे श्री हेमनन्दनजी (सं० १६४५ सुभद्रा चौ० कर्ता, जयपुर-भण्डार) के शिष्य थे। आप प्रकाण्ड विद्वान और उत्तम कवि थे। लौद्रवपुर के शिलापट्ट पर उत्कीर्ण "शतदलपद्मयंत्रमय श्रीपार्श्व स्तव०" (सं०१६८३ कार्तिक शुक्ला १५) आप की ही अद्वितीय कृति है। जैन लेख सग्रह (भाग ३) मे बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर एम० ए० बी० एल० लिखते हैं—शिला पट्टपर खुदा हुआ ऐसा उत्तम काव्य अन्यत्र देखने मे नहीं आया। इससे आपके पाण्डित्य का अच्छा परिचय मिलता है। आपकी निम्नोक्त कृतियें उपलब्ध हैं :—

(१) देवराज चौ० (सं० १६७२ जयपुर भं०), (२) वच्छराज चौ० (पत्र ३७ हमारेसंग्रह मे), (३) शत्रुञ्जय महात्म्य रास (सं० १६८४ आसनीकोट जय० भं०), (४) सागरसेठ चौ० (सं० १६७५ बीकानेर, श्रीपूज्यजी सं०), (५) हरिश्चन्द्र

रास (स० १६६७ रचित, अन्तिमपत्र हमारे संग्रह मे है, (६) सारस्वत वृत्ति (स० १६८१), (७) कल्पसूत्र वृत्ति (कल्पमजरी स० १६८५ ज्ञानभण्डार), (८) महावीरस्तुति वृत्ति (स० १६८६), (६) सप्तद्वीपि— शब्दार्णव व्याकरणऋजु प्राज्ञ व्याकरण प्रक्रिया (पत्र ६६ क्षमाकल्याणभण्डार) (६) अनेक शास्त्रसार समुच्चय, (१०) एकादिशतपर्य्यन्त शब्द साधनिका, (११) नामकोश (छ काण्डो में), (१२) प्रतिक्रमणनाला०, (१३) गौतमकुलकवृहत् वृत्ति (त्रुटक पत्र हमारे संग्रह मे) (१४) प्रीति छत्तीसी (स० १६८८ विजयदशमी सागानेर) एव उपधान विधिस्त०, जेसलमेर चैत्य-परिपाटी स्त० आदि कई कृतिया उपलब्ध हैं। आपका बनाया हुआ एक रास बीकानेर ज्ञानभण्डार मे है, जिसके प्रारम्भमें उसके पूर्व रचित ५-६ रासोंका नामोल्लेख है।

आपके गुरु हेमनन्दनजी के गुरुभ्राता रत्नहर्षजी के शि० (१) हेमकीर्ति और (२) श्रीसारजी थे। इनमें श्रीसारजी अच्छे कवि हुए हैं जिनकी कृतियो की नोंध 'जैनगूर्जर कविओ' (पृ० ५३४)में है, उनके अतिरिक्त हमे (१) पार्श्वनाथ रास (स० १६८३ जेसलमेर पत्र १० हमार संग्रह मे), (२) जिनराजसूरि रास * (स० १६८१ आषाढ वदि १३ सेत्रावा), (३) जयविजय चौ० (श्रीपूज्यजी के संग्रह मे) (४) कृष्ण रुक्मिणी वेलि बाला० (५) सतरहभेदीपूजागर्भित शान्ति स्त० (स० १६८२ आसोज, फलोधी), (६) लोकनालगर्भित चन्द्रप्रभ

* यह रास हमारी ओर से प्रकाशित "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह"में देखना चाहिये।

स्त० (गा० ७६), गुणस्थानक्रमारोह बाला० (सं० १६७८) आदि छोटे बड़े ओर भी कई स्तवन उपलब्ध हुए हैं।

हेमनन्दनजी के यतिन्द्र (?) नामक भी एक शिष्य थे जिन्होंने दशवैकालिकबाला० सं० १७११ में बनाया।

नोटः—पृ० १९ में उल्लिखित उ० कनकतिलकजी (क्रियोद्धार कर्त्ता) के शि० लक्ष्मीविनय शि० रत्नसारके शिष्य उपरोक्त हेमनन्दन और रत्नहर्ष जी थे। इनकी परम्परा १९ वीं शताब्दि तक विद्यमान थी, नाम भी हमारे संग्रह में है।

(१४) शुभवर्द्धन—इनका नाम पृष्ठ १६ की फुटनोटमें क्रियोद्धारकर्त्ताओं में आता है। इनके शिष्य सुधर्मरुचि कृत (१) आषाढ़भूतिरास, (२) गजसुकुमाल रास, (१७ ढाल सं० १६६६ लिखित) उपलब्ध है।

सागरचन्द्रसूरि परम्पराके विद्वान—

(१५) ज्ञानप्रमोद—सं० १६८१ वाग्भटालङ्कार वृत्ति कर्त्ता। इनके शिष्य विशालकीर्ति व्याकरण के अच्छे विद्वान थे। जिनका "सरस्वती" विरुद था। इन्होंने ईडर राज सभामें जय प्राप्त की थी। इनके रचे 'प्रक्रियाकौमुदी' आदि कई ग्रन्थ भी उपलब्ध हैं। आपके शिष्य हेमहर्ष के शिष्य (१) अमर (२) रामचन्द्र—शिष्य अभयमाणिक्य शि० लक्ष्मीविनय कृत अभयकुमार रास (सं० १७६१ फा० शु० ५ मरोट) और ढुंढक मतोत्पत्ति रास मिलते हैं। आपकी परम्परा में भीनासर के यति सुमेरमलजी विद्यमान हैं।

(१६) हीरकलश—आपका (१) सम्यक्त्व कौमुदी रास (सं० १६२४ मा० सु० १५ बु० सवालक्ष देश), (२) कुमतिविध्वंशन

चौ० (सं० १६१७ जे० सु० १५ कर्णपुरी) जोइसहीर (सं० १६२१ नागोर), उपलब्ध है। इनके शिष्य हेमानन्द थे,जिनके रचित वैतालपचीसी (सं० १६४६ इन्द्रोत्सव दिन) और भोजचरित्र-चौ० (स० १६५४ मदाणइ) आदि प्राप्त है।

(१७) **जयनिधान**—आप वा० राजचन्द्रके शिष्य थे। इनका बनाया हुआ (१) धर्मदत्त धनपति रास (अहमदाबाद) (२) सुरप्रिय रास (मुलतान) और कई छोटी कृतिएं उपलब्ध हैं।

श्री कीर्त्तिरत्नसूरि परम्परा :—

(१८) **लब्धिकल्लोल**—आप वा० विमलरंगके शिष्य थे। श्री "जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास" और बहुतसी गहुंलियें आपकी रचित उपलब्ध हैं। इनके २ शिष्य थे (१) गङ्गदास—इनके रचित वंकचूलरास (सं० १६७१ आ० सु० २ पालीग्राम) मिलता है (२) ललितकीर्त्ति–अगड़दत्त रास (सं० १६७६ जे० सु० १५ भजनगर), कर्त्ता, इनके शिष्य राजहर्ष थे जिनके रचित थावच्चा सुकोशल रास (सं० १७०३ माघ सु० १३ बीकानेरमे) उपलब्ध है।

(१९) **हर्षकल्लोल**—इनके शिष्य 'चन्द्रकीर्ति' कृत यामिनी भानु मृगावती चौ० (सं० १६८९ आषाढ़ सुदी ७ बाहड़मेर) उपलब्ध हैं।

(२०) **भावहर्षोपाध्याय**—इनका नाम पृ०१६ की फूटनोट मे (क्रियोद्धार चर्चाओं मे) आता है। आपके रचित कई स्तवनादि मिले हैं। सं० १६२६ पर्यंत आप सूरिजी के आज्ञानुयायी थे। उसके पश्चात् आपसे "भावहर्षीय शाखा" नामक गच्छ-भेद

हुआ। इनका विशेष परिचय "ऐतिहास-जैन-काव्य-संग्रह" में देखना चाहिये।

(२१) विजयमेरु—इनके रचित "हंसराज वच्छराज प्रबन्ध" (सं० १६६६ लाहोर) उपलब्ध है।

इनके अतिरिक्त सूरिजी के आज्ञानुवर्त्तियों साधु सङ्घ में अनेक विद्वान और अनेक कवि थे। किन्तु विस्तार भय, विषय की निरसता एवं अधिक लिखना विषयान्तर हो जाने के कारण उनका परिचय नहीं लिखा गया है। उपरोक्त विद्वानों के परिचय में भी हमने बहुत ही संक्षेप किया है। बीकानेर ज्ञानभण्डार की सूचियें, नोटस् इत्यादि सामग्री परिचय लिखने के समय पास में न होनेसे बहुत सी अप्रसिद्ध कृतियों का परिचय भी नहीं लिख सके। भविष्य में हमारे सहृदय पाठकों की अभिरुचि हुई और तथाविध अवसर मिला तो गवेषणा-पूर्ण विस्तृत आलोचना करने की अभिलाषा है।

पन्द्रहवाँ प्रकरण

भक्तश्रावक गण

म्राट अकबरके शासनकाल में जैन धर्माव-लम्बी करोड़ों की सख्या में थे। भक्तिवाद का जमाना था, लोगों का हृदय धार्मिक श्रद्धा और भक्ति से ओत-प्रोत था, स्वधर्मी बन्धुओं के प्रति वात्सल्य और सद्गुरु के प्रति आदरणीय पूज्य-भाव छलकता था। उस समय के अनेक सुश्रावक स्थान-स्थान में प्रतिष्ठाप्राप्त, राज-मान्य, आमात्यादि उच्चपदाधिकारी, वैभव सम्पन्न, दानी, वीर और धर्मिष्ट थे।

हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी के भक्त-श्रावकों की सख्या लाखों -- पर थी। भारत-भूमि के प्रायः सभी प्रान्तों मे

---

* येषां हन्त प्रभावातिशयमसिद्धुर्मखिकर्मादिचन्द्रा ।
श्रीमत्साहिश्च साहिरकब्बर नृपतेः प्राप्त सम्य प्रतिष्ठाः ॥
स्थाने-स्थाने प्रकृष्टा नरपति विदिताः श्रावका ऋद्धिमन्तः
संघाध्यक्षा विपक्षप्रतिभयजनकाः लक्ष सख्या विशेषात् ॥ ७ ॥
[वादी हर्षनन्दन कृत "मध्यान्ह व्याख्या" सं० १६७३]

आपका आज्ञानुयायी साधु-सङ्घ विचरकर जैन-धर्म का महान् प्रचार किया करता था। इससे सूरिजीके भक्त श्रावकगण आजकल की भांति धार्मिक तत्त्वों से अनभिज्ञ और विचलित-श्रद्धावाले न होकर एक मात्र देव, गुरु और धर्म को ही आराध्य माननेवाले और परम-विज्ञ थे। कहना न होगा कि वे इन्हीं गुणों के कारण यवन-साम्राज्य के भयङ्कर धार्मिक सङ्घर्ष मे भी अपने धर्म में अटल और दृढतापूर्वक स्थिर रह सके थे। उन्होंने केवल धर्म-रक्षा ही नहीं की, परन्तु अपूर्व आत्मत्याग करके धर्मकी अनेकानेक सेवाएं कीं, जिनमे तीर्थों की रक्षा, जीर्णोद्धार, प्रशंसनीय शिल्प-कला के मूर्तिमन्त स्वरूप नव्य देवमन्दिर निर्माण, स्वधर्मियों को साहाय्य-प्रदान आदि मुख्य हैं। धार्मिक-सेवा के साथ-साथ देश-सेवा, लोकोपकार आदि आवश्यकीय शुभ कार्यों मे भी वे किसी से पिछड़े हुए नहीं थे। वे दुष्काल के समयमे अपने कष्टोपार्जित द्रव्य को पानी की तरह बहाने मे जरा भी नहीं हिचकते थे। मुसलमान-राजकाल के दुष्कालों के समय जैनों ने यथासाध्य दानशालाएं खोलकर निस्सहाय और निर्धनों की रक्षा करने का जो महान् गौरव प्राप्त किया, वह अन्य किसी समाज को प्राप्त नहीं था।

सूरीश्वर-महाराज के कई ऋद्धिमन्त और पदाधिकारी श्रावकों का नामोल्लेख पिछले प्रकरणों मे आ चुका है। ऐतिहासिक साधनों के अभाव के कारण उन सब का विशेष परिचय नहीं लिखा जा सकता, फिर भी उन में से दो प्रतिभाशाली और प्रधान नर-रत्नों का यथा ज्ञात परिचय दिये बिना ग्रन्थ का एक आवश्यकीय

राजमान्य मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र वच्छावत

अंश अपूर्ण-सा रह जाता है, और हम भी उनकी महान् सेवाओं का गुणानुवाद लिखने का लोभ संवरण नहीं कर सकते, अतः इस प्रकरण में उनका यथाज्ञात जीवन लिखा जायगा।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र

ओसवाल जाति के पुनीत इतिहास में बच्छावत वंश की गरिमा गौरवान्वित है। इस वंश की उज्ज्वल कीर्ति-कौमुदी का "कर्मचन्द मन्त्रि वंश प्रबन्ध से" विस्तृत वर्णन है। बीकानेर राज्य से इस वंश के महापुरुषों का राज्यस्थापना से लगाकर लगभग १५० वर्षों तक घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। संक्षिप्त में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि बीकानेर राज्य की सीमा की वृद्धि और रक्षा करने में उनका बहुत-कुछ हाथ था। राजनैतिक क्षेत्र के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र में भी इस वंश के पुरखाओं की सेवा विशेष उल्लेखनीय है।

बच्छावत वंश को जैनधर्मानुरागी बनाने का श्रेय खरतर गच्छ के आचार्यों को है, उन्होंने भी कृतज्ञता स्वरूप इस गच्छ के प्रति काफी श्रद्धाञ्जलि समर्पण की है। जिसका विशेष परिचय "कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध"से करना चाहिये। यहाँ हम मात्र सूरिजी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले मं० संग्राम सिंहजी और कर्मचद्रजीका संक्षिप्त परिचय देते हैं।

मन्त्री नगराज के पुत्र संग्रामसिंहजी खरतर गच्छ के प्रति बहुत ही भक्ति और अनुराग रखने वाले थे। तत्कालीन गच्छ के शिथिलाचार को हटा कर सुव्यवस्था करने में आपकी प्रेरणा ही मुख्य थी।

स० १६१३ मे जब सूरिजी ने क्रियोद्धार किया, तब आपने बहुत-सा धन शुभ कार्यों में विनोर्ण किया था *। जिसका उल्लेख हम तीसरे प्रकरणमे कर आये हैं। इन्होने अपने मातुश्री के पुण्यार्थ पौषधशाला निर्माण कराई, और २४ बार बीकानेर मे चादी के रुपयो की लाहण की। राय कल्याणसिहजी के आप मन्त्री थे, और हुसनकुलीखान से आपने ही सन्धि की थी। तीर्थाधिराज शत्रुञ्जय की यात्रा कर वापिस आते हुए मेवाडाधिपति महाराणा उदयसिंह से आप सम्मानित हुए थे। चतुर्विध सघ और श्रुत ज्ञान की भक्ति मे आपने बहुत-सा द्रव्य व्यय किया था। स० १६११ मे इनके कथन से श्री० साधुकीर्तिजी ने "सप्तस्मरण-बालावबोध" रचा, जिसकी प्रति श्री पूज्यजी के सग्रह मे है।

आपके सुरताण देवी, भगवता देवी और सुरुपा देवी नाम की सिद्धान्त श्रवण रक्ता और धर्मपरायणा भार्या त्रय थीं।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र और जसवत × आपके ही पुत्र-रत्न थे।

---

* श्रीजिनचन्द्र सूरीणा, समग्र गुणशालिनाम्।
क्रियोद्धार महश्चक्रे, येन वित्त व्ययेन वै ॥ २४ ॥

[कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध]

× बच्छावतों की पद्य वंशावली से ज्ञात होता है कि कर्मचन्द्र के बीकानेर छोडने के पश्चात् ये राजा रायसिंह के पास रहे थे। एक समय पट्टा नगरकोटविजय करने के लिये सम्राट ने अपनी सभा में बीडा फेरा, अन्य किसी के न लेने पर राजा रायसिंह ने वह बीडा उठाया और बहुत-सी सेना लेकर युद्ध के निमित्त पट्टा गये। इस समय जसवन्त ने अपनी

बाल्यकाल में ही कर्मचन्द्र की प्रतिभा के परिचायक हाथ-पावों की शुभ रेखाएं और लक्षणों को देख कर राय कल्याणसिंहजी* ने संग्राम सिंहजी की मृत्यु के अनन्तर इन्हें आमात्य पद दिया। इन्होंने शत्रुञ्जय, आबू, गिरनार, स्तम्भ तीर्थ आदि की सपरिवार यात्रा की। ये राजनीति, युद्धकला, सन्धि कराने में कुशल होने के साथ-साथ वीर, दानी और धर्मात्मा भी थे।

स्वामीभक्ति और वीरता का अच्छा परिचय दिया, जिससे महाराजा ने प्रसन्न होकर बहुत सम्मानपूर्वक इन्हें "मन्त्रि-पद" पर नियुक्त किया। जसवन्त जैसे वीर थे वैसे दानी भी थे। सांकर को आपने बहुत-सा दान दिया था। गद्य वंशावलीमें आप की मृत्यु कुंवर भींवराज की अवकृपा के कारण हुई लिखा है। इनको सन्तति के विषय में पृ० २३४ में गद्य वंशावलीका फूटनोट देखे।

* ये राय जैतसीजी के पुत्र थे। इनका जन्म सं० १५७९ माघ सु० ६ को हुआ। सं० १६०१ पोष सुदि १५ को बीकानेर की राज-गद्दी पर पर बैठे। इन्होंने शत्रुके हाथ में गए हुए बीकानेर राज्य को पुनः प्राप्त किया। सं० १६२८ के वैसाख बदि ५ को इनका देहान्त हुआ।

इन्होंने कर्मचन्द्र को आमात्य पदपर नियुक्त किया,कर्मचन्द्र ने सम्राट की कृपा से इन्हें जोधपुर के राज्य गवाक्ष में बैठाने का गौरव प्राप्त किया था, उस घटना को यदि कल्याणसिंहजी के स्वर्गवाससे ३-४ वर्ष पूर्व मान ली जाय, तो कर्मचन्द्र के मन्त्री होने का समय सं० १६२५ के पूर्व होता है। अगर उस समय उनकी अवस्था लगभग २०-२५ वर्ष की भी भी अनुमानित करें, तो कर्मचन्द्रजी का जन्म सं० १६०० के लगभग होना सम्भव है।

एक बार राय कल्याणसिंहजीने जोधपुर के राज-गवाक्ष मे बैठ कर कमल पूजा करने का अपने पूर्वजो के दुस्साध्य और चिरकालीन मनोरथ, मन्त्रीश्वर के समक्ष प्रगट किया। उन्होने अपने स्वामी की भक्तिवश कुमार रायसिंहजी के साथ सम्राट अकबर के पास जाके उनको प्रसन्न कर, * इस विषम और कठिन कार्य को भी सिद्ध कर दिया। मन्त्रीश्वर की इस सेवा से प्रसन्न होकर राय कल्याणसिंहजी ने उन्हे मनोवाञ्छित मागने को कहा, किन्तु उन्हें तो वैभव से भी धर्म अधिक प्रिय था, इससे अन्य कुछ भी न चाह कर यह याचना की १) चातुर्मास मे कुम्भार, हलवाई, तेली वगैरह, अपने तिल पीडनादि हिंसात्मक कार्य न करें। (२) वणिकों से "माल" नामक कर लिया जाता है और जकात, जो कि चतुर्थांश ली जाती है, भविष्य में न ली जाय। (३) बकरी, भेड, ऊरआदि का कर न लिया जाय। नरेश ने इन बातों की सहर्ष स्वीकृतिके साथ विशेष कृपा का परिचायक चार गाव का (वश परम्परा तक) पट्टा प्रदान किया।

दिल्ली पर आक्रमण करने जाते हुए 'इब्राहिममीर्जा' को नागौर के

* सम्राट को प्रसन्न करने का कारण "ओसवाल जाति क इतिहास" में लिखा है कि जिस समय कर्मचन्द्र दिल्ली (?) दरबार में गये, तब सम्राट सतरंज खेल रहे थे। सतरंज की चाल रुकी हुई थी, क्योंकि जो चाल चलते, उसी में वे हारते थे। कहा जाता है कि कर्मचन्द्र ने सतरंज की ऐसी चाल बताई कि बादशाह विजयी हो गए और मत्रीश्वर पर खूब प्रसन्न हुए।

पास कुमार रायसिंहके साथ मन्त्रीश्वरने संग्राम करके पराजित किया। सम्राट की मदद के लिये गुजरातपर चढ़ाई करके 'मीर्जामहमद हुसेन' से युद्ध कर विजय प्राप्त की। सन्धिविग्रहादि में अपनी निपुणता और बुद्धि वैभव से, सोजत समियाणा और आबू देश को सर किये। जालोर के अधिपति को वश कर रायसिंहजी के पाय-नामी किया। सम्राट से आज्ञा प्राप्त कर मुगल सेना से आक्रमित आबू तीर्थ की रक्षा और वहां के चैत्यों की पुनः सुव्यवस्था की। शिवपुरी से आये हुए बन्दीजनोंको अपने घर लाकर सम्मानित किया। आबू-के मन्दिरों को स्वर्णदण्ड, ध्वज और कलश चढ़ाकर सुशोभित किये। समियाणा के बन्दीजनों को रायसिंहजी की कृपा से सैनिकों के हाथ से छुड़ाया।

सं० १६३५ के महादुष्काल के समय १३ महीने तक मन्त्रीश्वर ने दानशाला खोल कर दीन, हीन, रोगग्रस्त व्यक्तियों को खान-पान, वस्त्र औषध आदि देकर प्रशंसनीय सहायता की। वह सहा-यता संकुचित क्षेत्र में न हो कर, जो कोई भी चाहे किसी धर्म और जातिका हो, प्रदान की गयी। स्वजातीय और स्वधर्मियोंकी तो बात ही क्या ? वर्षभर के खरच योग्य द्रव्य उनके घर गुप्त-रूप से पहुंचा दिया गया। १३ मास के पश्चात् सुकाल हो जानेपर आश्रितों को अपने खरच से साथी देकर स्वस्थान पहुंचा दिये।

सं० १६३३ में तुरसम खान ने सीरोही लूटी। वहां से १०५० जिन प्रतिमाएं लेकर फतहपुर में सम्राट अकबर को पेश की। सम्राट ने अपने धर्म-सहिष्णुता गुण से उनको गला कर सोने निकालना निषिद्ध

करके एक अच्छे स्थान में हिफाजत से रखने का आदेश दिया, और यह भी कहा कि मेरी आज्ञा के बिना किसी को मत देना। जैन संघ में उन प्रतिमाओं को पुनः प्राप्त करने की आतुरता बढ़ने लगी। लेकिन सम्राट से मिल कर उनकी आज्ञा प्राप्त करना भी तो कोई सहज नहीं था। ५-६ वर्ष बीत गये, किन्तु जिनबिम्बों को छुड़ाने में कोई समर्थ न हो सका। जब यह बात मंत्रीश्वर कर्मचंद्र ने सुनी तो उनके हृदय में बहुत अखरी और येनकेनप्रकारेण लाखों रुपये खर्च करके भी उन्हें प्राप्त करने के लिये अपने स्वामी रायसिंह से निवेदन किया। इस पर वे भी मंत्रीश्वर के साथ हो गये और सम्राट अकबर को बहुत सी भेंटें करके प्रसन्नता प्राप्त कर ली। उनके मांगने पर सम्राट ने समस्त प्रतिमाएं उन्हें सुपुर्द करने का फरमान दे दिया।

सं० १६३६ के मिती आषाढ़ शुक्ला ११ गुरुवार के दिन उन प्रतिमाओं को प्राप्त करके, डेरे में लाए, जैन संघ बहुत हर्षित हुआ। मन्त्रीश्वर ने इस कार्य से शासन की अपूर्व सेवा की। फतेपुर से समस्त प्रतिमाएं अपने साथ बीकानेर ले आये और महोत्सवपूर्वक अपने घर देहरासर में स्थापित की ×।

× इस विषय के हमें दो तत्कालीन स्तवन उपलब्ध हुए हैं, उन्हीं के आधार से यह वृतान्त लिखा गया है, वे स्तवन भविष्य में हमारी ओर से प्रकाशित होनेवाले "बीकानेर जैन लेख संग्रह" में प्रकाशित होंगे।

इन प्रतिमाओं में मूलनायक श्री वासुपूज्य स्वामी की चौवीसी-मूर्ति आज भी "वासपूज्यजी के मन्दिरमें विद्यमान है। अन्य प्रतिमाएं भी

सम्राट् अकबर ने प्रसन्न होकर वच्छराज के वंशजों की मंत्रि-पत्नियों के पैरों में नुपूर आदि सोने के आभूषण पहनने की आज्ञा देकर वच्छावत वंश का महत्व बढ़ाया। इससे पहले ओसवाल वंशज "साधु-सा.ग" के घराने की स्त्रियों के अतिरिक्त दूसरों के लिए यह आज्ञा नहीं थी।

तुरसमखान के गुजरात से लाए हुए वणिक-कैदियों को बहुतसा द्रव्य देकर छुड़ाया, जैन याचकों को बहुतसा दान दिया, शत्रुञ्जय और मथुरा के जीर्ण चैत्यों का उद्धार कराया। प्रति-देश प्रतिग्राम प्रतिपुर में यावत् काबुल पर्यंत सर्वत्र "लाहण" की। उ० श्री जयसोमजी के पास ११ अंग श्रीचंद्र के साथ बीकानेर में श्रवण किये, श्रुतज्ञान की भक्ति के निमित्त सिद्धान्तों के लिखाने में बहुत सा द्रव्य व्यय किया।

एक बार बीकानेर में सूरिजी से "भगवती सूत्र" श्रवण किया और भगवान महावीर के प्रति गणधर गौतमस्वामी के किए

कई वर्षों तक उक्त मन्दिर में प्रति दिन पूजी जाती थीं। पश्चात् इतनी प्रतिमाओंका पूजन-प्रबन्ध कठिन होने से या किसी अन्य कारण से जैन-संघ ने श्रीचिन्तामणिजी के मन्दिर के भूमिग्रह में रख दी। उन प्रतिमाओं को समय-समय पर उपद्रव और महामारी आदि रोग उपशान्तिके निमित्त भूमिग्रह से निकालकर अष्टान्हिक-महोत्सवादि किया जाता है। हाल ही में सं० १९८७ के मिती कार्तिक शुक्ला ३ को निकाल कर मिती मार्गशीर्ष कृष्णा ४ को वापिस भीतर रखी गई थीं।

हुए प्रत्येक प्रश्नपर मुक्ताफल (मोती) चढाए† । इस आगम मे ३६००० प्रश्न होने से मोतियों की सख्या भी ३६००० ही हुई, जिन में १६७०० मोती चन्द्रवे में, ११६०० पूठिये मे अवशेष पूठा ठवणी, कवली, साज, वींटागणा आदि मे लगाए गए ।*

† क्षमाकल्याणोपाध्याय कृत भगवती सूत्र सज्झाय में —

बीकानेर तणो वलि मन्त्री, कर्मचन्द्र इण नाम ।
तिण गौतम गुरु ना नाम पूज्या, मुक्ताफल अभिराम ॥ १३ ॥

पं० दीपविजय कृत भगवती सूत्रकी गहूली में '—

"कर्मचन्द्र मोतीडे बधाई, कीन भगत गुरु सेवा ।
भगवती सूत्र सुणो बहु भावे, चाखो अमृत मेवा ॥ ६ ॥

* श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभण्डार की एक ख्यात में लिखा है '—

"हिवे राजा रायसिंहजी रे वारे मुंहते करमचन्द शहर उपेली ने बसायो, जात आप आप री बास (गुवाड) में बसाया × × × × रायसिंहजी पातसा रे पगे लागा अर मुहते करमचन्द ने लेकर गुजरात चढ्या उठे राड जीत्या । पछे पातसाह सुं मुहते करमचन्द मुजरो कियो। तरे पातस्या कह्यो माग कर्मचन्द ! मैं तूठा, पछे पातस्या सु अरज कर ५२ परगना राजा रायसिंह ने दराया × × × × उपासरो महात्मा नीचे देख के आपरी घोडा री घुडसाल री जागा उपासरो करायो। देहरो १ चौवीसटैरो, २ वासुपूज्जी रो, ३ नमिनाथजी रो इम तीन देहरा पचा रे खोले घाल्या पछे श्रीपूज्यजी पासे भगवतीजी सुण्या, पूरण हुवां ३६००० मोती चढाया तरे श्रीपूज्यजी कह्यो माहरे कइ काम नहीं अर ज्ञान काम में लगावो ! तरे १६७०० मोती रो चंदरवो करायो, ११९०० मोती को पूठीयो करायो बाकी रा पूठा ठवणी साज वीटाणा रे लगाया घणो द्रव्य खरच्यो"

मंत्री ने शत्रुञ्जय, गिरनार पर नव्य जिनालय निर्माण कराने के लिए द्रव्य भेजा। राजा रायसिंह की आज्ञा से सारे राज्य में चौपर्वी (आठम-चौदस-पूनम-अमावश) और चातुर्मास में कुंभार, तेली आदि को अपना हिंसात्मक कुल-व्यापार त्याग कराया। समस्त मरुमण्डल में खेजड़ी आदि वृक्षों को छेदन करना निषिद्ध किया। सिन्धु देश की प्रभुता प्राप्त कर सतलज, डेक, रावी नदियों में मच्छों की हिंसा बन्द कराई। चतुर्विध सैन्य सहाय्य से हरप्पा के रहे हुए शक्तिशाली ब्लुचियों को परास्त कर कुलीन बन्दीवानों को छुड़ाया और उन्हें अपने घर लाकर सत्कृत किया। मंत्रीश्वर प्रतिदिन जिनालयों में स्नात्र पूजा कराते थे, फलवर्द्धि में श्री जिनदत्तसूरि और श्रीजिनकुशलसूरिजी के स्तूप बनाए।

मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र के अजायबदे, जीवादे, और कपूरदे नाम की तीन स्त्रियें थी। जिनमें जीवादे, अजायबदे नामक पत्नी द्वय से दो पुत्र रत्न उत्पन्न हुए। पैंतीसे-दुष्काल में अनाथों का रक्षण और मरुदेश में वृक्ष-छेदन निषेध करने से उनकी पुण्यश्री वृद्धि हुई, उसी के फल स्वरूप ही कुल दीपक पुत्र द्वय की प्राप्ति हुई। सम्राट् के समक्ष मंत्रीश्वर ने इस हर्षोपलक्ष में नाना प्रकार की भेंट रखी। सम्राट ने बधाई देते हुए उनका अभिधान "भाग्यचन्द्र" और "लक्ष्मीचन्द्र" रखा ×।

उपरोक्त बात में जरा भी अतिशयोक्ति ज्ञात नहीं होती, क्योंकि मोती के चन्द्रवे पूठिये ८-१० वर्ष पूर्व बीकानेर के बड़े उपाश्रय में विद्यमान थे, किन्तु दुर्भाग्यवश किसी अवाञ्छनीय कारण से अब नहीं रहे !!!

× "कर्मचन्द्रमंत्रि वंश प्रबन्ध" के इस वर्णन से, सं० १६३९ के पश्चात् ही पुत्र-द्वय का जन्म-समय निर्धारित होता है।

मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र के उद्योग से बीकानेर-नरेश रायसिंह पाँच हजारी पद को प्राप्त हुए, 'राजा' पदसे विभूषित हुए। "राजपुतानेके जैन वीर" नामक ग्रन्थ में लिखा है कि जयपुर के राजा अभयसिंह ने बीकानेर पर आक्रमण किया तब मंत्रीश्वर ने ही अपनी प्रखर बुद्धि द्वारा शत्रु से सन्धि करके राज्य की रक्षा की थी। संक्षेपमें इतना ही कहना पर्य्याप्त होगा कि मंत्रीश्वर ने बीकानेर राज्य की सेवा और स्वामी-भक्ति करने में कोई कसर नहीं रखी। बीकानेर राज्य के इतिहास में लिखा है कि सं० १६४५ में बीकानेर का वर्त्तमान दुर्ग बनाना आपने ही प्रारम्भ किया था।

अन्यदा किसी कारण* से रायसिंहजी का चित्त-कालुष्य जान

---

* कर्मचन्द्रमन्त्रि-वंश प्रबन्ध (१६५०) वृत्ति में :— "अथ अनन्तरं अन्यदा अन्यस्मिन काले दैव शुभाशुभ कर्म दैवं योगाद् विधि वशात् कलिकालस्य विक्षमितं विलसितं निजेशस्य आत्मीय प्रभो श्री रायसिंहस्य वैमनस्यं चित्तकालुष्यं निजे चित्ते ज्ञात्वा राज्ञ श्रीराजसिंहस्य आज्ञां आदेशं समासाद्य प्राप्य निजं जनं स्वजन वर्गं समादाय गृहीत्वा मेदनी तटं मेड़तापुरत्याख्ययाख्यातं अध्यास्त् अध्यतिष्टत् अशोश्रयत्; किम्भूतो मन्त्री स्वामी एवं धनं,तेनधिकः अतिशायि स्वामीधर्मधनाधिकः॥३५-३६॥

श्रीजिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास (सं० १६५८ रचित,) में:—

पिशुन तणे पग फेर, मूंकी बीकानेर।
लाहोर जइय उच्छाहि सेव्यो श्री पतिसाह ॥ ३२ ॥

बच्छावतों की एक प्राचीन वंशावली में :—

"जाणी न बात हुई जिकाय, रायसिंह करमचन्द पड़ी राय।
यह कमो गयो पतिसाह पास, बिहारियइ राय लियइ मास वास ॥१२॥

कर भावी के शुभ संकेत से उनका आदेश लेकर विचक्षण और बुद्धिमान मंत्रीश्वर, दीर्घदर्शिता से अपने स्वजन परिवार के साथ

अब इस विषय में आधुनिक इतिहासकारों के मत लिखते हैं :—

(१) बीकानेर राज्य के इतिहास में लिखा है :—"निदान अकबर ने रायसिंहजी की स्वावलेपता को अधिक स्फूर्ति पाते देख फौरन भेद नीति का प्रयोग किया। यानी राजाजी के ज्येष्ठ पुत्र दलपतसिंहभाई, रामसिंह और दीवान कर्मचन्द्र को फोड़ कर राज्य में दो दल कर दिये। जब राजा रायसिंह को यह भेद ज्ञात हुआ, तो उन्होंने रामसिंह को तो विष-प्रयोग द्वारा शान्त कर दिया और दीवान कर्मचन्द्र बच्छावत को पदच्युत करके रियासत से निकाल दिया। वह सपरिवार दिल्ली जाकर बादशाह की सेवा करने लगा।

(२) "भारत के प्राचीन राज्यवंश" में वैमनस्य का कारण रायसिंह को मार कर कुमार दलपतसिंह को गद्दी बिठाने की आकाँक्षा लिखा है। रेऊजी यह भी लिखते हैं कि सं० १६५२ में कर्मचंद भागके अकबर के पास गया।

(३) कर्नल पावलेट ने "बीकानेर गजेटियर" में लिखा है कि जिस समय बादशाह कर्मचन्द्रजी से सतरंज खेलते थे, उस समय कर्मचन्द्रजी तो बैठे रहते, लेकिन बीकानेर नरेश खड़े रहते थे, यह भी उनकी नाराजी का एक कारण था।

(४) "राजपुताने के जैन वीर" में श्री गोयलीयजी ने लिखा है :—कि एक बार शंकर भाट को राजा रायसिंह ने एक करोड़ का दान देने के लिये मन्त्रीश्वर को आज्ञा दी ; उनकी इस आज्ञा को मन्त्रीश्वर ने अनुचित

मेड़ते मे आकर निवास करने लगे। वे प्राचीन तीर्थ फलवर्द्धि पार्श्व-

समझा × × × × कर्मचन्द्र ने बीकानेर के घराने से भक्ति और प्रेम के कारण अपव्ययी राजा को सचेत करने का फिर उद्योग किया, परन्तु उसका परिणाम बहुत भीषण हुआ।''

गोयलीयजी ने टांक साहब की राय देते हुए उपरोक्त दलपतिसिंह के विषय में षड़यन्त्र के दोष से कर्मचन्द्र के बिलकुल मुक्त होने का उल्लेख इस प्रकार किया है :— गरज यह कि कर्मचन्द्र षड़यन्त्र के दोष से बिलकुल विमुक्त था, उसने सत्य और न्याय के कार्यों के लिए अपने प्राण निछावर कर दिये। वह किसी षड़यन्त्र का रचियता नहीं था, वह स्वयं षड़यन्त्र का शिकार हो गया। उसकी बुद्धिमानी और कर्त्तव्यतत्परता ही, जिनसे उसने राज्य को सम्भाल रखा था, उसके नाश का कारण हुई। जो राजा को अपव्यय और दुराचार में फंसा देखना चाहते थे, उनका जोर बढ़ता गया और कर्मचन्द्र के तरफ से राजा के कान भरने शुरु कर दिये और षड़यन्त्र रचने का दोष लगाया।

मुंशी देवीप्रसादजीने रायसिंहजी की नाराजी का एक अन्य ही कारण बतलाया है, लेकिन हम आधुनिक इतिहासकारों के किसी भी कारण से सहमत नहीं हैं। मन्त्रीश्वर के पवित्र हृदय, उनकी स्वामीभक्ति और राज्य-सेवाएं देखते हुए उनके राज-विद्रोही आदि होने का दोष केवल कपोलकल्पना और मनगढ़न्त किम्वदन्ती ही ज्ञात होती है।

हमारे इस कथनके मुख्य हेतु ये हैं:—

मन्त्रीश्वर सं० १६४७ के साल में लाहौर पहुंच चुके थे। सं० १६४८ में अकबरने सूरिजी को आमंत्रित किया, उस समय मंत्रीश्वर भी वहाँ थे। अतः रेऊजी का ''सं० १६५२ में कर्मचन्द्र भागकर दिल्ली गया'' लिखना

नाथ और जिनदत्तसूरिजी की भक्ति सहित पूजा किया करते थे।

बिल्कुल गलत है। सं० १६५० में "कर्मचन्द्रमन्त्रिवंशप्रबन्ध" लाहौरमें रचा गया था। उसमें मंत्रीश्वरका महाराजा रायसिंह के आदेश से मेड़ता जाना, वहांसे सम्राट के पास भी उन्हींकी आज्ञा से आना, स्पष्ट रूप से लिखा है। इतना ही नहीं, किन्तु सम्राट के सम्मान पात्र हो, लाहौर में रहते हुए भी मंत्रीश्वरने श्रीजिनचन्द्रसूरिजी का "युगप्रधान पद" महोत्सव भी रायसिंहजी की आज्ञा प्राप्त करके ही किया था। जैसा कि:—

ततश्च सचिवः स्वामी, धर्म धौरयता धरः।
श्री रायसिंह भूपाल, पादमाई समागमत् ॥ ४४९ ॥
सर्व वृत्तान्त माख्याय, साह्युक्तं साहसाग्रणो।
प्राप्यसेहं महादेशं, सिंह प्रक्षरितो भवत् ॥ ४५० ॥

अतः उक्त घटना के ४१६ मास पश्चात् लिखित, ऐतिहासिक प्रमाण से किम्वदंतियों को अधिक महत्व देना बड़ी भारी भूल है। "उक्त वंश प्रबंध" से, गोयलीयजीका कर्मचन्द्र जी को निर्दोष और शेषपर्य्यन्त स्वामी-भक्ति-परायण लिखना, प्रमाण और युक्ति पुरस्सर ज्ञात होता है। यह सम्भव है कि किसी चुगलखोर ने कर्मचंद्र के उत्कर्षसे असहमान होकर उनके विरुद्ध असत्य या व्यर्थ आक्षेप लगाकर राजासाहब की अप्रसन्नता उत्पन्न करा दी हो। "श्रीजिनचंद्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास" का "पिशुन तणे पग फेर" वाक्य भी हमारे इस कथनकी पुष्टि" करता है। सारांश यह है कि कर्मचंद्र जी राजविद्रोही नहीं थे।

सं० ३ और ४ के कारण भी कोई महत्व के और विश्वसनीय ज्ञात नहीं होते।

आधुनिक सभी लेखक, सम्राट अकबर की सेवा में मंत्रीश्वरका दिल्ली

मंत्रीश्वर के बीकानेर छोड़कर मेड़ता जाने का समय सं० १६४६ और ४७ के बीच में है क्योंकि गुणविनयजी ने सं० १६४६ में "रघुवंश-वृत्ति" बीकानेर में रची थी, उसकी प्रशस्ति में उस समय कर्मचंदजी के वहां ही मंत्रीश्वर पद पर होने का ऐसा उल्लेख है :—

"श्रीरायसिंह भूभुजि निज भुजबल निर्जितारि नृप राज्ये।
सन्ध्यादि गुण विचक्षण मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र वरे॥"

और उन्होंने हो सं० १६४७ मेड़ते में "दमयन्ती चंपूवृत्ति" की रचना की, उसकी प्रशस्ति में भी मंत्रीश्वर का नाम है।

जब मंत्रीश्वर मेड़ते में थे, तब उन्हे बुलाने के लिए राणा मानसिंह आदि (अनेक स्थानों के) नृपतियों के आमन्त्रण आये। लेकिन वे चञ्चल न होकर धीरता से, साधारण नृपतियों की सेवा करना अनुचित समझ कई मास वहीं रहे।

सम्राट अकबर उनके गुणसमूह से भली भांति परिचित थे। क्योंकि राजा रायसिंह के साथ मंत्रीश्वर कई बार सम्राट से मिल चुके थे। सम्राट ने इनके वाक्चातुर्य्य, युद्धकौशल और परम राजनैतिज्ञता आदि सद्गुणोंकी प्रशंसा रायसिंहजी के मुख से सुनी थी और स्वयं अनुभव की थी। इस प्रसंग पर सम्राट ने मंत्रीश्वर को अपने पास

जाना लिखते हैं किंतु उस समय सम्राट लाहौरमें ही रहते थे, और उसके पश्चात् भी कई वर्षों तक लाहौर रहे। अतः उनका यह लिखना बिल्कुल अयुक्त और भ्रमपूर्ण है। न मालूम किस तरह आधुनिक इतिहासकारों(!) ने बेसिर-पैरकी बातें लिख डाली हैं।

लाहोर भेजने के लिए राजा रायसिंहजी को फरमान-पत्र भेजा। तब रायसिंहजी ने सम्राट के फरमान के साथ अपनी ओर से अद्भुत कृपा वाक्यों मय सम्राट के पास जाने के लिए आदेश-पत्र भेजा*।

मंत्रीश्वर अपने स्वामी रायसिंह की आज्ञा प्राप्त कर हाथी, घोड़े, पैदल सेना और महान् ऋद्धि के साथ× वहां से रवाना होकर अजमेर पहुंचे। वहां श्रीजिनदत्तसूरिजी की निर्वाणभूमि का स्पर्शन और चरणपादुकाओं का दर्शन करके क्रमशः लाहोर पहुंचे। अपने प्रबल भाग्योदय से किसी उमराव आदि के प्रयास, सहाय्य और सेवा के बिना स्वयं ही सम्राट से जा मिले और बहुमूल्य भेटना करके मधुर प्रस्तावोचित और युक्तियुक्त वचनों से सम्राट के हृदय को अपने आधीन कर लिया। सम्राट ने उनके प्रति सहा-

---

* प्रसादात्पार्श्वनाथस्य, गुरोश्च कुशल प्रभो।
साहे जलाल दीनस्य, श्रुत इष्ट गुणावले॥ ३४०॥
महाराजाधिराज श्री, राजसिंह निज प्रभु।
प्रेषिताह अतोत्कृष्ट, फुरमान समन्वितम्॥ ३४१॥
समाजगाम सप्रेम, प्रसाद वचनाद्भुतम।
फुरमानं त्वयाग्रा गन्तव्या मेवोति भाववत्॥ ३४२॥

[कर्मचन्द्र मन्त्रि-वंश प्रबन्ध सं० १६५०]

× उनका पुत्र आदि परिवार मेड़तेमें ही रहा। "अकबर प्रतिबोध रास" से ज्ञात होता है कि लाहोर जाते हुए सूरिजी जब मेड़ते पधारे, तो मन्त्री पुत्रोंने उनका प्रवेशोत्सव किया था।] जिसका उल्लेख हम इसी ग्रन्थके पृ० ७१ में कर आये हैं।

नुभूति और कृपा प्रगट करते हुए कहा "तुम किसी तरह की चिन्ता मत करो, जैसे वारिवाह्-मेघ अंकुर को बढ़ाता है वैसे ही मैं तुम्हे सब राजाओं से अधिक सन्मानित होने का गौरव दूंगा!" वे केवल यह कहके ही नहीं रह गये, किन्तु मंत्रीश्वर को अपने परिषद् के सामाजिक लोगों का अध्यक्ष बनाया और अपना निजी हाथी, सोने के आभूषणों से सुसज्जित शिकारी घोडा समर्पण किया, इतना ही नहीं थोड़े दिनों में वे सम्राट के इतने विश्वास-पात्र हो गए कि उन्होंने मंत्रीश्वर को अपने भण्डार (गञ्ज) अर्थात् खजाने का अधिकारी (खजाञ्ची) और तोसाम देश का गवर्नर नियुक्त किया।

उसके पश्चात् मंत्रीश्वरका सम्राटके पुत्र शाहजादा शेखू (सलीम) के मूल नक्षत्रमें उत्पन्न पुत्रीके जन्म दोषकी शान्तिके निमित्त अष्टोत्तरी-स्नात्र कराना, वा० महिमराजजी और पीछे सूरिजी को सम्राट के विनीत आमन्त्रण से लाहौर बुलाना, काश्मीर यात्रा में सम्राट के साथ जाना, जिनसिंहसूरिजीके पद स्थापन समय सवाकरोड़का दान देना और अनेक सत्कार्यों मे विपुल धनराशि व्यय कर शासन शोभा बढाने का विस्तृत वर्णन हम इसी पुस्तक के छट्ठे, सातवें और आठवें प्रकरण मे लिख चुके हैं, अतः उन्हे यहां दुहराना अनावश्यक है। 'अकबर प्रतिबोध-रास' से ज्ञात होता है कि आपका प्रभाव सर्वव्यापी था। सभी देशोंके राजागण, अमीर उमराव, मीर, मलक, खोजा और खान आपका बहुत सम्मान करते थे। सम्राट अकबरसे आपको प्रगाढ़ प्रीति थी। देखें ऐ० जैन काव्य संग्रह पृ० ६१

मन्त्रीश्वर खरतर गच्छ के अनन्य भक्त थे। तपा गच्छीय सुप्रसिद्ध विद्वान सिद्धिचन्द्रजी ने "भानुचन्द्र चरित्र" मे मन्त्रीश्वरको "खरतरगच्छ श्राद्धमुख्य और भूभुजमान्य" लिखा है। आपने फलोधी तोसाम† लाहोर आदि अनेक स्थानो म श्रीजिनकुशलसूरिजी के स्तूप बनवा कर उनकी चरण पादुकाए प्रतिष्ठित कराई थीं।

वा० गुणविनयजी ने "कर्मचन्द वंश प्रबन्ध" की वृत्ति आपके ही आग्रह से रची थी ×।

श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभण्डारस्थ पट्टावली में, स० १६५३ के दुष्काल में मन्त्रीश्वर के दानशाला खोलकर अनाथो की रक्षा करने का उल्लेख इस प्रकार है —

"मन्त्री करमचदइ पइत्रीसइ नइ* निपन्नइ, गामि गामि सत्रूकार मडावी पृथ्वी डुलती रखी, पतिसाह पास थी पीतलमय प्रतिमा घणी छोडावी, वलि जिण नगरि मुहतउ गयो तिण नगरी रुपइया वि नी लाहण कीधी"

---

† श्री तोसाम पुरेवर शाखि न दान प्रधान छर बृक्षे।
श्री मंत्रिराज कारित जिनकुशल स्तूप कृत रक्षे॥६॥
(कमचद्रवंश प्रवन्ध वृत्ति)

× श्रीकर्मचन्द्र राजाग्रहेण सदनुग्रहेण कुशल गुरो।

* कविवर समयसुन्दरजी कृत कल्पलता वृत्तिकी अन्त्य प्रशस्ति में —
"यद्वारे किल कर्मचन्द्र सचिव, श्राद्धोभव दीप्तिमान्।
यत्र श्री गुरराज नंदि महसि,द्रव्य व्ययो निममे॥
कोट पाट युज शराग्नि (३५) समये, दुर्भिक्ष वेलाकुले।
शत्राकार विधानतो बहु जना, संजीविता यत्र च॥ १०॥
और अकबर प्रतिबोधरास, जिनराजसूरि रास, जिनसागरसूरि रास

इस प्रकार अनेकानेक लोकोपकार और धर्म प्रभावना द्वारा अपने प्रशस्त कीर्ति को दिगन्त-व्यापी और अमर करके मन्त्रीश्वर सं० १६५६ में अहमदाबाद में स्वर्ग सिधारे। जिसका उल्लेख हम इसी ग्रन्थके १३४ वें पृष्ट में कर चुके हैं।

आधुनिक प्रायः सभी इतिहासकार और लेखक-गण मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रकी मृत्यु, सम्राट अकबर के देहान्त के कुछ समय पश्चात् ही (सं० १६६२-६४) दिल्ली में होना लिखते हैं। और यह भी लिखते हैं, कि उस समय महाराजा रायसिंहजी भी जहांगीर से मिलने के लिए वहीं गए हुए थे, उन्होंने मंत्रीश्वर की अन्त्य अवस्था में उनकी हवेली में जाकर शोक प्रकट किया, महाराजा के नेत्रों से नीर बहने लगा। जब वे वापस चले गए, तब कर्मचन्द्र के पुत्रों ने महाराजा के प्रेम की बहुत प्रशंसा की, परन्तु मंत्रीश्वर ने कहा पुत्रों! तुम भूल कर रहे हो! ये आँसू प्रेमके नहीं थे। वे तो इस बातके थे कि मैं सुख और सुयश से स्वर्ग सिधार रहा हूं—और राजाजी जीतेजी मुझसे बदला न ले सके! तुम भूल कर भी बीकानेर मत जाना!" तदनन्तर कर्मचन्द्र की जीवन ज्योति निर्वाण को प्राप्त हुई; परन्तु प्रतिकार-परायण महाराजा रायसिंह ने अपनी अंतिम अवस्था मे अपने विशेष प्रेमभाजन कुमार सूरसिंह के समक्ष बच्छावत-पुत्रों से बदला लेने की इच्छा प्रकट की। तत्पश्चात्

एवं बहुतसी गहूंलियों में मंत्रीश्वरके सुकृत्योंका वर्णन है; वे रास "ऐतिहासिक-जैन-काव्य-संग्रह"में देखने चाहिये।

राज्य सिंहासनारूढ हो कर सूरसिंह दिल्ली गए और कर्मचन्द्र के पुत्रों को अत्यन्त विश्वास दिला कर बीकानेर मे ले आये। महाराजा ने उन्हें सन्मान पूर्वक मन्त्री-पद पर नियुक्त किये। कई (२-४-६) मास तक तो खूब कृपा वतलाई। एक समय महाराजा स्वयं इनकी हवेली पर पधारे, बच्छावत-भाइयों ने एक लाख रुपये का चौतरा करके उनको सन्मानित किया। इसके पश्चात् एक दिन, रात्रि के समय उनका मकान सूरसिंह जी के ३००० सिपाहियोंने घेर लिया। वे दोनों बडे वीर थे, अपने पाच सौ सैनिको के साथ सामना किया, अन्तमे राज्य की बडी-शक्ति के सामने टिके रहना कठिन समझ कर अपने सारे परिवार को मारकर स्वयं जौहर कर वीरगति को प्राप्त हुए। इनके कुटुम्ब की एक गर्भवती स्त्री रघुनाथ सेवक को साथ लेकर भागी और श्रीकरणी माता के मन्दिर मे जाके शरण ली, वह राज्यके नियमानुसार रक्षा पाकर अपने पीहर में उदयपुर चली गई, उसीके पुत्र "भाण" से वश पपम्परा चली जो अभी भी उदयपुरसे आबाद हैं।"

"महाजन वंश मुक्तावली"मे महो० रामलालजी गणि लिखते हैं, कि इनका रगतिया नामक नौकर इस युद्ध में खूब वीरता से लड कर जूझार हुआ जो आज भी "रिगतमलजी" नामसे (प्रसिद्ध क्षेत्रपाल) लोगों द्वारा पूजा जाता है। वर्त्तमान रावडी के चौक का नाम पहले "माणकचौक" था। परन्तु वहा इस युद्धमे बहुत से रागड (राजपूत) मारे जाने से, उक्त स्थान 'रागडी' के नाम से प्रसिद्ध हो गया। उक्त पुस्तक मे भाट-मथेरणों की वंशावलियें कर्मचन्द्रजी के द्वारा कुएं मे

गिर यी जाना, राजा सूरसिंह का उनके पुत्र खींवराज (१) को बुलाकर "खियासर" गाम, और कारखाने में बच्छावतों को हाजिर रहने का सन्मान देना, आदि बहुत सी बातें लिखी हैं।

हम उपरोक्त कथनों में पूर्ण सहमत नहीं हैं। हमारी नवीन ऐतिहासिक शोध-खोज में जिन समस्याओं का तथ्य निर्धारित हुआ है, वे ये हैं :—

(१) मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र की मृत्यु सं० १६५६ में अहमदाबाद में हो गयी थी। यह तत्कालीन लिखे "विहार पत्र" से सिद्ध है। अतः अकबर की मृत्यु के बाद उनका देहावशान दिल्ली में होना मिथ्या प्रमाणित होता है। 'विहारपत्र' से यह भी जाना जाता है कि सम्राट अकबर उस समय (दक्षिण विजय करने) बुरहानपुर गये हुए थे। पं० दशरथ जी शर्मा एम० ए० के कथनानुसार, बीकानेरस्टेट के शाही-फरमानों में, उसी समय महाराजा रायसिंहजी को युद्ध में सहायता के निमित्त दक्षिण में बुलाने का भी एक फरमान उपलब्ध है। यह संभव है कि मार्ग में रायसिंहजी मन्त्रीश्वर के अन्त समय में उनसे अहमदाबाद में मिले हों।

(२) सं० १६८१ में रचित "जिनसागरसूरि रास" से ज्ञात होता है, कि सं० १६७६ के लगभग जब श्रीजिनसागरसूरिजी बीकानेर पधारे थे, तब वहां उनके प्रवेशोत्सव में मन्त्रीश्वर भागचन्द्र के पुत्र मनोहरदास भी सम्मिलित हुए थे। उसका अवतरण इस प्रकार है:-

> *"बीकानयर वंदीइ पहुंचइ, श्रीजिनसागर सूरि।*
>
> *पातशाणिए कर्युं पइसारउ, रंगइ बहुत पडूरि ॥ ७९ ॥*

पासाणी बहु वित्त वावई, पइसारइ साम्हा आवइ।

सोलह शृंगारे सारी, श्री कलश धरी बहु नारी ॥ ८० ॥

श्री भागचन्द्र सुत आवइ, मनोहरदास निजदावइ।

वलि संघ सद्‌गुरु वंदइ, श्री खरतरगच्छ चिरनंदइ ॥८१॥

उपरोक्त प्रमाण से बीकानेर जाने के पश्चात् भाग्यचंद और लक्ष्मीचंद कई महीनों नहीं, बल्कि कई वर्षों तक बीकानेर में सुखपूर्वक रहे, यह सिद्ध होता है।

(३) भाग्यचन्द्र, लक्ष्मीचन्द्र की मृत्यु के सम्बन्ध में हमें १८ वीं शताब्दि के पूर्वार्द्ध में लिखित बच्छावत-वंशावली* की दो प्रतियें उपलब्ध हुई हैं, जिनसे सं० १६७६ के फाल्गुन मासमें सूरसिंहजीका कुपित होना और मंत्रीश्वरके पुत्रोंका मारा जाना सिद्ध है। वंशावलीका आवश्यकीय सार इस प्रकार है :—

---

*मुंहता बछावतां री वंशावली लिखीयै छै, देवड़ा गौत्र रजपूत चौवाण सांवत सी रो। सगरा रो। बोहथ। देवलवाड़ह रो धणी। बोहिथ। श्रावक हुवो। अभयदेवसूरि प्रतिबोध दीयो श्रावक कीयो। प्र० सगर १ बोहिथ २ रांगो ३ समधर ४ तेजपाल ५ विजयराज ६ कडवो ७ मेरो ८ मांडण ९ ऊदो १० नागदे ११ जेसल १२ बछो। बछा सुं सिरदार हुआ, बछइ सुं बछावत कहाणा। बच्छावत रो प्र० (परिवार) पुत्र ४ करमसी १ वरसिंह २ नरसिंह ३ रतो ४। करमसी निपट सिरदार हुओ। करमसीह बच्छावता रो प्र०। बेटा २। राजसी १ सूजो २। मुहतोजी राजसी। सूजो। राव लूणकर्ण आगे ढोसीरी बेढ (दूं?) मोहे काम आया। वरसिंघ

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के भाग्यचन्द्र और लक्ष्मीचन्द्र दो पुत्र थे, जिन में भागचन्द्रजी के पुत्र मनोहरदास थे। राजा सूरसिंह ने कुपित होकर उनके घर के इर्द-गिर्द १००० सैनिकों का घेरा डाल दिया। उस समय भाग्यचन्द्र सोये हुए थे, लक्ष्मीचन्द्र और मनोहरदास दरबार में गये थे। भाग्यचन्द्रजी जगे, बहू मेवाडीजी

वछावत री प्रवार बेटा ६ नगो १ अमरो २ मेघो ३ डुंगरसी ४ भोज ५ हरो ६ ।नगै (ने)टीको दियो । अमरो सिरदार हुओ । टीकायत नगो । नगो वरसिंघतरो परवार । सांगो १ देवो २ राणो ३ सांगो टीकायत । साग सगावत री प्र०बेटा २ मुं० श्रीकरमचंद जी १ जसवंत । २ जसवंत नुं कुंमर भींवराज चूक करनइ मारीयो ।

करमचद सागावत रो० प्र० बेटा २ भागचंद १ लखमीचन्द २ भागचन्द रो बेटा १ मनोहरदास १, राजा सूरजसिंघ मुहता उपरि कोपीयो तिवारै फोज विदा कोधो, माणस १००० मेली साथ घर दोलो फिरीयो, भागचन्द पोढीया था लखमीचन्द अनै मनोहरदास दरबार गया था, भागचन्दजी सूता जागीया तिवारै बहू मेवाड़ीजी मालिम कीयो राज उपरि फोज आइ। बहू कह्यो राज रो हुकम्म हुवे तो मरदो वागो करि नै हाथ जोवडा, भागचंदजी वहूजी नु मनहि कीधो। आप जुहर कीधो घायर ३ मारी,माता १ मनोहर दासरी मानुं मारी २ वेटारी बहु मारी ३ आप, आदमी ४ कामि आया। खवास १ मुं० राजसी रो घडो जुहर कीधो। सवत् १६७९ हुकम्म हुवो फागुण सुदि माहे १ लिखमीचद करमचद वत रो प्र० बेटा २ रामचन्द १ रुघनाथ २ प्रवार उदयपुर छै। रामचद लिखमीचदवतरो प्र० केसरीसिंघ १ सबलसिंघ २ पीथो ३ रुघनाथ रो कोइ नहीं, प्रवार १ ए करमचंद सांगावतरो वंस। जयवत सांगावतरो प्र०

ने उनके ऊपर फौज चढ़ने की खबर दी, और यह भी कहा कि आप की आज्ञा हो तो मैं भी मर्दाना वेश पहन कर राज्य सेना को हाथ दिखाऊं। इस पर भाग्यचन्द्र ने निषेध किया। तत्पश्चात् (१) माता, (२) मनोहरदास की मां, (३) पुत्र-वधू (मनोहरदास की बहू) को मार कर स्वयं युद्ध करते हुए काम आए।

इसी प्रसंग पर मुं० राजसी के खवास ने बड़ी वीरता से युद्ध (बड़ो जुहर) किया। लक्ष्मीचन्द्र के दो पुत्र थे। (१) रामचंद्र (२) रुघनाथ, उनका परिवार उदयपुर में है। रामचंद्र के केसरीसिंह, सबलसिंह और पीथा नामक तीन पुत्र थे। रघुनाथ निसन्तान रहे।

सं० १६७६ के फाल्गुन शुक्ला में यह भयानक घटना हुई थी। किसी कविने क्या ही मार्मिक शब्दों में कहा है :—

बेटा २ आसकरण १ अखैराज। २ आसकरण जसवंतरो प्र० नरसिंघ दास १ अखैराज जसवंतरो प्र० बेटा १ दुरगदास १, दुरगदास अखैराजवतरो प्र० सुंदरदास १ कल्याणदास २ प्र० २ जसवंत सांगावतरी विगति इतरो प्र० १ अथनगावत माहे प्र० २ भाइ रो २ मुं० देवो नगावत रो प्र०…इत्यादि (इसके बाद नगावत परिवार की विस्तृत परम्परा लिखी है)।

इस वंशावली से मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र के भाई जसवन्त की मृत्यु और संतति परम्पराके विषय में भी नवीन ज्ञातव्य मिलता है, जो कि आजतक बिलकुल अज्ञात था।

मंत्रीश्वर के पुत्रों की तो बात ही क्या? परन्तु भागचन्द्र जी की वीराङ्गना पत्नी के उद्गार भी रोमाञ्चित करनेवाले हैं। उनमें सच्चे जैनत्व के साथ क्षत्रियत्व का पूरा ओज था, जिसका यह ज्वलन्त

मरिस्यइ अशत घणा महि ऊपरि, शत साहिस रिण समधरीयउ।
भागचन्द भिडंतइ भारथ, मुंनउ नहीं जगि उधरियउ ॥ १ ॥
लाखा जम हरि कीयउ लोह बलि, रीसाणइ मारावइ राय।
सांगाहरइ किनउ दम समहर, जुग जासी पिण नाम न जाइ ॥२॥
कान्हड़(दे) वीरमदे कलि हूंती, शाकउ ज्यूं जालोर कीयउ।
चच्छाहरइ वीकाणइ विढतइ, दो भज दु जने मरण दीयउ।३।इति
परमाणंद ते अंधला, हीया थून (?) आखा जोह।
अर्द्ध कहइ न बुज्झइ, सब कुण दरयइ तोह ॥ १ ॥

× × × × ×

रीपाणइ सूरिजसिंघ महारिग, हूंतिल जिनलइ वाहिआ हाथ।
कीयउ न को वले इम करिस्यइ, भागचंद सारिखउ भाराथ ॥१॥
आवे ग्रहट निहट उथडे, घणा, घाघरट पासरां घेर।
जमहर समहर तइं कीयउ, सांगाहरां ग्रहे समसेर ॥ २ ॥
चल छाडी पहिरी नहि वेडी, परनाले थयउ रगत प्रवाह।
करतइ कलिह भागचन्द कीयउ, सींगाला महुता बड (?) साह।३।

उदाहरण है।

इस वंशावली में "बोहिस्थ" को प्रतिबोध देनेवाले श्रीअभयदेव सूरिजी लिखे हैं, और "वंश प्रबन्ध" में जिनेश्वरसूरिजीका उल्लेख है। घटना प्राचीन होने के कारण ऐसे पाठान्तर और वैषम्य हो जाते हैं, किन्तु इसमें "वंश प्रबन्ध" का कथन ही विश्वसनीय ज्ञात होता है।

अररहिचे वोथरा महारिण, तइ कीधउ करमैत तणा ।
साकउ वीकानयर तणइ सिर. घणुं सरिहस्यइ दीह घणा ॥ ४ ॥

[हमारे संग्रहस्थ एक विकीर्ण पत्र से]

इनके वंशकी प्रशंसामें किसी कविने कहा है:—

प्रथम राज पृथ्वीराज, धुरा सांभर सिरताधर ।
हुवो रिणथंभ हमीर, विभै राजेन्द्र नरेसर ।
जन्मतीय जालोर, कुमर वीरम कहाणो ।
चौथे गढ़ गागरण, बलि अचलेश वखाणो ।
करमचंद तणो चहुआण कुल, थिर सनाम पंचेथियो ।
भागचंद उही पृथ्वीराज मिड, जिण कलि ऊपर साको कियो ? ×

उपरोक्त वातों से ज्ञात होता है कि (१) यह घटना रात में न होकर शायद दिन में हुई थी, क्योंकि उस समय लक्ष्मीचंद्र और मनोहरदास दरबार में गये हुए थे, लिखा है। (२) लक्ष्मीचंद्र और मनोहरदास दरबार में ही वीरगति को प्राप्त हुए हों, क्योंकि वे दरबार में ही थे, और घर पर मारे जानेवालों की नामावली में उनका नाम नहीं है। (३) उनके मारे जाने का मुख्य कारण करमचन्दजी पर महाराजा रायसिंहजी की अवकृपा न होकर किसी कारण से भाग्यचंद्र, लक्ष्मीचंद्र पर महाराजा सूरसिंहजी

× बच्छावत वंशका आदिम चौहाण कुल है, अतः कविने उस कुलमें हुए नररत्नोंकी प्रशंसागभित यह पद्य रचा है। इस पद्यमें उल्लेखित पृथ्वीराज चौहाण और हमीर सुप्रसिद्ध ही है। जालोरके कान्हड वीरम दे का नाम कर्मचन्द वंश प्रबन्धमें आता है, उनका विशेष परिचय साप्ताहिक पत्र जैन-के रौप्य महोत्सव अङ्क के पृः ९४ में देखना चाहिये।

के कुपित होनेका हो। हमारे इस अनुमान के दो कारण हैं:—एक तो बच्छावत * भाइयोंका कई वर्षों तक बीकानेर में रहना प्रमाणित है, यदि पहले का वैर ही कारण होता, तो उनका कई वर्षों तक सुख-शांति से रह सकना कम संभव है। दूसरा वंशावली में "राजा सूरसिंह मुंहता उपर कोपियो" लिखा है। यह वाक्य भी महत्व का ज्ञात होता है।

(४) कर्मचंद्रजी का वंश, इस घटनास्थल से भगी हुई गर्भवती स्त्री † से न चल कर, पहिले से ही उदयपुर में रहे हुए लक्ष्मीचंद्र के पुत्र रामचंद्र और रुघनाथ से चला था। क्योंकि सं० १६८०-८१ में श्रीजिनसागरसूरिजी उदयपुर पधारे, तब उन्हें वन्दनार्थ रामचंद्र और रघुनाथ अपनी दादी अजायबदे के साथ आये थे, जिसका उल्लेख सं० १६८१ में रचित श्रीजिनसागरसूरि रास में इस प्रकार है:—

* भागचन्द्रजीके लिये लिखी हुई "पृथ्वीराज रासो"की गुटकाकार प्रति बिकानेर-स्टेट लाइब्रेरीमें विद्यमान है, जिसकी अंदर प्रशस्ति यह है—

"मंत्रीश्वर मण्डल (ण?) तिलक, बच्छा बंश (व) खाण।
करमचंद सुत करम धड़, भागचंद सुव ? जाण। १।
सुत कारण लिखियो सही, प्रथ्वीराज चरित्र।
पढ़ता सुख सम्पत्ति सकल, मम सुख होवे मित्र। २।

† गोपल्लीयजी लिखते हैं—यह महिला उदयपुर के भामाशाह की पुत्री थी। ओझाजी भी भाण को भामाशाह की पुत्रीका लड़का होनेका लिखते हैं। मेहताओं की तवारीख में "भाण" को भोजराजका पुत्र लिखा है, किन्तु अनुमान है कि मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रजी का विवाह भामाशाह की पुत्रीसे हुआ

"कुम्भल मेरइ जिन थुणि ए मेवाडइ गुण गान ।
उदयपुरा नउ राजियउ ए "राणउ करण" दइमान ॥९४
लखमीचन्द सुत परगडा ए, रामचन्द्र रघुनाथ ।
चित धरि वंदइ महसमइ ए, अजायबदे सुत साथ ॥९५॥

इस अवतरण से सं० १६८० में रामचंद्र रघुनाथ की अवस्था कमती-से-कमती भी हो, तो भी वे१०-१२ वर्ष के तो होने चाहिये। इससे गर्भवतीका भागना और उससे वंश चलने की बात बिल्कुल कल्पित और निःसार ज्ञात होती है।

(५) हमें जहांतक की वंशावली उपलब्ध है, उसमें 'भाण' का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के जीवनसे उनके अनेकों सद्गुणों और असाधारण बुद्धि वैभव का परिचय मिलता है। इनके वंशज वर्त्तमान समय में भी उदयपुर राज्य के उच्च पदाधिकारी और प्रतिष्ठासम्पन्न हैं, उनके विषय में विशेप जाननेके लिये 'ओसवाल जाति का इतिहास' देखना चाहिये।

अब सूरिजीके श्रावकरत्न सं० "सोमजी शिवा" का संक्षिप्त परिचय दिया जाता है।

हो, और उसीका नाम अजायबदे हो, और वह उपरोक्त दारुण घटनाके समय अपने पुत्रवधू व उभय पौत्रोंके साथ अपने पीहर में उदयपुर आई हुई हो। हमें उपलब्ध वंशावली में भोजराज का कोई नाम नहीं मिलता।

कर्मचन्द्रजीके प्रभावसे रायसिंहजीको पांचहजारी पद मिलनेका उल्लेख इस प्रकार है—

अकबर जलालादीना प्रसादतोनेक कोट बल कलितः
मंत्रि कृत मंत्र योगा त्पंच सहस्री तर्तिर्जज्ञे ॥३४॥

संघपति सोमजी शिवा

जगत्प्रसिद्ध प्राग्वाट ज्ञातीय मन्त्रीश्वर वस्तुपालके निर्मल वश × में सघपति जोगीदासकी भार्या जसमा दे के कुक्षि से इन दोनो भाइयोंका जन्म हुआ था। उ० क्षमाकल्याणजी अपनी

व्याख्या —श्री राजसिंह अकबर जलालदीनस्य सादे प्रसादतोऽतु महात् अनको बहुधोपे कोट्टा दुर्गाणि बलेन च सैन्येन कलित सहित अनक कोट्ट बहुकलित मन्त्रिणि कर्मचन्द्रस्यो मन्त्र आलोचस्तस्ययोगात् सयोगात् मन्त्र अ (? प्र)'भावादित्यर्थ पचाना सहस्राणा अश्ववार सश्रयिणां समाहार पच सहस्री तस्या पति स्वामी जज्ञो बभूव। पच हजारीति ख्याति प्राप्त इत्यर्थ ॥३४॥

× शीलविजयजी कृत तीर्थमाला में —

वस्तुपाल मन्त्रीश्वर वश शिवा सोमजी कुल अवतश।
शत्रुञ्जय उपरि चौमुख कियउ, मानव भव लाहो तिण लियउ॥

बम्बईसे प्रकाशित "श्री जिनचन्द्रसूरि जीवन चरित्र"में आपके धनवान होने की एक किम्वन्ती लिखी है —

ये दोना भाई चिभडे का व्यापार करते थे, इनका भाग्योदय जानकर सूरिजी ने प्रतिबोध दिया। लाभ जान कर सूरीश्वरने इनके नवीन वस्त्र पर सप्रभाव वासक्षेप डाला। बहुत से खरबूजे खरीदकर ये भाई फलों के ऊपर इस वस्त्रको आच्छादित कर व्यापार करने लगे। सी समय ग्रीष्म ऋतुमें शाही फौजको किसी नगरको लूट-खसोट कर आते हुए अहमदाबाद में इनके यहां ही चिभडे खरबूजे एक एक स्वर्ण मुहरके मूल्य में खरीदने पड़े क्योंकि खरबूजे अन्यत्र कहीं भी न मिले। इस व्यापार में सोमजी शिवा ने अगणित द्रव्य उपार्जन किया।

रचित 'खरतर पट्टावली'में लिखते हैं कि अहमदाबादमें ये दोनों भ्राता चिर्भटि(फल)का व्यापार करते थे। सूरिजीने इन्हें प्रतिबोध देकर जैन धर्ममें दृढ़ किये। इन्होंने तीर्थयात्रा, नवीन बिम्बनिर्माण, जीर्णोद्धार और स्वधर्मी वात्सल्य आदि शुभकार्यों में लाखों रुपये व्यय करके जैन शासन की महान् सेवा और प्रभावना की थी।

सं० १६४४ में जोगीशाह और सोमजी ने शत्रुंजय का विशाल संघ निकालकर सूरिजी के साथ शत्रुञ्जय गिरिराजकी यात्रा की थी, जिसका उल्लेख इसी ग्रंथ के ५६ वें पेज में कर चुके हैं।

सं० १६५३ अहमदाबाद मे आदिनाथ के नव्यनिर्मित जिनालय की सूरिजीके कर-कमलों से प्रतिष्ठा करवाई। इन्होंने राणकपुर, गिरनार, आबू, गौड़ी-पार्श्वनाथ और शत्रुंजयपर बड़े-बड़े संघ निकाल कर यात्राएं कीं, प्रत्येक स्थानमें लाहणकी, करोड़ों रुपये खर्च हुए, जिसका उल्लेख कविवर समयसुन्दरजी 'कल्पलता' में इस प्रकार करते हैं :—

यद्वारे पुनरत्र सोमजि शिवा, श्राद्धौ जगद्विश्रुतौ।
याभ्यां राणपुरश्च रैवतगिर, श्री अर्बुदस्य स्फुटम्।
गौड़ी श्री विमलाचलस्य च महान्, संघो नयः कारितो
गच्छे लम्भनिका कृता प्रति पुरः, रुक्मा द्विमेकं पुनः

एक पट्टावली में लिखा है :—

"सं० सोमजी शिवइ शत्रुञ्जय नी पहली यात्रा करी, ३६००० रुपइया खरच्या, वली धड़ी प्रतिष्ठायइ ३६००० रुपइया खरच्या, गिरनार आबू ना संघ कराव्या, अनेक देहरा कराव्या, बिम्ब भराव्या, खरतरगच्छ मां लाहण कीधी"

अहमदावादकी दस्सापोरवाड जातिमें आपने कई अच्छे रीति-रिवाज प्रचलित किये थे। अब भी विवाहपत्र के लेख मे "शिवा सोमजीकी रीति प्रमाणे"लेन देनकी मर्यादा लिखी जाती है। आपके निवासस्थान धनासुतार की पोल में, जिनालय के वार्षिक दिवस और अन्य प्रसंगो मे जब कभी जीमनवार होता है, तब निमंत्रण भी 'शिवा सोमजी' के नाम से दिया जाता है।

आपने अहमदाबाद मे तीन जिनालय बनवाये। (१) धनासुतार-नी पोल (शिवा सोमजी की पोल) में, आदिनाथजीका मन्दिर—जिसमें अपने उपकारी गुरु श्रीजिनचन्द्रसूरिजीकी मूर्ति स्थापित की। (२) झवेरी वाडाके चौमुखजी की पोल मे.—श्रीशान्तिनाथजी का चौमुख मन्दिर (जिसका जीर्णोद्धार सं० १९२० मे जवेरी श्रीमोहनलाल-मगनभाई के पिता मगनभाई-हकमचन्द ने कराया था)। (३) हाजा पटेलकी पोल के कोने मे श्रीशान्तिनाथजी का मन्दिर।

गिरिराज श्रीसिद्धाचलजी पर "खरतरवसही" मे चौमुखजी का मन्दिर निर्माण करवाया, जिसमे ५८ लाख रुपये खर्च हुए।×

इस मन्दिर की प्रतिष्ठा कराने के पूर्व ही आपका स्वर्गवास हो जानेसे सोमजीके पुत्र रूपजी ने सं० १६७५ मे श्रीजिनराजसूरिजी के करकमलोसे प्रतिष्ठा करवाई।

×मोराते अहमदी में लिखा है कि इस मदिरको बनाने में ५८०००००) रुपये खरच हुए, कहते है ८४०००) रुपयो की तो केवल रस्सी, डोरियाँ ही लगी थी। मदिरकी विशालता और सुन्दरता देखते, इसमें किसी प्रकारका सदेह ज्ञात नहीं होता।

शेठ सोमजी शिवाजीका स्वधर्मीवात्सल्य बहुत ही प्रशंसनीय और अनुकरणीय था। एक बार किसी अज्ञात, अपरिचित स्वधर्मी-बन्धु ने विपत्ति के समय आपके उपर साठहजार रुपये की हुंडी कर दी। जब वह हुंडी भुगतान के निमित्त आपके पास आई, तब इनके मुनीम, कर्मचारियों के सारा खाता ढूंढ लेने पर भी हुंडी करनेवाले का कहीं नाम तक न मिला। विचक्षण सोमजीको उस हुण्डीके गौर पूर्वक देखने मात्र से उस पर अश्रुबिन्दुका दाग देखकर रहस्य समझ में आ गया और अपने किसी स्वधर्मी बन्धु के विपत्तिका अनुभव कर अपने निजी खातेमें खरच लिखाके हुण्डी सिकार दी। कुछ दिनके पश्चात् वह अज्ञात स्वधर्मी भाई वहां आया और आग्रह पूर्वक हुंडीके रुपये जमा करनेकी प्रार्थना की। किन्तु सोमजीने, "हमारा आपके (नाम से) पास एक पैसा भी लेना नहीं है", यह कहते हुए रुपया लेना सर्वथा अस्वीकार कर दिया। आखिर संघकी सम्मतिसे श्रीशान्तिनाथ प्रभुका जिनालय निर्माण करानेमे वे समस्त रुपये व्यय कर दिये गए। इस वृतान्त से सोमजी के उदार हृदय, और अभूतपूर्व, आदर्श स्वधर्मी-

†हुण्डी सिकारनेका विस्तृत वर्णन "सवा सोमा" नामक ट्रैक्ट में है जिसके लेखक हैं, श्रीमान गोकलदास द्वारकादास रायचुरा (तंत्री शारदा)। उन्होंने इस ट्रैक्टमें सोमा पर हुण्डी करनेवाले व्यक्ति "सवा" को वामनस्थली निवासी सेठ लिखा है और शिवा-सोमाकी टूंक भी उन दोनों भिन्न २ व्यक्तियों के नामसे प्रसिद्ध होनेका उल्लेख किया है किंतु उन्होंने यह गम्भीर भूल की है। शिलालेखोंसे यह भली भांति सिद्ध है कि शिवा-सोमजी दोनों सगे भाई थे और उन्हीं दोनों भाइयोंने यह सुकृत किया था।

वात्सल्यका अच्छा परिचय मिलता है। ऐसे नर रत्नका जितना गुणानुवाद किया जाय, थोड़ा है।

सूरिजीके उपदेशसे आपने बहुतसे नवीन ग्रन्थ लिखवाकर, ज्ञान-भक्तिका महान लाभ लिया था, उन ग्रन्थोंमें १ ग्रन्थका उल्लेख 'जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास' मे इस प्रकार है:—"सं० १६५२ मा ख० जिनचन्द्रसूरि ना उपदेश थी अहमदाबाद ना प्राग्वाट संघपति सोमजीए ज्ञानभंडार माटे सिद्धान्त नी प्रत लखावी ते पैकी राज-प्रश्नोय टीका नी प्रत गु० नं० १६२७ मले छे।" (पृ० ५६१)

सं० १६६३ चैत्र सुदि ६को रचित उ० गुणविनयजी कृत ऋषिदत्ता चौ० से ज्ञात होता है, कि खंभातमे भी इन्होंने बहुतसा द्रव्य व्यय करके जिन-बिम्बोंकी प्रतिष्ठा कराई थी।

श्री खंभायत थंभण पास, धरण पउम परतिख जसु पास ॥६३॥
श्री खरतरगच्छ गगन नभोमणि अभयदेवसूरि प्रगटित सुरमणि।
धन खरची वहु बिम्ब भराविय, साह शिवा सोमजी कराविय।६४
अचरजकारी पूतली जसु ऊपरि, शरणाइ वड (र?)मेरि विविह परि।
पास भगति वस जिहां वजावइ, गुरु परसाद रह्या शुभ भावइ ॥६५

आपकी वंश परम्परा के जौहरी वालाभाई चकलदास, लगभग ४-५ वर्ष पूर्व (अहमदाबाद से) बीकानेर आए थे। उन्होने अपनी परम्परा का बहुत-सा इतिहास अपने पास होने का भी कहा था। किन्तु उसके कई मास पश्चात् ही आपका स्वर्गवास हो गया, अतः वह इतिहास अप्रकाशित अवस्था मे ही रहा। उन्होंने "खरतर-वसही" सम्बन्धी झगड़े के समय "खरतर वसही अने सेठ आणंदजी

कल्याणजी वच्चे झगड़ो" नामक विज्ञापन × प्रकाशित किया था, उसमें भी शिवा सोमजीके विषयमें ज्ञातव्य इतिहास भविष्यमें प्रकाशित करने के विचार प्रकट किये थे। किन्तु दुःख है कि दुर्दैव काल ने उन्हें अपने पूर्वजोंका इतिहास प्रकट करनेका मौका नहीं दिया।

इनके अतिरिक्त सूरिजी के भक्त श्रावकों में अहमदाबाद के मंत्री सारंगधर सत्यवादी, खंभात के भण्डारी वीरजी, रांका, वर्द्धमान, नागजी, वच्छा, पदमजी, देवसी, जैतसाह, भाणजी, हरखा, हीरजी, मांडण, जावड़, मनुआ, महजिया, अमियाशाह; साभलिनगर के सा० मूला० मामीदास, पूरु, पदू, वस्तू, गांगूनाथू, धरमू, लखू आगरे के शाह श्रीवच्छ और लक्ष्मीदास, सिद्धपुर के शाह वन्ना, रोहीठ के शाह थिरा मेरा, बिलाड़ा के सं० जूठा* कटारिया, रिणीके मन्त्री राजसिंह और सांकर सुत वीरदास, लाहोर के जौहरी पर्वतशाह, सिन्धु देसके धोरवाड़ वंशज शाह नानिगके पुत्र शाह राजपाल, जेसलमेर के भणसाली थाहरू*शाह, नागौर के मन्त्री मेहा, बीकानेर के मन्त्री दसू बोथरे की संतति, महेवा के काकरिया शाह कम्मा, मेड़ता के शाह आसकरण† चोपड़ा आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। श्राविकाओंमें भी बहुत-सी धर्म-परायणा और व्रत धारिणी थीं, जिनमेंसे नयणा, बींजू, गेली, कोडां, रेखां के व्रत ग्रहण करने का उल्लेख पिछले प्रकरणों मे लिखा जा चुका है।

×इस विज्ञापन के आधार से हमने भी कितनी ही बातें इस "सोमजी शिवा के परिचय में लिखी है।

* कृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभंडारकी पट्टावलीमें लिखा है:—

"श्री शत्रुंजे उपरि सं० जूठइ कटारियइ संघ करावी प्रतिष्ठा करावी"

* इनका परिचय ऐ० जैन० काव्य संग्रह में दिया जायगा।

† इनका विशेष परिचय ऐ० जैन काव्य संग्रहमें लिखा जायगा।

सोलहवां प्रकरण

चमत्कारिक-जीवन और अवशेष घटनाएं

पिछले प्रकरणों में सूरिजी के जीवन-चरित्र सम्बन्धी सभी विषयों पर काफी लिख चुके हैं। इनके अतिरिक्त और भी कई ऐतिहासिक और जनश्रुति में प्रचलित बातों का उल्लेख न करने से "जीवन-चरित्र" की असम्पूर्णता अनुभव कर इस प्रकरण में उन सब बातों को बहुत ही संक्षेप से लिखते हैं।

जब सूरि महाराज खम्भात में थे, तब मालकोट से हर्षनन्दन, रत्नलाभ, मुनि वर्द्धमान, मेवा, रेखा आदि ने संस्कृत में एक विस्तृत सांवत्सरिक पत्र × दिया था, उसमें सूरिजी के गुणानुवाद में आगे के

× इस पत्र की नकल हमारे पास है, विस्तृत होने के कारण यहां प्रकाशित नहीं की गई। सं० १६९८ या सं० १६६६ में यह पत्र सूरिजी को दिया गया था। उस समय सूरिजी के साथ उ० रत्ननिधान उ० जयप्रमोद, श्रीसुन्दर, रत्नसुन्दर, धर्मसिन्धुर, हर्षवल्लभ, साधुवल्लभ, पुण्यप्रधान,

प्रकरणों में लिखित जीवन की मुख्य-मुख्य घटनाओं का वर्णन करते हुए "दिल्लीपुर्य्यां पुनर्योगिनी साधकाः सूरिमन्त्रस्फुटाम्नाय संसाधका" लिखा है। इससे जाना जाता है कि आपने सं० १६२६ में जब कि रुस्तक में चातुर्मास किया था, वहां से दिल्ली निकटवर्ती होने से दिल्ली पधार कर ६४ योगिनीएंको अपने सूरिमंत्र के प्रभावसे साधित की होगी।

आपकी आज्ञा से बहुत-से विद्वानों ने अनेक ग्रंथों की रचना की थी, जिसका उल्लेख विद्वानों के परिचय में कर चुके हैं। ग्रंथ-रचना के अतिरिक्त आपके आदेश से कई जगह प्रतिष्ठाएं भी हुई थीं। जिनमें सं० १६५० आषाढ़ शुक्ला ६ को महो० पुण्यसागरजी प्रतिष्ठित श्रीजिनकुशलसूरिजी के पादुका का लेख "जैन लेख संग्रह भा० ३" लेखाङ्क २४६४ में छप चुका है। और सं० १६६६ वै० शु० १३ "समदा नगर" में पं० राजप्रमोद के शि० पं० नन्दिजय के प्रतिष्ठित महावीर चैत्यका लेख "यतीन्द्र विहार दिग्दर्शन" भा० १ में छपा है।

सं० १६६१ अक्षय तृतीया को जब सूरि-महाराज, जिनसिंहसूरि, वा० समयराज, उ० रत्ननिधान, पं० पुण्यप्रधान आदि शिष्यों के साथ नागोर पधारे। उस समय वहां के निवासी कातेला गोत्रीय सं० सहसा, सं० मुरतान संकर ने अपने पुत्र तेजसी, जोधा, डुंगरसी,

स्वर्णलाभ, जीवर्षि और भीम मुनि आदि थे। यह पत्र पांडित्यपूर्ण और प्रौढ़ संस्कृत भाषा में लिखा गया है। इस पत्रका आवश्यक अंश परिशिष्ट में देखें,—

कपूरचन्द, पूरणमल, आदि ने सपरिवार सांगैकादशांग आगम बहराये थे, जिनमेंसे "स्थानांग सूत्र वृत्ति" पत्र ३७१ * "श्रीजिन-कृपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भण्डार बीकानेर" में विद्यमानहै।

सं० १६५५ कार्तिक सुदि १३ को जब आप उपरोक्त शिष्य-मण्डल के साथ खंभात में थे, तब ह्रापाणक ग्राम वास्तव्य संघ ने "ज्योतिः करण्ड वृत्ति" नामक ग्रन्थ बहराया। सूरिजी ने उस ग्रन्थ को स्तम्भतीर्थ के ज्ञान-भण्डार मे स्थापित किया था। यह ग्रन्थ (पत्र १२०) भी अब उपरोक्त ज्ञान-भण्डार में हैं।

इसके अतिरिक्त और भी सैकड़ों § ग्रन्थ भक्त श्रावकों ने बहरा कर ज्ञान-भक्ति और गुरु भक्तिका लाभ लिया था। सूरिजी ने इन सबको खभात और बीकानेर के ज्ञान-भण्डारों मे सुरक्षित कर दिये।

---

* यह प्रति सूरिजी ने अपने शिष्य वा० समयकल्लोल गणिको दी, उन्होंने अपने शिष्य विद्यासागर के पठनार्थ संशोधित की।

§ खंभात भंडारके ग्रन्थ देखनेसे सम्भव है, कुछ नया ज्ञातव्य भी मिले। खंभातमें प्राग्वाट ज्ञाति वालोंकी लिखाई हुई सं० १६५६ व० शु० ९ महानिशीथ की सूत्र पत्र प्रति २१ (नं० २१६६) बाबू पूरणचन्दजी नाहर के संग्रहमें है।

सूरिजीको ल खवाई हुई प्रतियां यत्र-तत्र प्रचुर प्रमाणमें मिलती हैं। 'जेसलमेर भाण्डागारीय ग्रंथानां सूचि'में सं० १६३५ आषाढ़ शुक्ला ९ की लिखित प्रतिकी प्रशस्ति उक्त ग्रन्थके परिशिष्ट पृ० ९ में देखें।

बिकानेर स्टेट लायब्रेरी ग्रंथाङ्क ८८३२ की प्रशस्ति इस प्रकार हैः—

जिनमें बीकानेर के ज्ञान-भण्डारों में अब भी बहुत-से विस्तृत × प्रशस्तियोंवाले ग्रन्थ विद्यमान हैं। विस्तार-भय से हमने उन सबका उल्लेख नहीं किया।

आपके प्रतिष्ठित बहुत-से जिन-बिम्ब यत्र-तत्र उपलब्ध हैं, जिनके कई लेख हम आगे दे चुके हैं। अवशेष सं० १६१६ और १६६७ के लेखों की नकल नीचे दी जाती है :—

(१) "संवत् १६१६ वर्षे वैसाख वदि ६ दिने ओसवाल ज्ञातीय राखेचागोत्रे म० हीरा भार्या हांसू भा०हीरादे पुत्र देवदत्त भा० देवल-दे सुत उदयसिंघ रायसिंघ कुटुंब युतेन म० देवदत्तेन श्री वासुपूज्य चतुर्विंशति पट्ट कारापितं श्री खरतरगच्छे श्री जिनचन्द्रसूरिभिः प्रतिष्ठितं ॥ श्री ॥ (श्री गौड़ी पार्श्वनाथ मन्दिर—बीकानेर)

(२) "सं० १६१६ वर्षे श्री पार्श्वनाथ बिम्बं प्रतिष्ठितं श्रीजिन-चन्द्र सूरिभिः।"

(श्री महावीरजीका मन्दिर—आसानियों का चौक, बीकानेर)

शत्रुंजय तीर्थ पर प्रतिष्ठित :—

"सं० १६६७ वर्षे फाल्गुन सुदि पंचम्यां गुरौ सं० रत्ना पुत्र सं० जुगनेन का० श्रीचन्द्रप्रभ बिम्बं प्र० श्री बृहत्खरतर गच्छेशाऽकबर साहि प्रतिबोधक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः। आ० जिनसिंह

"श्री शाहि प्रतिबोध कारक श्रीमज्जिनचन्द्र सूरि युग प्रधानानां प्रतिरियं लिखिता संवत् १६९६ वर्षे धन्य त्रयोदश्यां।

(सूरिमंत्रादि साम्नाय कल्प पत्र ११)

× उनमेंसे एक प्रशस्तिकी नकल परिशिष्टमें दी गयी है।

सूरि युतैः वा० पुण्यप्रधान वा० राजसमुद्र स्यां । व्यलेखि प्रतिष्ठापया (म) मौलि बिम्बमेतत्" * ।

सं० १६६७ वर्षे फाल्गुन शुक्ल पंचमी गुरौ श्रीविक्रमनगर वास्तव्य श्री ओसवाल ज्ञातीय फसला गोत्रीय सा० हीरा । तत्पुत्र सा० मोकल । तत्पुत्र० अज्जा । तत्पुत्र दत्त् । तत्पुत्र सा० अमीपाल भार्या अमोलिक दे पुत्ररत्नेन सा० लीलाकेन । भार्या लखमा दे लाछल दे पुत्र सा० चन्द्रसेन । पूनसी सा० पदमसी प्रमुख पुत्र पौत्रादि परिवार सहितेन श्री पार्श्वबिम्ब अष्टदल कमल संपुट सहित कारितं, प्रतिष्ठितं श्रीशत्रुंजय महातीर्थे श्री बृहत्खरतर-गणाधीश श्री जिनमाणिक्यसूरि पट्टालंकारक, श्री पातिसाह प्रतिबोधक युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिः पुज्यमानं चिरंनदतु । आचन्द्रार्क ॥

(अष्टदल कमल पर श्री महावीरजी के मन्दिर में (वैदों का), बीकानेर।)

श्री शत्रुंजय महातीर्थ की आपने कई बार यात्रा की थी। वहां खरतरगच्छके संघने आपके उपदेश से कई नए मन्दिर निर्माण कराये थे ×। और भी सोरीपुर, हस्तिनापुर, गिरनार, आबू, आरासन, राणकपुर, वरकाणा, संखेश्वर आदि बहुत-से तीर्थों की यात्राएं की थी। जिसका उल्लेख रत्ननिधान कृत गीत और अपूर्ण

---

* यह लेख हमें प्रकरण लिखते समय पालीताना से प्रवर्त्तक मुनिवर्य श्री सुखसागरजी महाराज से प्राप्त हुआ, इस संवत् के और भी कई लेख आप श्री ने हमें भेजनेकी कृपा की है, परन्तु वे अपूर्ण होने से यहां न दिये गये हैं।

× देखो परिशिष्टान्तर्गत प्रशस्ति में।

वडी गहूंली मे है *। स्वर्गीय श्रीजिनदत्तसूरिजी और जिनकुशल-सूरिजी, शासन-सेवा में आपको पूर्ण सानिध्य करते थे।

सूरिजी के रचे हुए कई स्तवनादि भी हमें उपलब्ध हुए हैं।

सूरिजी उच्च चारित्रवान् और निष्पृही थे, उनके किसी भी प्रकार का अनुचित प्रतिवन्ध नहीं था। कहा जाता है कि बीकानेर में जब आप भगवतीसूत्र वांचते थे, एक दिन व्याख्यान के समय मे कर्मचन्द्रजी कार्यवश उपस्थित न हो सके। सूरिजी ने व्याख्यान देना प्रारम्भ कर दिया, कर्मचन्द्र की मातुश्री ने निवेदन किया "भगवन्! मेरा पुत्र आपका परम भक्त और आगम-श्रवणका अभिलाषी है, इसलिये आपको उसके आने के पश्चात् ही व्याख्यान प्रारम्भ करना उचित था!" सूरिजी ने अपनी उच्च चारित्र की प्रभा का इन शब्दों मे परिचय दिया "मैं इस प्रकार किसी भी व्यक्ति का प्रतिवन्ध नहीं रख सकता! मैं अपने विचारों मे किसी को ऊंच नीच दृष्टि से नहीं देखता! सभा मे उपस्थित सभी सज्जन गण मेरे लिये कर्मचन्द्र ही हैं। एक व्यक्ति के लिये व्याख्यान का समय आगे-पीछे करना साधुओं का कल्प नहीं है।" सूरिजी का यह स्पष्ट वक्तव्य सुनकर कर्मचन्द्र की माता ने कुछ रोष दृष्टि से चारों ओर देखा, तो उन्हें सर्वत्र कर्मचन्द्र ही कर्मचन्द्र बैठे दृष्टिगोचर हुए। बस तभी से उन्होंने समझ लिया कि हमारी ओर से जो भक्ति है, वह अपने आत्मकल्याण के निमित्त ही होनी

---

* ये दोनों गीत "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" में मुद्रित हैं।

चाहिये, सूरिजी तो निस्पृह हैं। उपस्थित जनता पर सूरिजी के इस सचोट उत्तर का काफी प्रभाव पड़ा †।

"गणधर सार्द्धशतक भाषान्तर" * मे लिखा है कि एक बार सूरिजी किसी नगर में पधारे। वहा एक धर्म-द्वेषी कापालिक योगी, लोगो को डराने के लिये काले सॉप का रूप धारण कर उपाश्रय में आ धमका। संघ ने इस उपद्रव निवारण के लिये सूरिजी से निवेदन किया, सूरि-महाराज ने शेषनाग का आकर्षण कर, उपद्रव दूर किया।

कापालिक ने सूरिजी से ईर्षा धारण कर और अपनी मंत्रशक्तिसे गर्वान्वित होकर उन्हे छलने के लिये अनेक प्रकार के प्रपञ्च रचे और सूरिजीको करामात प्रकट करने के लिये घोषणा की। सूरिजी ने मृदु वचनो से शान्तिपूर्वक समझाने का बहुत प्रयत्न किया, और यह भी कहा "अहो योगी! इन मिथ्या प्रपंचों मे क्या रखा है? यह सब छोड, परमात्मा का भजन करो! जिससे आत्मकल्याण हो।" किन्तु योगी सीधेही कब माननेवाला था, उसने अधिकाधिक उपद्रव और उत्पात करना प्रारम्भ किया। इतना ही नहीं कई चमत्कार दिखाकर लोगोको धार्मिक श्रद्धासे विचलित करनेका भी दुस्साहस किया। बहुत-से आडम्बर रचे, तब सूरिजीने शासन प्रभावना के हेतु सूरिमन्त्र के प्रभाव से उन सब उपद्रवों का विनाश कर उससे अधिक चमत्कारिक बातें दिखला कर श्रावकों को धर्म मे दृढ किये। कापालिक

---

† यह प्रवाद संक्षेप से (बम्बई से प्रकाशित) जिनचन्द्रसूरि चरित्रमें भी छपा है।

* यह ग्रन्थ इन्दौर के "श्रीजिन कृपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भंडार" से छप चुका है।

भी आपकी असाधारण प्रतिभा से प्रभावित होकर भक्त बन गया।

एक बार सूरिजी और योगी के मंत्रविद्या सम्बन्धी वार्तालाप होते हुए कोई अपूर्व कार्य कर दिखाने का परामर्श हुआ। इसके फलस्वरूप सूरिजी ने बड़नगर से जैन मन्दिर को आकाश मार्ग से उड़ा कर रतलाम से १० मील पर स्थित सेमलिया नगर में स्थापित किया। वह शान्तिनाथजी का मन्दिर अब भी मालव देश का एक तीर्थ माना जाता है, इस मन्दिर में सूरिजी की चरण पादुकाएं भी हैं। वहां प्रति वर्ष भादवा सुदि २ को मन्दिर मे वर्षा होती है, यह प्रत्यक्ष चमत्कार है। योगी के लाया हुआ महादेवजी का मन्दिर भी अरणोद के पास विद्यमान होनेका सुना जाता है।*

एक बार सूरिजी गोढवाल देश मे पधारे, वहां के श्रावकों को धार्मिक तत्त्वों से अनभिज्ञ और विवेकहीन देखकर धर्मका सद्बोध दिया, जिसकी एक कहावत प्रसिद्ध है:—जिनचन्द्रसूरि बावों भले ज आवियो, साठे वरसे हाथ में पाणी † लरावियो।

एक बार सूरिजी सेत्रावा पधारे, वहां के संघ ने आपका खूब स्वागत किया। उस नगर मे महर्द्धिक चोपड़ा गोत्रीय धन्ना शाह निवास करते थे, सन्तान न होने के कारण वे सदा उदासीन रहते

---

* ऐसी ही चमत्कारिक किम्वदन्ती नाडोल के मन्दिर के सम्बन्ध में प्रसिद्ध हैं। देखें:— बड़वा जैन मित्रमंडलका सम्मेतशिखर स्पेशल ट्रेन 'स्मरणांक' और कॉ० हेरल्ड के 'इतिहास साहित्य' अंक में यशोभद्रसूरिजी का चरित्र।

† उन अव्रतधारीयोंको व्रतधारक बनाये।

थे। सूरिजी को समर्थ जानकर उन्होंने अपना दुख प्रकट किया। सूरिजी ने उत्तर मे कहा कि धर्म ही इच्छित पदार्थदायक है, अत निःशंक होकर विशेष रूप से धर्माराधन करो! जिससे ऐहिक और पारलौकिक समस्त कार्य सिद्ध हों। सूरिजी के उपदेश से वे विशेष मनोयोगके साथ धर्मध्यान करने लगे। क्रमशः उसके सात पुत्र हुए। एक बार जब सूरिजी फिर सेत्रावा आये, तब उनके पुत्र चोलाजी और भोलाजीने उनसे दीक्षा ग्रहण की। कई वर्षों बाद उन्होंने सूरिजी की आज्ञा से सेत्रावा मे चातुर्मास किया, उस समय मे महामारी का रोग फैला, तब उन्होंने उपद्रव शान्त कर लोगों को चमत्कृत किया। समाधि-मरण से वहीं दोनों दिवंगत हुए, संघ ने उनके स्तूप बनाये। आज भी वे स्तूप विद्यमान है और चमत्कारिक हैं।

उपरोक्त चमत्कारी बातों को हमने बहुत ही संक्षेप करके लिखी हैं, विस्तार से जानने के लिये उपरोक्त ग्रन्थ देखना चाहिये।

वास्तव में महापुरुषों का जीवन ही चमत्कार-मय होता है। उनके पवित्र आचार और अमोघ वाणी जन समुदाय को मंत्रमुग्ध कर लेती है, और भक्तों के कार्य अपने आप ही सिद्ध हो जाते हैं। सूरिजी जहां विचरते थे, वहां दुष्काल में भी वर्षा हो कर सुकाल हो जाता था, महामारी रोग आदि उपशान्त हो जाते थे, ऐसी बहुत-सी बातें पट्टावलियों में पाई जाती है।

"महाजन वंश मुक्तावली" में लिखा है कि सूरिजीने १८ गोत्रों को प्रतिबोध देकर जैन बनाए और यह भी लिखा है कि जैसलमेर में किसनगढ के राठौर मोहणसिंह और पांचीसिंह को प्रतिबोध दे

कर व्रतधारी श्रावक बनाए, उनसे 'मुहणोत' और 'पींचा' गोत्र प्रसिद्ध हुआ।

पट्टावलियों मे लिखा है कि आपने प्रतिमोत्थापक लुम्पकमत का खूब जोरों से उच्छेद् कर के श्रावकों को शुद्ध श्रद्धावान् बनाए।

गणाधीश्वर श्री हरिसागरजी महाराज सं० १९९२ वै० व० १० के कार्डमे लिखते हैं कि—"अहमदाबादमे ओसवाल जातिमे एक 'कडीया' नामक गोत्र है। उस गोत्रवालोंको श्रीजिनचन्द्रसूरिजी महाराजने सुखी बनाए हैं। श्रीयुक्त चिमनलालजी * कडीया ठि० सेखनापाडा मा मु० अहमदाबाद गुजरातको पत्र देनेपर जरूर विशेष हकीकत मिलेगी, इन लोगों का बनाया हुआ मन्दिर अहमदाबाद मे है। धर्मशाला पालीतानेमे है, मोती कडिया की धर्मशाला के नाम से प्रसिद्ध है।"

सूरिजी का आदर्श और पुनीत जीवन हमे सन्मार्गगामी बनने मे सहायक हो यही अभिलाषा रखते हुए कविवर समयसुन्दरजी रचित सुगुरु महिमा छन्द द्वारा सूरिजीका विमल यशोगान गाते हुए चरित्र सम्पूर्ण किया जाता है।

नोट—चमत्कारी घटनाओं और गोत्र प्रतिबोध के विषय में प्रमाणाभाव से हम कुछ नहीं कह सकते। ओसवाल जाति के इतिहास में "मुहणोत" गोत्र स० १३५१ कार्तिक सुदी १३ को खेडनगर में मोहनजी के प्रतिबोध पाने से प्रसिद्ध होना लिखा है।

* गणाधीशजीके लिखे अनुसार हमने इन्हें Reply कार्ड दिया था, लेकिन उसका कोई उत्तर न मिला।

॥ सुगुरु महिमा छंद ॥

अवलियो अकबर तास अगज, सबल शाहि सलेम ।

शेख अबुल आजम खानखाना, मानसिंह सुं प्रेम ॥

रायसिंह राजा भीम राउल, सूर नय सुरतान ।

बड बडा महिपती वयण मानइ, दियइ आदर मान ॥१॥

गच्छपति गाइयैजु जिनचंदसूरि मुनि महिराण

अकबर थापियोजी, युगप्रधान गुण जाण ॥आ०॥

काश्मीर काबुल सिन्ध सोरठ, मारवाड (मेवाड !) ।

गुजरात पूरब गौड़ दक्षिण, समुद्रतट पय लाड ॥

पुर नगर देश प्रदेश सगलै, भमइ जेति भाण (भानु०) ।

आषाढ मास अमीय वर्षे, सुगुरु पुण्य प्रमाण ॥२॥गछ०॥

पंच नदी पाचे पीर साध्या, खोडिया क्षेत्रपाल ।

जल वहै जेथ अगाध प्रवहण, थाभीया तत्काल ॥

....कित किता कहु वखान ।

परसिद्ध अतिशय कला पूरण, रीझवण रायाण ॥३॥गछ०॥

गच्छराज गिरयो गुणै गाढो, गोयमा अवतार ।

बड वखतवंत बृहत्खरतर, गच्छको सिणगार ॥

चिरजीवो चतुर्विध संघ सानिध, करउ कोडि कल्याण ।

गणि 'समयसुन्दर' सुगुरु भेटया, सफल आज विहाण ॥४॥गछ०॥

इति परम प्रभावक युगप्रधान सुगुर महिमा छन्द सम्पूर्ण ।

—*×*—

परिशिष्ट

परिशिष्ट (क)

विहार पत्र नं० १

॥युगप्रधान चन्द्रसूरि कृत नांदि अनुक्रम ``` इछइ॥

१ चन्द्र सं० १५६५ चैत्रवदि १२ जन्म नाम 'सुरताण' सं० १६....
दीक्षा 'सुमतिधीर' नाम, सं० १६१२ भाद्रवा सुदि ६
गुरौ पद स्थापना 'श्रीजिनचन्द्रसूरि' नाम।

२ मंडण

३ विलास

४ मेरु १२ जेसलमेरु चउमास १सूरिपद राउल'मालदे' दिवराव्यो

५ विमल १३ बीकानेर चउमास २

६ कमल १४ बीकानयरि च० ३ परिग्रह त्याग विक्रमपुरे।

७ कुशल १५ महेवइ चउमास ४

८ विनय १६ जेसलमेरु ५

९ हेम १७ पाटणि ६ रू० चर्चा जयः अभयदेव सूरिः

१० राज १८ खंभाइत ७

११ आनद १९ पाटणि ८

१२ निधान २० बीसलनगरि ९

१३ रत्न २१ बीकानेर १०

१४ विजय २२ जेसलमेरु ११

१५ तिलक २३ बीकानेर १२

१६ सिंह २४ नडुलाइ १३

परिशिष्ट (क)

विहार पत्र नं० १

॥युगप्रधान चन्द्रसूरि कृत नांदि अनुक्रम''''इछइ॥

१ चन्द्र सं० १५६५चैत्रवदि १२ जन्म नाम 'सुरताण' सं० १६....
दीक्षा 'सुमतिधीर' नाम, सं० १६१२ भाद्रवा सुदि ६
गुरौ पद स्थापना 'श्रीजिनचन्द्रसूरि' नाम।

२ मंडण

३ विलास

४ मेरु १२ जेमलमेरु चउमास १सूरिपद राउल'मालदे' दिवराव्यो

५ विमल १३ वीकानेर चउमास २

६ कमल १४ वीकानयरि च० ३ परिग्रह त्याग विक्रमपुरे।

७ कुशल १५ महेवइ चउमास ४

८ विनय १६ जेसलमेरु ५

९ हेम १७ पाटणि ६ क० चर्चा जयः अभयदेव सूरिः

१० राज १८ खंभाइत ७

११ आनंद १९ पाटणि ८

१२ निधान २० वीसलनगरि ९

१३ रत्न २१ वीकानेर १०

१४ विजय २२ जेसलमेरु ११

१५ तिलक २३ वीकानेरु १२

१६ सिंह २४ नडुलाइ १३

१७ हय २५ वापडाऊ १४
१८ प्रमोद २६ बीकानेरि १५
१९ विशाल २७ महिम १६ शां०कुं०अ०म०थू०चंद०मू०सु०नेमिचैत्य
विचि सौरीपुर यात्रा, चन्द्रवाडि हथिणाउरि आव्या
२० सुंदर २८ आगर १७
२९ नारनउलि १८
२१ नन्दि ३० रुस्तकि १९
२२ सिंधुर ३१ बीकानेर २०
२३ मंदिर ३२ बीकानेर २१ बीकानेरथी जेसलमेरु आवतां
फलवधी चैत्य ताला उघाड्या
२४ कल्लोल ३३ जेसलमेरु २२
२५ धरम ३४ देराउरु २३
२६ वल्लभ ३५ जेसलमेरु २४
२७ नंदन ३६ बीकानेर २५
२८ प्रधान ३७ सेरुणा २६
२९ लाभ ३८ बीकानेर २७
३० वर्द्धन ३९ जेसलमेरु २८
३१ जय ४० आसणिकोटि २९
३२ प्रभ ४१ जालोर (३०) ऋषिमती चरचा जय ३०
३३ सागर ४२ पाटणि ३१
३४ समुद्र ४३ अहमदावि ३२
३५ कुंजर ४४ खंभाइत ३३ संघ आग्रहि अहमदावाद आवी
श्रीशत्रुंजय यात्रा

३६ दत्त ४५ सूरति ३४

३७ पति ४६ अहमदावाद ३५

३८कल्याण४७ पाटणि ३६ तिहां चउमास करि अहमदावाद आवी संघ वंदावी खंभाइति आव्या, तत्र श्रीजी × ना तेडा आव्या, असाड सुदि ८ प्रस्थान ६ चाल्या । फागुण सुदि १२ दिनि पहुंता

३६ शेखर ४८ जालोर ३७

४० कीर्ति ४६ लाहोरि ३८

४१ मेरु ५० हापाणइ ३६ रातइ चोर पइठा पुस्तक सर्व लेइ गया पर्रं अंर्व थया पुस्तक आव्या पाछा ।

४२ सेन ५१ लाहोरि ४०

४३ सिंह ५२ हापाणइ ४१ ऋषिमती* कृत कुमतिकुद्दाल ग्रन्थ (जो) टउ श्रीजी हुजूर कीधउ फुरमाण (काढ्या ?)

४४ कलश ५३ जेसलमेरु ४२

× श्रीजी बादशाहका संकेत वाचक है यहां सम्राट अकबर और इसके बाद सम्राट जहांगीरके लिये यही संकेत लिखा है ।

* ऋषिमती शब्द "तपा गच्छीय" का संकेत वाचक है ।

श्रीमान् मोहनलाल दलीचंद देशाइने 'युगप्रधान निर्वाण रास' के सार में ऋषिमती से लुंका मतका निर्देश किया है, लेकिन खरतर गच्छीय ग्रन्थों में अनेक जगह 'ऋषिमती' विशेषण तपागच्छवालों के लिये ही प्रयुक्त किया है ।

इति नांदि।५४ अहमदावादि ४३ माह सुदि १० वड़ी प्रतिष्ठा सोमजी
५५ खंभाइत ४४ श्री राजाजी ना तेडा....
५६ अहमदावादि ४५ तत्र वरहानपुरि श्रीजीयें चीतारया, पछइ ईडर प्रमुख गामे थइ घणा लाभ लेइ राजनगरि आव्या, अत्र श्री कर्मचन्द्र मन्त्री परोक्ष थया
५७ पाटणि ४६
५८ खंभाइत ४७
५९ अहमदावादि ४८
६० पाटणि ४९
६१ महेवइ ५० कां० कम्मइ प्रतिष्टा करावी
६२ वीकानेर ५१ तत्र प्रतिष्टा
६३ वीकानेर ५२ तत्र प्रतिष्टा
६४ लवेरइ ५३ राजा *'सूरि'वांदिवाआव्यो जोधपुर थकी ।
६५ मेडतइ ५४ अहमदावा (द) संघ रइ तेडइ राजनगरि आव्या
६६ खंभाइत ५५
६७ अम्हदावादि ५६
६८ पाटणि ५७ जिनशासन नै कामै आगरै श्रीजी कन्हइ पधारया, पछै षट्दर्शन मुगता कराव्या
६९ आगरइ ५८
७० वीलाडै ५९ स्वर्ग:

इसके पश्चात् जिनदत्तसूरिजी सम्बन्धी कई बातें लिखी हैं लेकिन अप्रासंगिक होनेसे उसकी नकल भी नहीं दी गई और न ब्लाक ही बनाया गया।

(पत्र १ हमारे संग्रह मे तत्कालीन लिखित)

---

* जोधपुर के तत्कालीन नरेश सूरसिंहजी (सूर्यसिंहजी)।

विहार पत्र नं० २

संवत् पनरह ९५ वैशाष (ख) वदि १२ जन्म। जन्मनाम 'सुरताण' दीधा।

संवत् १६०२	दीक्षा लीधी ॥ 'सुमतिधीर' नाम दीधउ ॥
संवत् सोलहसइ बारोतरह	भाद्रवा सुदि ९ गुरुवारइ पद दीधउ
संवत् बारोतरइ	श्री जेसलमेरु चउमास
संवत् तेरोतरइ	बीकानेर चउमास।
संवत् १४	बीकानेर चउमास, परिग्रह त्याग। मं० मांगइ महोच्छव कीधउ।
संवत् पनरह	महिवइ चउमास। तिहां छम्मासी तप
संवत् सोलोत्तरइ	जेसलमेरु चउमास, बीदा०
संवत् सतरोतरइ	पाटण च०,क०चर्चाजयः अभयदेव सूरिः
संवत् १८	खंभायत चउमास, सा० कम्म नइ आग्रह चउ०
संवत् उगणीसोत्तरइ	पाटणि चउमास
वीसोत्तरइ	बीकानेर।
इकवीसोत्तरइ	बीकानेर, मांगा आग्रह।
बावीसोतरइ	जेसलमेर, विचि नागोर हसनकुलीखान जयलाभ पटमारउ
तेवीसोतरइ	बीकानेर
चउवीसोत्तरइ	नड्डुलाइ, लस्कर नउ भय कातीसुदि १० निवर्त्यउ।
पंचवीसोत्तरइ	बापड़ाऊ

छावीसोत्तरइ बीकानेर
सतावीसोत्तरइ महिम, शां-कुं- अ- म-थूंभ । चन्द्र-मू-स्पु नेमि चैत्य
विंचि सोरीपुर यात्रा चन्दवाड़ हथणाउर पछइ आव्या
अठावीसोत्तरइ आगरइ
उगणतीसइ नारनउल
तीसइ रुल्लक चउमास
इगतीसइ बीकानेर
बत्तीसइ बीकानेर
तेतीसइ जेसलमेर
चउतीसइ देराउर
पइंतीसइ जेसलमेर
छत्तीसइ बीकानेर
सइतीसइ सेरूणइ
अड़तीसइ बीकानेर
गुणतालइ जेसलमेर
चालइ आसणीकोट
इकतालइ जालोर चउमास । चर्चाजय
बयालइ पाटण चउमास । चर्चाजय *

---

* विहार पत्रमें सूरिजी की विजय लिखी है, यही बात विस्तारसे कुम्भचन्द्र कृत "सुविहित परंपरा" नामक ग्रन्थकी प्रशस्तिमें इस प्रकार लिखी है:—

भयालइ	अहमदावाद
चम्मालइ	खंभाइत
पइतालइ	सूरत चउमास
छयालइ	अहम्मदावाद
सडतालइ	पाटण. श्रीजी ना तेडा आव्या आसा० सु० ८ चाल्या
अढतालइ	जालोर चउमास
गुणपचासइ	लाहोर चउमास
पचासइ	हापाणइ, चउमास
इकावनइ	लाहोर
बावनइ	हापांणइ, चोर आंधा थया पोथा लाधा
तिपनइ	जेसलमेरु
चउपनइ	अहम्मदावाद, तत्र श्रीजी रा वरहाण श्री जी चीनारा
पंचावनइ	खंभाइत

द्वंगे पत्तनके च राजनगरे, विद्वत्समक्षं पुनः,
कृत्वाष्टादश वासराणि सततं, यावच्च वादं भृशम्।
पूज्य श्री जिनचंद्र सूरि गुरुणा, मूकी कृता येन च।
किंचित् न्यत्र मदोद्धता, विजय युक सेनादि पाखंडिनः ॥१॥

भावार्थः—पाटण और राजनगरमें जिनचंद्रसूरिजीने विजयसेनसूरि आदिको १८ दिन तक विद्वानोंके समक्ष शास्त्रार्थ करके पराजित किये।

'विजय प्रशस्ति काव्य' से ज्ञात होता है कि यह शास्त्रार्थ धर्मसागर रचित 'प्रवचन परीक्षा' के सम्बन्धमें हुआ था। इसमें विजयसेनसूरि की विजय लिखी है, संभव है यह अपने २ गच्छके पक्षपातके कारण हो।

छपनइ अहम्मदाबाद
सतावनइ पाटण चउमास
अठावनइ खभात
गुणसठइ अहमदाबाद
साठइ पाटण चउमास
इगसठइ महेवइ, काकरियइ कम्मइ प्रतिष्टा करावी
बासठइ बीकानेर, तत्र प्रतिष्ठा
तेसठइ पिण बीकानेर, प्रतिष्ठा
चउसठइ लवेरइ चउमास, श्रीराजाजी वादण आयो जोधपुरथी
पइसठइ मेडतइ च०, अहमदाबाद रा तेडा आया।
छासटइ खभाइत
सतसठइ अहम्मदाबाद
अढसटइ पाटण चौमास
गुणहत्तरइ आगरइ चौमास
सत्तरइ बीलाडइ चउमास।*

(पत्र १ हमारे संग्रह मे १८ वी शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे कवि 'राजलाभ' के लि०)

---

* विहार पत्र आदि की प्रतियों मे ब के स्थान पर व लिखा हुआ है हमने यथाप्रसग व के स्थान ब कर दिया है।

परिशिष्ट (ख)

॥ क्रिया उद्धार नियमपत्र ॥

॥ र्द० ॥ श्री प्रवचन वचन रचनायै ॥ ॐ सिद्धिः ॥ श्रीमद्वि-क्रमदुर्गस्थैस्तत्र भवद्भिः श्रीमज्जिनचन्द्रसूरि सूरीश्वरैर्विविध दुर्विधि वारण वारण केशरि किशोर वरै सुमति सुविहित यति संतती रत्नकंपयाद्भिः संप्रेष्य प्रेक्षया मुख्य यामि जगणसूत्रणां संसूत्रिना सम्मत संमति संगन्याद प्रामोद विनोद कोविदर्पणैरूरी-कृता विगतावेन श्री मन्सुविधिसंघेन तथेतिकरणपूर्वकमुत्तमांगे निवेशिता सा चैषा ॥

(१) चउमासि माहे एकड क्षेत्रि एक सामग्री × रहइ । वली कोई बीजा तप प्रमुख नइ कार्यि रहइ, तउ मुख* विहारीरा कथन माहि रहइ ॥ १ ॥

(२) जीयइ क्षेत्रइ जे सामग्री रहिवा आवइ तीयइ क्षेत्रइ वस्त्र कंबलादिक विहरइ । साधुनइ प्रत्येकि वेस ३ विहरिवा, साध्वी नइ वेस २, कदाचिनि तिहां न मिलइ तउ जिहां मामग्री न रही हुइ तिहां विहरइ, आस्ता पूर्वक ॥ २ ॥

(३) पांचे तिथ्ये विगइ निषेध सर्वदा, बाल ग्लानादि विना । विशेष तप रा करणहार यथाशक्ति मोकला ॥ ३ ॥

(४) अष्टमी चतुर्दशी समर्थ साधु उ (प) वास करइ । कदाचि न करइ तउ आम्बिल नीवी करइ ॥ ४ ॥

× संघाड़ा * मुख्य-संघाड़े के अधिपती

(५) लघु शिष्य वृद्ध ग्लान रा कार्य टालि, बीजउ टंकि न विहरणा आहार। उत्तर वारणा, पारणा, मारग मोकला ॥५॥

(६) जिणि क्षेत्रि नवउ शिष्यादिक मिलइ, तेहनइ पदीक* मिलइ तेहनइ पदीक दीक्षा दियइ, परं गणीश× दीक्षा न दीयइ। नवीन शिष्य नइ १२५ कोश मांहि पदीक न हुवइ तउ गणि पिण वेष पहिरावइ।६।

(७) गणीश तप प्रमुख नांदि न करइ ॥ ७ ॥

(८) एकल ठाणइ विहार न करइ। एकलउ क्षेत्रि पिण न रहइ। स्वच्छन्द पैणइ एकउ रहइ ते मांडलि बाहर ॥ ८ ॥

(९) वणारिस उपाध्याय पदीके जे शिष्य दीख्यौ हुवइ ते पाखी चोमासइ पर्यूषणा दिने वांदतां पहिलउ दीख्यउ ते वडउ, पछइ दीखाणउ ते लघु। पछइ जि श्रीपूज्यां तीरइ बड़ी दीख्या लियइ, तिहां थकी वड़ लहुड़ाइ व्रत पर्य्याय गिणग्उ। नाम विधि वडी दीक्षायइ श्रीपूज्य दियइ। मांडलि रा तप पहिला वहइ, बिहुं उपधाना तांइ अगला नहीं। वहि सकइ ते वहउ ॥ ९ ॥

(१०) श्री पूज्य जिणि देसि हुवइ तियइ देस मांहे जे शिष्य हुवइ, साधु नइ ते पूज्य पूछावी चारित्र दियइ। कोश ४० मांहि पूछाविवा। उपरान्त हुवइ तउ दीक्षा देतां पूछावण रा विशेष को नहीं। श्री पूज्ये दूया देइ ज मेल्या छइ श्री बीकानयरा देस माहि पूज्य हुवइ तउ तिणो प्रमुख बीकानेर रा देस माहिला साधु श्रीपूज्य पूछावी दीखइ ॥ १० ॥

*वाचक, उपाध्याय आदि पदों से विभूषित। × गण—इश = समुदाय (संघाडा) का अधिपति, तथा 'गणि' पद भी दिया जाता है।

(११) जिणा जिणइ तीरइ दिक्षा लीधी हुवइ अनइ गुरुना कथन मांहि न चालइ अनइ संघाड़ा बाहिर नीसरइ, तेहनइ बीजा गच्छ-वासी साधु श्री पूज्यरा आदेश पाखइ कोई राखिवा न लहइ ॥११॥

(१२) तथा अहोरात्रि मांहें ५-७ शत सझाय करणा। भणिवउ गुणिवउ तेहू सझाय ॥ १२ ॥

(१३) मां बेटउ स्त्री पुरुष अनइ एकली स्त्री भाई बहिनि ए श्री पूज्य पूछावो इज चारित्र लियइ ॥ १३ ॥

(१४) प्रहर उपरान्ति उपाश्रय मांहि एकली श्राविका एकली साध्वी नावइ। कांइ पूछिवा कि वांदिवा आवइ तउ ४।५ मिली नइ आवइ ॥ १४ ॥

(१५) पाड़िहेरु वस्त्र कम्बलादिक सरतइ* वरतइ न लइणा। कारणि मोकला ॥ १५ ॥

(१६) उत्कृष्ट मध्यम जघन्य भांगइ ३।५।७ वड़ ओढिवा, नवा पुराना पातला जाडा विचारि नइ

तिन्नि किसिणे जहन्ने, पंचइ दृढ़ दुब्बलाइ गिन्हेवा।

सत्तय परिजुन्नाइं, एयं उक्कोसगं गहणं ॥ १ ॥

॥ इतिश्री बृहत्कल्प वचनात् ॥ १६ ॥

(१७) वाणिया, ब्राह्मण जाति रे जोग दीक्षा देणी। १५ वर्ष मांहिला ब्राह्मण दीखिवा। जीयइ ब्राह्मण रइ कुलि मद्य मांस न वापरउ, ते दीखणा परीक्षा करि ॥ १७ ॥

(१८) विषम मार्गि साधु संघात निश्राइ आगलि पाछलि जिम संजम निर्वहइ, तिम विहार करणा साधु साध्वी ए ॥ १८ ॥

* उसके बिना भी चल सकता हो तो

(१९) शेपइ कालि एकइ नगरी एकइ उपाश्रयि कदाचि रहिवा रा योग न हुवइ, तउ प्रभाति सझाय एकठा करणा। जूए २ उपाहरइ उपाश्रए नउ ॥ १९ ॥

(२०) पड़िक्कमणउ वलि माडलि सगले जतिये एकठउ करणउ, एकणि उपासरइ रहता जूयउ पड़िक्कमणउ जको करइ, वि मुत्त-विहारी, पद्दीक रा आदेश लियइ कारणि ॥ २० ॥

(२१) पोसाल-वाला माहतमा-* मोकला तेह सउ परिचा(परिचय) न करणा। माहतमा द्रव्य लिंगीया नइ भणावणा न करणा। कोई सुविहित माहतमाँ रूड़ा जाणि भणावइ तउ भणावउ। ऋषीश्वर आप माहतमा तीरइ भणइ तउ संघनी अनुमति भणइ भणावइ ॥ २१ ॥

(२२) साध्वी एकइ खेत्रि एक वरस उपरान्त न रहइ, जिणइ उपाश्रयि चउमासि कीधी हुवइ तिहां चउमासि नइ पारणइ त्रि मासक (ल्प) बीजइ थानकि रहइ, पछइ मूलगइ उपाश्रयि रहइ, जिका सामग्री रहइ ते साध्वी नी वस्त्र पात्रनी चिन्ता करइ, अनइ साध्वी पिणि तेहना कथन माहि चालइ ॥ २२ ॥

(२३) शेष काल हुंतो चउमासि माहि साधु साध्विए विशेष तप करणा ॥ २४ ॥

(२४) साध्वी पुस्तकादिक साधु नइ पूछा (छी?) वहिरइ ॥२४॥

(२५) यतियइ आपणइ काजि मोल पात्रादिक न करणा ॥२५॥

(२६) जको विशेष वइरागि आपणइ भावि चारित्र लियइ सु जिहां तेहना मन हुवइ ते तिहां चारित्र लियइ ॥ सामान्य वइरागि

---

* मत्थेरण :—जिन्हें कि क्रिया उद्धार के समय शिथलाचारी रहने से साधु संघसे निकाले गये थे।

जे जिणइ प्रतिबोध्या हुवइ ते तियइज खनि दीक्षा लियइ जउ ठामि ठामि सुख घातइ तउ न दीखणा।

(२७) जेहना मावित्र (माता-पिता) कांइ वान्छा करइ ते लघु छात्र नइ संघ नइ कहि दीक्षा देणी। संघइ यथा योगि उद्यम करणा। यतियइ जिम उड्डा हुवइ तिम न करणा ॥२७॥

(२८) साधु साध्वी नइ जे पुस्तक पाना जोइयइ ते भिन्न भिन्न श्रावक नइ न कहणा, यथा योग्य ते संघ नइ कहणा, श्री संघइ यथा योग्य चिन्ता करणी ॥ २८ ॥

(२६) गच्छ माहि ऋषीश्वरे मांहो माहि पठन पाठन रा उद्यम करणा। भणण हारे पिणि विनयपूर्वक भणिवा ॥२६॥

(३०) कोइ वइरागी नवउ आवइ तेहनी परीक्षा करइ, मास २ सीम। २ मासे भलउ जाणइ तउ दीखइ ॥ ३० ॥

तथा ऋषीश्वरां रा संघाड़ा जिकइ पोसाल माहि छइ, तियइ जके चेला कीधा छइ, जियारी जाति पाति जाणियइ जियइ, गाम माहि वसता रहता, तियां री सारि भरइ, सगउ सणीजउ अलगउ ढूकडउ (निकटवर्ती) दिखाइइ सु ऋषीश्वरां माहिं मन मानइ तउ, श्री पूज्य रइ आदेसि आणी जइ ॥ तथा पोशाल माहिला माहातमा जे क्रिया-उद्धरइ ति संघाडा बद्ध घालणी परं जे चेला केइइ राखइ, तिया नइ न घालणा थांमइ अथोवारि न राखणी। वलि जि पूरइ संघाडइ आवइ ति बि वरस रूड़ा रहइ संघ रा मन मनावि श्री पूज्या तीरइ आवि श्री पूज्यां रइ मनि मान्यइ, ऋषीश्वरा री मांडलि माहि आवइ ॥ तथा जियइ ऋषीश्वरे चेला १।२ पोसाल माहिला योग्य जाणी संग्रह्या। तियइ

वलना पठइ वद्ध संघाडा पोसाल माहिला आवइ, तउ इज लइणा श्री पूज्या रा मन मनाविनइ। परं वलि १।२ अधूराइ मन वइणा योग्य पणइज लइणा, श्री पूज्य रइ आदेशि॥ तथा साधु श्रावक घणा माहि वइसी नइ गीत राग न गावइ, सभा माडिनइ। जउ कोई भणता होइ ते प्रति ढाल सीखावइ॥

(पत्र १ हमारे संग्रहमें तत्कालीन लि०

श्री जिनचंद्रसूरिकृत समाचारी

एतला बोल छेदला हुंता सु श्री जिनचन्द्र सूरि बीजे उपाध्याये वाचनाचार्ये ए गीतार्थे एकठा मिली नइ श्री बीकानेर मध्ये थाप्या।

१ श्री स्थापनाचार्य पडिलेही जिणि थानि माडिए ते ठाम पहिला दृष्टि सु जोइ पूंजी माडियइ, जइ तिहा कोई जीव जन्तु हुइ, तउ रडा परठवीइ इरियावहि पडिकमीयइ, अन्यथा इरियावही पडिकमण विशेष कोइ नहीं।

२ पाणी पारीयइ तेहनी विगती। जइ अवड्ढ रा पचखाण कीधा हुइ तउ साझ री पडिलेहण पछइ पारीयइ। बीजा पोरसि प्रमुख पचखाण कीधा हुइ तो पहिला पारीयइ।

३ स्थापनाचार्य विधि पूंज्या हुइ अनइ सामायकादिक क्रिया कीजइ तउ वारू। कदाचि न पूंज्या हुइ अनइ को एक आप नीचइ भूमिका पूंजी काजइ उपरइं सामायकादिक क्रिया करइ पारइ, तउ पिणि असूझिवउ कोइ नहीं।

४ पउण पडिलेहणनी गुरे मुहपति पडिलेही पठइ, उपधान नंदि पोसह क्रिया न सूझइ।

५ पेहिली आडी हुइ अनइ गुरु स्थापनाचार्य आगलि क्रिया करइ तउ योग्य भूमिकाइ रह्या आसूझिवउ कोइ नहीं ॥

६ जन्म सूतक हुए घर ना मनुष्य १२ दिन देव पूजा न करइ, पडिक्रमण ना विशेष कोई नहीं । मृतक सुअइ× (सूतक) १३ दिन पूजा टालइ मूल काधिया हुइ ते, बीजा घर रा दिन ३ देवपूजा पडिक्रमणा टालइ । घर रा मूल काधीया हुइ ते १२ दिन देवपूजा न करइ। पडिकमणा २४ पहर न सूझइ । मृतक भीट्या* न हुइ, काधीया पिण भीट्या न हुइ, वेस पाल्ट्या हुइ तउ ८ पहर देवपूजा टालइ, जउ काधीया आभडइ तउ पहर १२ ॥

७ श्रावक क्रिया करतउ चउकत्थ करइ विधि वादइ । आगिला छेहडा ऊंचा करइ ए परमार्थ ॥

८ स्थापना गुरु प्रतिमा पादुका संवाऊ सुकडि केसर प्रमुख द्रव्ये करि पूजिए ।

६ पाखीरइ पडिकमणइ श्रावक पाखीसूत्र वंदितु गुणता "तं निंदे तं च गरहामि" एतला सीम गुणइ "अमुट्ठियोमि आराहणाए" ए चूलिका न गुणइ ।

१० जीरा वाल्या कपड-छान्या फासू होइ । जीरा लूण अग्नि आदिक संयोग विना फासू (प्रासुक) न गिणीयइ, व्यवहारइ जीरा काचा छाठ माहे घाल्या हुता रात्रि नइ आतरइ फासू गिणीयइ ।

११ सचित्त परिहारी द्राख लेइ । काला ?

१२ सूकडि केसर री पूजा माझ री कालवेला उपरांति न सूझइ ।

× स्पर्श × समीप

१३ भगवत नई धूप धुपणउ जे गाढउ अपूर्व हुई सखरा, ते सूझइ।

१४ कटाला-काष्ट री प्रतिमा, थापनाचार्य, नवकरवाली न सूझइ, अपर सूझइ।

१५ छास रावड (रावडी ?) काजी रा उत्कट द्रव्य। घोलवडा दही रो निवीतउ कहीयइ।

१६ यती नी नवकरवाली श्रावक नवकार गुणइ तउ असूझिवउइ को नहीं, परं अतिप्रवृत्ति न घालिवी।

१७ घनागरा माहि धाणा सूंठ हरडइ दाख खारक ए सहु एक द्रव्य। पर द्रव्य पचखाण ना धणी जुदा २ न खाइ, एकठा करी खाइ तउ एक द्रव्य।

१८ कूलरि घी रउ निवीतउ कहीजइ।

१६ काष्ट विदलइं फल काण ए विदल गणिवा, काष्ट विदल न गणिवउ।

२० उपाश्रय नीकलता खुलउ श्रावक आवस्सही न करइ। पोपहतउ सामयिकधर कहइ। देहरइ निकलता आवस्सई कहण प्रयोजन को नहीं।

२१ सध्यारइ पडिकमणइ तवन कह्या पछइ इच्छामि खमा० ए पूरी खमासमण देइ। (१)श्री आचार्य मिश्र कहइ (२)बीजइ खमासमणइ उपाध्याय मिश्र वादइ। (३)त्रीजी खमासमण सर्व साधु वादइ। (४) चौथी खमासमणि पूरी देइ 'देवसी पायच्छित विशुद्धि करेमि काउसग्ग' करइ।

२२ त्रिकाल री देवपूजा अविरती श्रावक जे पडिक्रमणउ नहीं करतउ छइ, ते करइ। पहिलउ श्री जिन प्रतिमा पूजाइ खप करइ। अनइ जे विरती पडिक्रमणा ना करणहार करइ छइ ते पहिलो पडिक्रमणउ करी पडिलेहण पहिला सामायक पारी छइ देवपूजा करइ।

२३ पोसह मांहे देहरइ पूछणउ (चलवला) ले जाइ, कदाचि देहरा अलगा हुइ कारणइं बइसइ पूंजीनइ। तिण कारणि नीरइं हुइ तउ वारू। देहरा ढूकडा हुइ तउ न ले जाइ, तउ असूझिवउ पण को नहि।

२४ चलवलां कांइ सबल अजयणा विचि हांट•अथवा चैत्य गृह जाणइ तउ पूंजिवा भणी ले जाइ। चलवला विना अजयणां न टलइ तउ ले जाइ।

२५ श्रावक देव गुरु प्रतिमा पादुका जेतलउ ढोवणउ ढोवइ ते न खाइ।

----२६ रोटी रोटला फेणा बाटी प्रमुख ना जुदा २ द्रव्य गिणीजइ, एक पिंड आटा नां जे रोटी वेलणादिक करइ ते एक द्रव्य।

२७ अणपडिहेलउ ठे पाडउ पुछणां माहिं न बांधइ। बांधइ तै अपडिलेही दुपड़लेही दोप लागइ ॥ २७ ॥

॥ इति सत्तावीस चरचा बोल समाप्त ॥

परिशिष्ट (ग)

"शाही फरमान"

सरस्वती मासिक पत्रिका (सं० १६१२ जून पृ० २६३)से उद्धृत .—

"फर्मान जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर बादशाह गाजी —

हुक्काम किराम् व जागीरदारान व करोरियान व सायर मुत्सद्दियान मुहिम्मात सूबै मुलतान बिदानंद ।

"कि चू हमगी तवज्जोह खातिर खैरदेश दर आसूदगी जमहूर अनाम वल काफ़फ़ए जाँदार मसरूफ़ व मातू फ़ुस्त कि तबक़ात आलम दरमहाद अमन बूदा बफ़रागे बाल बइबादत हजरत एज़िद मुतआल इश्तगाल नुमायंद । व क़ब्ले अर्जी मुरताज खैर-अन्देश जैचदसूर खरतर गच्छ कि वफैजे मुलाजिमत हज़रते मा-शरफ इख़ति सास याफ़ता हक्कीकत व खुदा तलबी ओ व जहूर पैय(व?)स्तानूद । ओरा मश्गूल मराहिम शाहंशाही फरमूदैम् । मुशा-रन् ईले ई इलतिमास नमू(मू?)द कि पेश अर्जी हीरविजयसूरि सागर शरफ़ मुलाज़िमत दर्याफ्ता बूद । दर हर साल दोवाजदह रोज दस्तदुरा नमूदा बूद की दरा अय्याम दर मुमालिके महरुसा तस-लीरा जाँदारे न शवद । व अहदे पैरामून मुर्ग व माही व अमसाले आँ न गरदद । व अजरुय मेहरबानो व जाँ परवरी मुल्तमसे ऊ-दरजे क़बूल याफ्त । अकनू(नू?)उम्मेदवारम् कि यक हफ्ते दीगर ई

अष्टाह्निकामादि शाही फरमान नं० १

दूनागोय् मिसले आँ हुक्मे आली शरफ सुदूर यायद्। बिनाबर उमूम ग (रा?)फ़्त हुक्म फ़रमुदैम् कि अज तारीख़ नौमि ता पूरनमासी अज् शुक्र पछ असाढ दर हर साल तसलीए जाँदारे न शवद्। व अहदे दर मकाम आजार, जाँदार ··· ···मोरे नागर्दद। व अस्ल व खुद आँनस्त कि चूं हजरते वे चूं अज बराए आदमी चंदीं इन्आमत-हाय गुनागूं मुहय्या करदा अस्त। दर् हेच वक्त दर आजार जान-वर व शवद्। व शिकमे खुदरा गोर हैवा नात न साजद। लेकिन वजेहत वाजे ममालह दानायान पेश तजवीज नमूदा अंद। दरीं-विला आचार्य जिनसिंह सूरि उर्फ़ मानसिंह व अरज अशरफ अक्-दस रसानीद् की फरमाने कि कब्ल अर्जी बशरह सदर अज सुदूर याफ्ता बूद गुम शुदा। बिना बरॉ मुताबिक मज़मून हुमा फरमान मुजदद फ़रमान मरहमत फरमुदैम्। मे बायद् कि हस्वुल मस्तूल(र?) अमल नमदा व तक़दीम रसानंद। व अज़ फरमुदह तखल्लुफ व इनहिराफ नवरजंद। दरीं बाब निहायत एतहमाम व फ्दगन् अजीम लाज़िम दानिस्ता नग़इयुर व तबद्दुल् वक़ायद आँ राह न दिहद। तहरीरन् फीरोज् रोज् सी व यकुम माह खुरदाद् इलाही सन् ४६।

(१) "व रिसालए मुक़र्रबुल हजरत रसुल्तानी दौलतरा दर चौकी (उमदे उमरा)

(२) "जुनद तुल आयान राय मनोहर दर नौबन वाक़या नवीसी ख़ाजा लालचंद"।

जोधपुर निवासी मुन्शी देवीप्रसादजीने इसका अनुवाद हिन्दीमें इस तरह किया है:—

फ़रमान अकबर बादशाह ग़ाजीका

"सूबे मुलतानके बड़े २ हाकिम, जागीरदार, करोडी और सब मुतसद्दी(कर्मचारी)जान लें कि हमारी यही मानसिक इच्छा है कि सारे मनुष्यों और जीव जन्तुओंको सुख मिले, जिससे सब लोग अमन चैन में रहकर परमात्मा की आराधना में लगे रहें। इससे पहिले शुभ-चिन्तक तपस्वी जयचन्द (जिनचंद्र) सूरि खरतर (गच्छ) हमारी सेवामें रहता था। जब उसकी भगवद्भक्ति प्रकट हुई तब हमने उसको अपनी बड़ी बादशाही की महरबानियोंमें मिला लिया। उसने प्रार्थना की कि इससे पहिले हीरविजयसूरि ने सेवामें उपस्थित होनेका गौरव प्राप्त किया था और हरसाल बारह दिन मांगे थे, जिन में बादशाही मुल्कोंमें कोई जीव मारा न जावे और कोई आदमी किसी पक्षी, मछली और उन जैसे जीवों को कष्ट न दे। उसकी प्रार्थना स्वीकार हो गई थी। अब मैं भी आशा करता हूं कि एक सप्ताहका और वैसा ही हुक्म इस शुभचिन्तक के वास्ते हो जाय। इसलिये हमने अपनी आम दया से हुक्म फ़रमा दिया कि आषाढ़ शुक्ल पक्ष की नवमी से पूर्णमासी तक सालमें कोई जीव मारा न जाय और न कोई आदमी किसी जानवरको सतावे। असल बात तो यह है कि जब परमेश्वरने आदमीके वास्ते भांति-भांतिके पदार्थ उपजाये हैं तब वह कभी किसी जानवरको दुःख न दे और अपने पेटको

पशुओंका मरघट न बनावे। परन्तु कुछ हेतुओंसे अगले बुद्धिमानोंने वैसी तजवीज की है। इन दिनों आचार्य 'जिनसिंह' उर्फ मान-सिंहने अर्ज कराई कि पहिले जो उपर लिखे अनुसार हुक्म हुवा था वह खोगया है इसलिये हमने उस फरमानके अनुसार नया फरमान इनायत किया है। चाहिये कि जैसा लिख दिया गया है वैसा ही इस आज्ञा का पालन किया जाय। इस विषयमें बहुत बड़ी कोशिश और ताकीद समझकर इसके नियमोंमें उलट फेर न होने दें। ता० ३१ खुरदाद इलाही। सन् ४६ ॥

हजरत बादशाहके पास रहनेवाले दौलतखॉंको हुक्म पहुंचाने से उमदा अमीर और सहकारी राय मनोहरकी चौकी और ख्वाजा लालचंदके वाकिया (समाचार) लिखनेकी वारीमें लिखा गया।"*

* यह फरमान लखनऊ में खरतर गच्छ के भंडार में है। इसकी नकल 'कृपारस कोश' पृ० ३२ में भी छप चुकी है। मूल फरमान फारसी में है, और उपर शाही मुहर लगी हुई है।

॥ शाही फरमान नं० २ ॥

नकल पातसाइ परवाने री इण ठिकाने नत्र मोहर री छाप

॥ श्री ॥

सेत्रुंजा पर देहरा अरु किल्ला है सो तमाम जैन मारगके यात्रा का जगा है अरु भाण क्षेत्र(भानुचंद्र?)सेवड मना करता है अरु किलामें देहरा मत करो । पहिला वखतमें भरत चक्रवर्तीने पा(हा)ड पर किला अरुदेहरा बनाया, दुसरी वखत सगर चक्रवर्ती सोमदेव के बेटे ने पाड पर देहरा वणाया, तीसरे वखत राजा जुधिष्ठर पांडव ने पाड पर देहरा वणाया, चौथा वखत विक्रमादित्य के एकसोआठ सन मे जावड वनीये ने देहरा बणाया, पाचवा वखत १२१३ सन्में मेहता वाहडदे जयसिंह-देव के चाकर नै पाड पर देहरा वणाया, छठा वखत अलाउद्दीनके वखतमें १३०० (१३७१ ?) सन् मे समर वनीये नै एक मूरत नवी बनराइ और जुने देहरे में स्गो, सातवें* वखत बहादर (शाह) गुजराती के अमल मे १५८७ सन मे फरमान डोसो नै जो चं प्रान।

*इस फरमानकी नकलमें जिन सात उद्धारोंका उल्लेख है, उनका वर्णन कवि-लावण्यसमय कृत शत्रुञ्जयउद्धार स्तवनमें इस प्रकार है:—

> उद्धार पहिलउ भरत केह, बीजउ सगुरु सहावए ।
> श्रीजउ ति पाण्डव राय युद्धिष्टर, पुहवी प्रगट करावए ।
> चुउथउ ति जावड़ अनइ वाहड़, कराव्युं जग जाणीयइ ।
> उद्धार छट्टो साहं समरा, सणउ चडिय वखाणियए ॥

(श्री० विद्याविजयजी सम्पादित 'प्राचीन तीर्थ माला संग्रह')

पुनमीये गछ का था, उसने जुने देहरे का मरमत करवाया और जुनी जुरा जरा मुरतां तुटेली थी सो भंडार कीची और नवी मुरत जुनै देहरामें थापना कीवी। आठवी वखत १५६१ सन में मजादेहखान गुजराती ने देहरे कुं तोड़ा, कितनीक मूरतां तोड़ी पीछे करमान डोसीने जेपुर सुं आयकर देहरा कुं मूरतां को मरम्मत किया। १५६२ सन् में राजकाज युक्त हुमायुं बादशा गुजरात में आये,१५६३ सन् में बादर गुजराती कुं फिरंगी ने मारा, सुलतान महमद पातस्या हुआ अरु इस महमद के अमल में ॥ (आधा) वरसतक सोरठ (देश) के मुलक में दंगा रह्या, उस पीछे एकहजार पांचसौच्यार (में) सेत्रुंजा मजादाहखान कुं जागीरी में मिला। उस पीछे अञ्चलगच्छ के जमवन्त पमारी बहुत आता जाता, मजाहीदखान का जागीरी में उस अपने साहिब कुं बीनति किया, फागुण सुदि ३ सुकरवार के दिन अमारत शुरू करी एक बड़ा देवल बनाया ३५ छोटे बनाए, अरु सार-

---

इस तीर्थ मालामें उपरोक्त ६ उद्धारके वर्णनके पश्चात् सातवां उद्धार करमा शाह डोसी ने सं० १५८७ में कराया जिसका वर्णन है। जावड़-शाह का चौथा उद्धार होना कवि 'देपाल' कृत 'जावड़ भावड़ रास'से भी सिद्ध होता है। यथाः—

जावड़ प्राग-वंश सिणगार, सोरठिउ सऊजिद्द सुविचार।
जेहनउ सेत्रुंजि चउथु उद्धार, तसु गुण पुहवी न लाभइ पार ॥१०८॥

(उक्त रासकी नकल हमारे संग्रह में है)

जयसोमजी कृत कर्मचन्द्र मंत्रि वंश प्रबन्धमें भीः—

उद्धारान् सप्त चैत्यानां कारणाद्दिद्युः पुरा।

नर गच्छके वनिया ने २२ देहरा बनाया अरु किल्ला मे उंबारथ (त?) भी कराया। कर(ड ?) वामती के गच्छ के बनिये ने किल्ले के दरम्यान अम्बारत (इमारत ?) करके २ देहरे बनाए, पायचन्द गच्छके वनिये ने किल्ले मे अम्बारत करके देहरा ३ वनाया अचलगच्छ के वनियेने बोहट अस (अरु?) बनरुबालने ३ वरस तलक किल्लामे अम्बारत किया, वडे देहरे ३(तीन) वनाए और छोटे ६ वनाए इल्लाहीके आठमे सनमे राजकाज युक्त पातशाहके १३ सन् मे पदमो (?) डोसी अरु दुमान मोहते ओसवाल खरतरान गच्छने थे, उनही ने अम्बारत करके ५ वरस तक टूटे हुवे देहराकी मरम्मत करवाई, रामजी तपाने किल्लामे देहरा बनाया, इलाहीके १६ सन् मे गुजरातके मुलकमें काल पड्या,इस वास्ते४(चार)वरस तलक सेत्तुजा उजड रहा। उस पीछे इलाहीके २२ सन् मे ·· ····· · ·· ····· ·· आबादान हुआ अरु अल्लाहीके २५ सन् मे तपागच्छके जसू वनियेने देहरा वनाया। फते इलाहीके ३० सन् मे खरतरान के सीस मेहता सारंग लाहोरमे पातस्याहने कदवो से हुवा था। उसने रायण के झाडके···· नीचे ४ वडे देवल किल्ले मे करवाये। अल्लाही के ३६ सनमे सहरयूर महीनेमें पातसा ने गिरनार सत्रुंजा और पालीताणे के देहरे सम्पूर्ण कृपासे मह्ता कर्मचन्द कुं कृपा दान किया और इस वान(त)मे फरमान मुहर वाला कर दिया। अर करमान मेहता ने भलमणसाइ करके जैन मारग के तमाम गच्छ के लोगा कुं मन देहरे दे डाले। इस वास्ते के मुझे तो पातसाने कृपाकर दए हमे सेत्रुंजा के सब देहरे तवार (तमाम?) जैन मारग के टोला के हैं। मुझे एकला कुं राखणे लायक नहीं, अरु

तेहुत्तर वरस हुवे के छोटे तपागच्छ ने हीरविजय सूर तपा के गच्छ कुं अपनेसे जुदा किया अरु हीरविजयसूर के चेले भाणचन्द कुं पूछणा चाहिये के आदिनाथके देहरा अरु किल्ला ७३ वर्ष पहले तुमारा था के ७३ वरस पीछे तुमारा हुवा, अगर भाणचंद केहवे ७३ वरस पहला किसा हमारा था तो छोटे तपागच्छका लिखा हुआ त (?)को किससे हीरविजेसूर का गच्छ जुदा हुवा लिखा हुआ अपने हाथमें है के सत्तरुंजा अरु आदिनाथ का देहरा किल्ला तमाम जैन मारग का है, अगहर कोइ दुष्म हरकत करे सो झूठा, अगर कोई तपा मतके कहते हैं, सेत्रुंजा हमारा है सो विचार कर तजवीज करेगा, सेत्रुंजा तमाम जैन मारग का है, कृपादान परवाना 'कर्मचन्द' का है।×

× मूल फरमान का यह अनुवाद, बिकानेर के (बड़े उपाश्रयमें) बृहद्ज्ञानभंडारस्थ १९वीं शताब्दी लिखित १ पत्र की तद्वत् नकल करके यहां प्रकाशित किया गया है, अनुवादकर्ता की असावधानी के कारण भाषान्तर में कई भूलें रह गयी ज्ञात होती हैं।

तीर्थाधिराज शत्रुञ्जयके सम्बन्धी इसमें बहुत महत्वका ऐतिहासिक ज्ञातव्य मिलता है। सम्राट्का गिरनार, शत्रुञ्जय और पालीताणेके देवालयों को सुरक्षा के लिये मन्त्रीश्वर कर्मचन्दजी के आधीन करने का फरमान देने, शत्रुंजय तीर्थ के दुर्ग में नवीन देवालय निर्माण करने के लिये भानुचन्द्र जी के निषेध करने का इसमें उल्लेख है। तीर्थपर नवीन मन्दिर निर्माण के विषय में खरतर गच्छ और तपा गच्छ वालों के झगड़ा होने का भानुचन्द्र चरित्र, परिशिष्टान्तर्गत (नं० ४) प्रशस्ति आदिसे भी जाना जाता है। झगड़ेके उपशान्तिके

॥ नं० ३ परवाना ॥

श्री परमेसरजी

श्रीकृष्ण तलवारका चिन्ह सही

॥==॥ स्वस्ति श्री महाराजाधिराज महाराजा श्री सूरिजसिंहजी कुं० । श्री गजसिंघजी वचनात युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिजी नुं मया करे दुवो दीयो जु श्री जोधनेर सोझत सिवांणै मेडतै जैतारण आसोप रै देस, मांहरी धरती छै ततरी माहे वाजां वजावौ झालर दमांमा वाजा मात्र वजावतां कोई मने करै सु गुन्हेगार होसी मागश्र (मार्गशीर्ष ?) वदि ६ संवत १६६४ दुवै श्रीमुख । प्र० । भाटी गोइन्ददासजी । पा । जोधनेर--

"औ मूलपरवांनो उ० । श्री सरुपचन्दजी गणि पास है श्री जोधपुरमें, तिकैरी आ नकल छै—

(पत्र १ हमारे संग्रह में)

लिये यह फरमान जाहिर किया ज्ञात होता है । इस विषयमें विशेष उहापोह मूल फरमान प्राप्त होने पर की जायगी ।

प्राचीन पत्रोंकी नकल करके तद्रूप ही प्रकाशित करने में हमने पूर्ण सावधानी रखी है । जो प्रति अशुद्ध मिली, वह भी पाठक मूल वस्तुका उसी रूपमें दर्शन कर सकें, अतः उसकी प्रायः उसी रूपमें नकल प्रकाशित की गयी है ।

परिशिष्ट (घ)

सांवत्सरिक पत्र ।

॥ सकल विमल शाश्वत स्वस्तिम ज्योति रुद्योतितं सर्वं मूर्यादि मंत्रेषु तंत्रेषु सर्वत्र भूर्यादि पत्रेषु यंत्रेषु विद्या पवित्रेषु मिथ्यात्व वल्ली लवित्रेषु दत्तात्म भक्तातपत्रेषु संसिद्धि सत्रेषु मित्रेषु लिप्या विचित्रेषु वाद्यं पुनर्यं च बालाः पतद्वक्र लाला लसत्कण्ठ पीठेषु मुक्तादि माला अनालिप्ट संसार मायादि जंबाल जालाः सुभालाः सुबुद्धया विशालाः समात्मीय नाल प्रणाला करालाम्बिकालाः सदा सन्मुदा मातृकाया पठंतीह पूर्वं तथा त्र (?) रक्षणे धातुरूपं स्वरूपं नतानेक भूपं सदाम्नाय पानीय कूपं सदाप्यव्ययं न व्ययं सन्मनोहारि सर्वत्र विस्तारि मिथ्यात्व संहारि सम्यक्त्व संस्कारि दुर्बुद्धि निवारि सद्बुद्धि संचारि निर्वाण निद्धारि तीर्थेश धामेव शीर्षे प्रचडेन दंडेन संप्रोल्लसत्कीर्ति पिंडेन दीप्तैः करंडेन नित्यं अखंडेन युक्तं तदूर्ध्वं महेन्द्रध्वजेनापि कुंभेन सर्वर्द्धि लंभेन संशोभितं वर्णमेकं पुनः पद्मनाभो विरंचिर्व्रपाकश्च देवत्रयं यत्र नित्यं मिलित्वा स्थितं वज्रधारं कृपाणं तथा लोह गोलं यक्षो दानवो मानवो व्यंतरः किन्नरो राक्षसो यक्ष वेताल वैमानिक प्रेत गन्धर्व विद्याधर क्षेत्रपालादि दिक् भू पाल भूतप्रजो भास्करो भासुर श्चंचुर श्चंद्रमा मंगुलो मंगलः सोमपुत्रो (त्र:?) पवित्र स्तथा सन्नगीः पतिर्भार्गवो नीलवासास्तथा सैंहिकेय स्त्रिशलीयो (?) ग्रहो दुर्महो या च नक्षत्रमाला विशाला तथा

शाकिनी डाकिनी नाकिनी किन्नरी सुन्दरी मन्त्रिणी तन्त्रिणी यन्त्रिणी दुष्टनारी तथा कसरी चित्रक कुञ्जरो वसर सैरभेय स्तुरगो विरग कुरगो महागो भुजगस्तथान्योपि जीवो महा दुष्टबुद्धि सदास्माक मेकाग्रचित्ताद् भृश भक्ति भाजा सुराजा विरूप स्वरूप विधास्यत्य-हो त वय मारयिष्याम एतद् द्वयस्य प्रहारै रितीवात्र हेतोर्दधान[ऽर्हं] तथा सर्व वर्गेषु मुख्य सुरक्ष सुऋक्ष सुलक्ष सुयक्ष सुदक्ष सुपक्ष विरि च्यात्म मार्तण्ड सौत्यादि वर्याभिधाधायक नायक ग्रायक दायक सविभाग्येति सम्यक्त्व वर्ग सुवर्ग लवर्णावराक श्रियोर्व्वीयक साश्रत । सोपि सत्वाधिको दाक्षिण्य देवदूष्या वृतात्मीय शीर्षोपरि न्यस्तशस्त प्रशस्त स्फुरत्काम कुम्भान्वित ॥ क्लीं ॥ त तथा विश्वरत सुता सवदेवैनता हस यान स्थिता पुस्तकेनाकिता देववाणी रता कूर्म पादोन्नता कलिजघान्विता सिंहमध्याङ्गनावर्य वक्ष स्थला मजु सन्मे-खला हस्तनोलात्पला ध्वस्त कुप्यत् खला सद्गुणै निर्मला भक्त हृन्निश्चला च्छिन्न दुष्ट च्छला नैव सा नि फला सर्वत सद्वला केशत श्यामला विश्वत सत्कला कलित कोमला सद्वच कोकिला पेशला मासला वत्सला सरणन्नूपुरा प्रौढ पुण्याकुरा चक्रमाच्चचुरा क्वापि नैवातुरा सर्वदा मदुरा दीप्ति सन्मुर्मरा सद्यश पुर्पुरा भग्न भी मुर्मुरा सपदा कारिणी पङ्कजागारिणी विश्व सचारिणी बुद्धिविस्तारिणी भक्त निस्तारिणी दुर्मतेर्दारिणी धर्म धी धारिणी सवका धारिणो ससृते पारिणी मायिना मारिणी वरिणा वारिणी दैत्य सहारिणी ऐ नमो हारिणी शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदाता तथा ॥ ६६६॥

॥ प्रथम ऋषभ देवता नामाभिरामाद्भुत श्री समेतोजितोनोजितः संयतः संभवः संभवः संवराधीश जन्मा सुजन्मा जिनो मेघराजां गजो नंग जो देवपद्मप्रभुः सप्रभः साधुपार्श्वः सुपार्श्वश्चंद्र प्रभो दीप्ति चंद्रप्रभो मातृरामाभिजातोऽभिजातो वचः शीतलः शीतलो विष्णुपुत्रः सुनेत्रस्तथावासु पूज्यः सुपूज्यो विपूर्वोमलो निर्मलोऽनंत तीर्थेश्वरो भासुरोधर्मनाथः सनाथः श्रिया शांतिङ्करः शंकरः कुंथुनाथः प्रमाथस्ततोऽरः करः संपदां मल्लिरापल्लना मल्लिरत्यंत मत्सुव्रतः सुव्रतः श्रीनमिर्निश्रमिर्नेमि देवाधि देवः सुशेवस्तथा पार्श्वतीर्थाधिपः सत्कृपः सद्गुणैर्वर्द्धमानो जिनो वर्द्धमानस्तथा गुव्वर ग्रामवासी प्रकाशेंद्र भूतिर्गणेशोऽग्निभूति स्तथा वायुभूतिः पुनर्व्यक्तनामा सुधर्मा गुणैर्मण्डितो मण्डितो मौर्यपुत्रः सुसूत्रस्तथाऽकंपितः कंपितो नाचल भ्रातृकस्तान्त्रिकस्त्यक्त भार्यःसदार्यश्च मेतार्य साधुः सदाचार साधुःप्रभासो निवासो गुणानां च्युतः पंचमस्वर्गतो धारिणी कुक्षिपाथोज संलब्ध जन्माऽष्ट कन्या परित्याग कर्त्ता हिरण्यादि कोटी प्रहर्त्ता लमत्केवल-श्री सुभर्त्ता गणाधीश जंबूयतींद्रः प्रपूर्वो भवो भीम संसार कांतार पारंगमी संयमी सूरिमुख्यः सुदक्षश्च शय्यंभवः श्री यशोभद्र सूरींद्र नामार्यसंभूत सूरिश्च मुनिर्गुणाना करापै स्तथा भद्रबाहुः पुनः स्थूलभद्रो मुनींद्रश्च कोशा सुवेश्या मनोबोधकारी महा ब्रह्मचारी लसल्लब्धिधारी नराणां वराणां भवाम्भोधितारी तथार्य्यो महागिर्य्य शिष्यः सुशिष्यः सुहस्ती प्रशस्ती तथा शांति सूरि र्गुणश्रेणि भूरिः पुनः श्री हरेरग्गो भद्रसूरि गभीरार्थ प्रज्ञापनासूत्र संदर्भ विज्ञान विद्या वरेण्यः सुपुण्यश्च नोलार्य्य भट्टारकस्तारकः संसृतेः कारकः संपदा-

मेप साडिल्ल सूरिर्मुनी रेवनीमित्रनामार्य्य धर्मार्य्य गुप्तार्य्य नामान एवं समुद्रादि सूर्य्यार्य मंग्वार्य सौधर्म सूरीन्द्र मुख्याः सुदक्षाः पुनर्भद्रगुप्त. सुगुप्तो यतो निर्गता. वार्द्धि संख्येय शाखाः सुनागेन्द्रचन्द्र, स्फुरन्निर्वृत्ति स्फार विद्याधरोदार नामाभिरामा द्विपंचाप्तपूर्वः सुपूर्वोनुनन्नादिम स्वामि सूरीश्वरो धीश्वरो रक्षितातार्य्यसूरिः पुनः पुप्यमित्रः पवित्रस्तथार्य्यादि नन्दिः प्रभुर्नाग हस्तः प्रशस्तस्ततो रेवती सूरि राचार्य्यधुर्य्य सुगाभोर्य्य धैर्य्यादि वर्य्यः परब्रह्मवान् ब्रह्मनामादिम द्वीप सद्दिल्लसूरि हिमाद्वन्त सूरिर्गणिर्वाचकाचार्य्य नागार्जुनः प्रार्जुनः सद्गुणैः सूरि गोविन्द संभूति सद्भावकौ सूरिलौहित्य नामा पुरि श्रीवलभ्यायकः सर्वसिद्धान्त वृन्दानि तालादि पत्रे विचित्रे वरैर्लेखकैर्लेखयामास देवार्द्धि भट्टारकः । श्री उमास्वामि सूरिर्भृशं भाष्यकर्त्ता जिनाद्भद्र सूरि स्ततो देवसूरिः पुनर्नेमिचन्द्र स्तथो द्योतनो वर्द्धमानो जिनाधीश्वरो जैनचन्द्रोऽभयाद्देवसूरि र्जिनाद्वल्लभो दत्त चन्द्रौ पतिः श्री जिनेशः प्रबोधश्च चन्द्रःशिवाख्यो जिनात्पद्म लब्धी च चन्द्रोदयौ राजभद्रौ च चन्द्रः समुद्रो जिनाद्धंस माणिक्य सूरी च पूर्वोक्त मंत्रास्तथा तीर्थराजान् श्री गुरुन् संपनीपत्य लेलिख्यतं पार्वणं लेख एषोऽद्भुतः ॥ २ ॥

क्वचिदिह मणिरत्न माणिक्य मालं क्वचिन्मुक्त मुक्ताफलाली प्रवालं क्वचित्स्वर्ग रूप्यादि पुंजे विशालं क्वचित्स्वर्ण पट्टोल्लचट्टोप्ठि भालं क्वचिद्दट्ट पीठे लुठन्नालिकेर । क्वचित्कांचनी राजिका शृंगबेर । क्वचित्कस्तूरी न्यस्त नानार्थ मूलं क्वचित्प्रस्फुट च्छादिका पट्ट कूलं क्वचिच्छालय धान्यादिर्जे गरिष्टं । क्वचित्प्राज्यमाज्यादि कूपैर्वरिष्टं

क्वचिद्विप्रशाला पठच्छात्रवृंदं । क्वचित्पीयमानाप्तवाणीमरन्दं ।
क्वचिद्दीयमानार्थि वांछार्थदानं । क्वचित्कामिनी गीत संगीत गानं ।
क्वचिन्मत्त मातंग घंटानिनादं । क्वचिद्वाजि हेषारवैर्लग्नवादं
क्वचिद्रम्य हर्म्यैं जित स्वर्विमानं । क्वचिच्चारु चैत्यावली भ्राजमानं ।
क्वचित्साधु-साध्वी कृताध्यायघोषं । क्वचित्कामुकाविःकृत प्रेमपोषं ।
क्वचिल्लक्ष्म विस्फार शृंगारवेषं । क्वचिद्दिव्य नव्यांगनारूपरेखं (षं) ।
क्वचित्तीर सांयात्रिकोत्तीर्णपण्यं । क्वचिद्वारिमध्य भ्रमन्नौ वरेण्यं ।
क्वचित्स्वर्ण पीठोपविष्ट क्षमेशं । क्वचित्साधुभिर्दीयमानोपदेशं ।
क्वचित्सूरि मंत्रस्मृतौ लीन बुद्धं । क्वचिद्राज संसद्भवन् मल्लयुद्धं ।
क्वचित्स्तंभनाधीश चैत्य प्रधानं । क्वचित्सद्गुरु स्तूप रूप प्रतानं ।
ततः किं बहूक्त्या समृद्ध्या सुवृद्ध्या । सुनाशीरपुर्याः सदृक्षं सुपक्षं ।

पुरं स्तंभतीर्थं सुतीर्थं च तस्मिंस्तथोकेशवंशाम्बुजोद्बोधने भास्करा रेहडीये कुले गाढराढाधराः, श्रीमदुद्योह रत्नानि, सल्लक्षण ज्ञानविज्ञान चातुर्य्यविद्या घणाः, शीलभास्वच्छ्रियादेविमातुः प्रलब्धावताराः, कलाकेलिरूपरेखातिसारा, लसत्पंचधात्रीभृशंपाल्यमाना, द्विसप्त प्रभा सज्ज्वला सत्कला मण्डिताः, पण्डिताः, सर्वदक्षाः पुनर्लब्धलक्षा, विनीताः सुगीताः सुमित्राः पवित्राः सुलावण्यवाणीसुधारंजितानेकलोकाः सशोकाः सुदाक्षिण्यनैपुण्या जाग्रत्प्रतापा विपापा गुरोर्जैनमाणिक्यसूरेः सत्काशान्मुश्रुतासारकान्तारकाराविचाराः समुत्पन्नवैराग्यरंगत्तरंगाः सरंगा गृहीतव्रताः सुव्रता गुप्ति गुप्ताः समित्याभियुक्ताः प्रमुक्ताः सुमुक्ताः श्रुतोक्तास्तपस्तेजसा दीप्यमानाः समानाः सुतानाः सतानाः सुदानाः सुयानास्ततो जेसलाम्मेरु दुर्गं

सुवर्ये सुसर्गे गुरुप्रदत्तपट्टाधिकारास्ततो विक्रमेसक्रिया: श्रीश्लद्वर्या. महामंत्रशक्तयाप्रभोर्मंदिरे तालकोद्घाटका: शात्रवोचाटका ढिल्लीपुर्यां पुनर्योगिनो साधका: सूरि मंत्रस्फुटाम्नायसंसाधका; गुर्जरेऽ जर्जरे या तपोटैस्तपोटै: कृतागालिनिन्द्।मयीपुस्तिका तद्विवादेपु सर्वत्र संप्राप्तजाग्रज्जयश्रीप्रवादा: पुनर्यद्गुणाकर्णनाकृष्टसंहृष्ट हृत्साहिना मानसन्मानपूर्वं समाकारिता लाभपुर्यां यकै: साहिछप्पा प्रयोगेण अंगे कलिंगे सुवंगे प्रयागे सुयागे सुहट्टे पुनश्चित्रकूटे त्रिकूटे किराटे वराटे च लाटे च नाटे पुनर्मेदपाटे तथा नाइले डाहले जंगले सिंधुसोवीरकाश्मीर जालंधरे गूर्जरे मालवे दक्षिणे काबिले पूर्वपंचावदेशेष्वमारिर्भूशंपालयांचक्रिरे प्रापि योगप्रधानं पदं स्तम्भतीर्थोदधौ दापितं सर्वमीनाभयं यै: पंचकूलड्वयासंगमे साधिता: सूरिमंत्रेण पचापिपीरा महाभाग्य वैराग्यवंत: सदाजैनचन्द्रा:मुनीन्द्रा, सुभट्टारका: ॥ ६६६ ॥

प्रवर विदुर रत्न निष्यहृया: श्री उपाध्याय विद्वद्गजेंद्रा जयादि प्रमोदा: श्रिया सुन्दरा: सुन्दरा रत्नत: सुन्दरा धर्मत: सिन्धुरा हर्ष तो वल्लभा: साधुतो वल्लभा: प्राज्ञ पुण्य प्रधाना: पुन: स्वर्ण लाभास्तथा नेतृ जीवर्पि भीमाभियानास्तथेत्यादि,सत्साधु साध्वी द्विरेफ व्रजा:(जैः) संवितांहि द्वयाम्भोजराजी मनोहारिणस्तां स्तथा मालकोट्टात्तटान्मे दिनीतश्च शिष्याणु सिद्धांत चारुर्गणिर्हर्पतो नंदनो रत्नलाभो मुनेर्वर्द्धमानो मेघरेपा भिधानौ तथा राजसो सीमसी ईश्वरो गंगदासो गणादि: पतिर्ज्येष्ट नामा मुनि:—सुन्दरो मेघजीत्यादि यत्याश्रित: कार्चिरेयाऽक्षि मित्यद्भुतावर्त्तवत्या प्रणत्या च विज्ञप्तिमेवं चंचरीकत्ति वर्वर्त्ति नि: श्रेयस श्रेणिरत्रात सत्रुञ्जयराज क्रमाम्भोज मन्दार

सार प्रसादात् तथा पत्तनाच्छ्रीगुरूणामिहादेशरत्न गृहीत्वा विहृत्यानु सत्सार्थयोगेन सार्द्धं वरात्काणके पार्श्वनाथ च जूत्कृत्य वैशाख मासे द्वितीये नवम्यह्नि साडम्बर सन्मुहूर्त्तेऽहमत्राजगामाशु सघोपि सर्वो भरन्नामत प्रापितो धर्म्मलाभ जहर्ष प्रकर्ष । तत प्रातरुत्थाय सदाग्रत श्री विपाकश्रुते वाच्यमाने पुनर्हर्षनदे मुनेर्मेघनाम्न क्षमा-क्षाणरुद्रादि कृष्णाहि पञ्चाभिधाने तपस्यद्भुते वाह्यमाने प्रति क्रान्ति सामायिकाऽर्हत्पदार्चादि सद्धर्मकार्ये विशेषेण सद्भव्य वर्गे भृश प्रेर्यमाण विनेयस्य सत्सप्तमाङ्गे पुन पाठ्यमाने सति श्रीमहापर्व-राजाधिराज समागान्नदोत्पन्न रगद्विवेकातिरेकेण सन्मन्त्रिसग्राम मल्लेन भास्वत्कनीय सम न सद्धर्मशाला समागत्य सघस्य सम्यक् समक्ष क्षमा श्रान्ति पूर्व स्फुट कल्प पुस्त प्रशस्त समादाय साय निजाया मुदा मन्दिराया स्फुरच्चदिराया समानीय कृत्वा निशा जागरा सुन्दरा दवगुर्वादि गीतादि गानै सुदानै प्रगे सर्व सघ समाकार्य वर्याति निस्कार कश्मीर जन्म छटाच्छोट पूगीफल प्रौट सन्नालिकेरादि दानै सत्कृत्य शृङ्गारितभकुभस्थलारूढ रग कुमार स्फुरत्पचशाखाभुजे स्थापयित्वा महापचशब्दादि वाजित्र निर्घोष घोष निरे चत्वरे राजमार्गे चतुष्के भृश भ्रामयित्वा मदीये शयाम्भोज युग्मे प्रदत्ता तत सघराचा मया वाचित ब्रह्मगुप्ति प्रमाणा-भिरामाभिर्नर वाचनाभि प्रभावाभिरम्याभिरानदत पुस्तकमाह्निणौ वाश्वि वेद श्रुतीनामिहाल्नवहिस्नाच्च सम्यग् दृशा पौषधा ग्राहिणा पुसा कसत्कुडलाकारपक्वान्नसन्मोदकै पारणा भीमससार-कान्तार भीतारणाऽदायि दान धन दत्तमाशीलि शील तपस्तप्तम-

ष्टान्हिकापक्षमुख्यं पुनर्भावना भाविते त्यादि सद्धर्मरीत्या समाराधितं श्रीमहापर्व सर्वं कृतार्थं कृतं मानवं जन्म एतत्पुनस्तात पादैरपि स्वीयपर्वस्वरूपं निरूप्यं । महामंत्रिराठ् भागचंद्रः सदारंगजी भाणजी राघवो वेणिदासोऽपि वाघा च वीरम्मदे सामलो राजसी ईश्वरो मंत्रि हम्मीर पंगार [खंगार] सत्कादि भोजू अमीपाल तेजा समू उग्र मुख्यः पुरांतश्च मेहाजलः सिद्धराजश्च रेपासुरत्राण सद्वीरपाला नृपालस्तथा राजमल्लोपि पीथादिकः सर्व संघः सदा वंदते पूज्य पादान् महा दण्डकः ॥ ६६६ श्री. श्री. श्री.*

श्रीजिनसिंह सूरिजीका दिया हुआ आदेश पत्र ।

॥स्वतिश्री ॥ श्रीवेन्नातटात् ॥ श्रीजिनसिंह सूरयः सपरिकराः । सर्वगुण सुन्दरान् वाचनाचार्य यशः कुशल गणिवरान् । सपरिकरान् । सादरमनुनम्यादिशंति । श्रेयोऽत्राप्र प्रसत्तेः ॥

तथा हिवणोकइ तुंहा । नइ लाहोर ना आदेश छइ, भली परइ रहेज्यो । श्रावक श्राविका ना जिम घणा भाव वधइ तिम करेज्यो तुहे पिण डाहा छउ, सर्व वात ना जाण छउ । जिम गच्छनी घणी सोभा वधइ तिम करेज्यो । श्रावक श्राविका समस्त नइ नाम लेई धर्मलाभ कहेज्यो ॥ वा० राजसमुद्र गणिः सादरं प्रणमति ॥ मगसिर सुदि ११ दिने

पत्र के मुख पृष्ट पर

। भट्टारक श्रीजिनसिंह सूरिभिः २ वा० यशः कुशल गणीनां ।

(मूलपत्र हमारे संग्रह मे)

---

* पृः २४७ में इस सांवत्सरिक विज्ञप्ति पत्र का आवश्यक अवतरण परिशिष्ट में देने का लिखा है लेकिन पत्र की उपयोगिता पर विचार कर सम्पूर्ण प्रकाशित करना आवश्यक समझ, किया गया है ।

प्रशस्तिः ।

॥रङ्गद्वैराग्य वासनातिशयसमाहत कठोरतरसुन्दरसाधुक्रिया समाचार, कुनकुवादिवृन्द तिरस्कार, प्रधान जन वदन श्रुत विश्रुत निरुपमसद्गुरु गुणगण समुल्लसित चित्तद्वीपोद्देश समाहूतागत श्री गुरुराज समुपदिष्ट विशिष्टाभयदानादि धर्मवासनावासितान्तःकरणेन तद्गुरूपदेशादेव यावज्जीव पाण्मासिक जीवामारि प्रवर्त्तकेन, विशेष सकलगोमहिषजाति पालकेन, समस्त जैनसम्मत श्रीशत्रुञ्जयादि महातीर्थकर मोचकेन सकलस्वदेशपरदेशमुक्त शुल्कजीजीयादिकर-संतापेन, निर्मलप्रबलबल निस्तुलभुजबल साधित सकलभूमण्डलेन, ढिल्लीपतिसुरत्राणेन, श्रीमदकबरसाहिपुङ्गवेन प्रदत्त श्रीयुगप्रधानबिरुदा-धार सततं प्रहृष्टसाहिविनोर्णापाढीयाष्टाह्निका सदमारि, स्तम्भतीर्थीय समुद्रजलचरजीव संघातघात निवारणजातयशः सम्भार, वितथतया साहिसमक्षंदूरीकृत कुमतिकृतोत्सूत्रासभ्यशंसनमय 'प्रवचन परीक्षादि' शास्त्र व्याख्यान विचार, विशिष्ट स्वेष्ट मन्त्रादि प्रभाव प्रसाधित पञ्चनदपति सोमराजादि यक्षपरिवार, श्रीशासनाधीश्वर वर्द्धमान-स्वामि पट्टप्रभाकरपंचमगण (धर) श्रीसुधर्मस्वामिप्रमुखयुगप्रधानाचार्या-विच्छिन्न परंपरायातकोटिकगणमंडन वज्रशाखाशृङ्गार श्रीचन्द्रकुला भरण श्रीजैसिचन्द्रसूरि श्रीउद्योतन पट्ट प्रदीप सर्वानिद्रावितालयुगा-तिशय प्रबोधित मन्त्रीश्वर विमलकारितार्बुदाचलशिरः शेखरी भूत

विमलवसति नामक श्री आदिनाथ चैत्य प्रतिष्ठापक श्री वर्द्धमान सूरिपट्टावतंस श्रीमदणहिल (पुर) पत्तनाधिप दुर्लभराजमुखो-पलब्ध श्रीखरतर बिरुद श्रीजिनेश्वरसूरि श्रीजिनचन्द्रसूरि नवाङ्गी विवरणाविर्भावक, श्रीस्तम्भनक पार्श्वनाथ प्रकाशक, श्री अभय देव सूरि, श्री जिनवल्लभ सूरि, श्रीजिनदत्त सूरि, पट्टानुक्रम समा-गत सुगृहीत नामधेय श्री जिनमाणिक्य सूरि पट्टप्रभाकर श्रीऋषभेश देवकृतानेकवार चरण सन्निवेश श्री पुण्डरीकाचलोपरिप्रदेश समु-ल्लसित परमरम्भ संसर्गान्त दुर्गान्तः परितः परविहार प्रतिषेध दुर्ललित कोपविकार दुराचार प्रतिपन्थि मथनोद्भूत नव्यभव्य चैत्यनिष्पादन प्रभूत परमोत्साह सुखसागरावगाह सन्तुष्ट पुष्ट सत्कर्म्मा वारित श्री खरतरसङ्घ कारित श्रीयुगादिविहार मुक्ताहार पुञ्जस्थापक पद संपदनुत्तर सुधामधु मधुरतर वचन रचनाऽवर्जिता तर्जिता शविर श्री सलेम सुरत्राण मदाचीर्ण वितीर्ण रवि गुरुवार दुर्निवार सदुच्चारामारि पटह प्रकार प्रसादीकृतोच्छ्रितोच्छ्रित निरु-पम परित्राण श्री पितृ सुरत्राण धर्मप्राग्भार सदुपदेशोल्लास जगत्प्र-काश जगाति जेजीया प्रभृति करमोचन कारित दिग्वलय, मलयज, हास, काश, संकाश, यशोमरालबाल पद प्रचार प्राभृतीकृत स्फुरत कांतकांति स्फुट स्फुटिक विमलदल तद्रणिति घटित सुघट कलिकाल प्रगट प्रताप दूरीकृत सताप व्याप पुरुषादेय श्रीवामेयबिम्ब प्रतिष्ठा विधायक श्री खरतर गच्छनायक सुविहित चक्रचूडामणि युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि पुरंदरैः श्री मदाचार्य श्री जिनसिंह सूरि श्री समय-राजोपाध्याय श्री रत्ननिधानोपाध्याय वा० पुण्यप्रधानगणिप्रमुख

शिष्य प्रशिष्य साधुसद्वसुपरिकरैः प्रतिष्ठितं श्रीआदिनाथबिंबं कारितं च सकल श्री संघेन पूज्यमानं चिरं नन्दताद्याचन्द्रार्कतीर्थमिदम् ॥ सं० १६६२ वर्षे चैत्रवदि सप्तमी दिने श्री विक्रम नगरे राजाधिराज श्रीरायसिंह विजयिराज्ये ।*

युगप्रधान श्री जिनचंद्र सूरि पुरंदराणां-सदुपदेशेन श्री विक्रम-नगर वास्तव्य भव्योसवाल ज्ञातीय चोपडा गोत्रीय संघपति कचरा पुत्र रत्न संघपति अमरसी भार्या अमरादेवी पुत्र संघपति आसकर्णेन भ्रातृ अमीपाल कपूर परिवृतेन श्री योगशास्त्र वृत्ति पुस्तकं लेख-यित्वा, श्री युगप्रधान गुरुभ्यः प्रददे, तैश्च श्री स्तम्भतीर्थ ज्ञानकोशे ज्ञान संपद्वृद्धये स्थापयां चक्रे। शिष्य प्रशिष्य परंपरया वाच्यमानं चिरंनन्दतादानन्द विधायकं । श्री रस्तु ।

(श्री पूज्यजी संग्रहमें, प्रशस्तिपत्र १ (गुणविनय लिः ?) से ।

विज्ञप्ति पत्र ।

॥ ६० ॥ स्वस्ति श्री शान्ति जिन मानम्य ॥ श्री मति वेन्नातटे । प्रकट प्रोत्कट संकट कोटि करटि सत्पराक्रमा क्रान्त नभ क्रान्ता भ्रान्त वादि वृन्द प्रदत्तामान सन्मान दानान्, प्रस्फुरदुदुप-मार विसारि म्लेच्छ सम्भार हारि निकर प्रणामाभिराम पादमाहि सलेम स्वच्छल गलन्मानावमति तापित जिनपतियति तति कृते त्राणावदानान् , युग प्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि राजान् वा० सुमति

* यही प्रशस्ति (पीछे की २, ३ लाइनों को छोड़ कर) प्रवर्त्तक सुखसागरजीके प्रेषित षड्दर्शन हिन्दीके अन्तिम पत्र में भी लिखी हुई है।

कल्लोल वाचनाचार्य, पुण्य प्रधान गणि, पं० मुनि वल्लभ गणि, पं० अमीपाल प्रमुख साधु मधुकर संसेवित पदिन्दीवरान्, श्री जेसलमेरु दुर्गतो, वि० विमलतिलक गणि, वा० साधुसुन्दर गणि, वि० विमलकीर्ति, वि० विजयकीर्ति, वि० उदयकीर्ति प्रभृति यति तति समनुगत सरणिः सादरं सुन्दरं त्रिः प्रदक्षिणी कृत्य सत्यं विज्ञापयतीदंवचः। श्रेयोत्र श्री सौव गुरु राज प्रसादतः।

श्रीमतां वहिमय(अ ?)स्मि। तथा पत्र मेकं श्री युगप्रधान गुरुणामागतमवगतादंत प्रवृत्ति राग(?)दितं मन्मनसः॥ यत्तु कोट्टडा देश सत्क आदेशो नेतरथाकारि। तच्चारु कृतं। नहि पुण्य प्रत्रय ! मंतरेण पुण्यार्क युक्तस्य क्षेत्रस्य देवसस्येव कार्य-सिद्धौ तत्काल मेव दुःप्राप्य माणत्वान्मम द्विरूप दिष्टा विशिष्ट क्षेत्रा-दिष्टिः पुण्यमेत्राविर्भावयति। यत्तु द्विस्थान्या तत्पार्श्ववर्तिनि ग्रामे स्थेय मिति लिखितं तत्दूर पार्श्व वत्त (वर्त्ति)१ ग्रामोपिनास्ति। पृथग् चातुर्मास्यवस्थान कृदपिनास्ति॥ इति विज्ञेयं। भवत्प्रसादात्ताअपि सुखित····वाहं स्थास्ये इति न कापि चिन्तास्ति। सा० थिरुकस्यः प्रतिःशोध्यते। यावदत्र स्थास्यामि तावत्तत्प्रतिशोधनं करिष्यामीति॥

तथा श्री गुरुराज दर्शनार्थं गत रूपी मचकूपीसतूपीस्तस्तन स्व दर्शन दान प्रधान पीयूष दानेन तोषणीये इति॥ सदा वन्दना-वसेया॥ भाटी गोइंद दासोपि चलितु मुत्तालतां करोति तथापि कतिचिद्दिनानि लगिष्यन्ति। वलमानपत्रं प्रसाद्यम्। सर्वेषां पार्श्व-वर्तिना साधूनां मन्नामग्राहं वंदना निवेद्या। चैत्रासित दशम्या रजन्याम्॥ (मूलपत्र हमारे संग्रह में)

परिशिष्ट (ङ)

श्रीजिनचंद्र सूरिश्वर कृत

अष्टमद चौपइ

प्रथम ऋषभ नमुं जिनराज, जसु सेवइ सवि सीझइ काज ।
अष्टमद चउपई सुचंग, रचिमि (मुं?) भाव भगति मन रंगि ॥१॥
पर हित पर उपकार मुणिंद, पूछइ गोयम वीर जिणंद ।
कहि प्रभु कर्म विपाक विचार, किम जीव रुलइ मदइ संसार ॥२॥
जाति न अम्ह समउ उत्तम कोइ, इसइ गरबि मरी सो क्रमि होइ ।
पूरव भव जाति मद कीयउ, मरी चंडाल 'हरकेसी' वली हुओ ॥३॥
जे कुल मद करइ बोलइ आल, ते परभवि हुइ ससउ सीयाल ।
कुलमद 'मरीचि' 'लगाई' खोड़ि, भमिउ सागर कोड़ा कोड़ी ॥४॥
हम सम रूपि न इसि मदि नडिउ, निरखत सयल अचल(चलत)आरडीउ
विणसत रूप न लागी वार, हुओ सुउंट योनि अवतार ॥५॥
षटखंड पृथवी ऋद्धि अपार, चउद रतन नवनिध भंडार ।
रूप गर्व कीय 'सननकुमार', विणठउ तन धिग २ संसार ॥६॥
कहइ न बलवंत हम सम कोई, मरि पतंग सो निश्चय होइ ।
गति यौवन बलि थिर न रहेइ, तु 'बाहूबलि' दीक्षा लेइ ॥७॥
मति बुधि नउ फल परतखि जोइ, मरि मूरख मृग छालउ होइ ।
पढ़त पाठ(ढ!) गरबिउ अयाण, हुं जगि पंडित अवर न जाण ॥८॥

ज्ञान मदिइ वलदिउ सु होइ, रथ जूतइ दुख सहसिइ सोइ ।
धण कण कंचण ऋद्धि मद कीउ, धिग धनु जिसु लगइ कूकर हुउ ॥६॥
रातिहि घरि २ भमतउ रहइ, हडकत रांक न खुरचनि लहइ ।
नवइ नंदि मम्मणि लोभियउ, धन न धर्म दुख आगल थयो ॥१०॥
भोजन करि वेयावच करइ, निंदइ तसु तपगरब मनि धरइ ।
'कूरगडू' नी परि दुरा सहइ, तृपति आहार करत नवि लहइ ।११।
मुझ न गमइ इहु दोभागियउ, हुं जगिवलभ सोभागिउ ।
इसा बचनं गरब मनि धरइ, साप काग होइ अवतरइ ॥१२॥
सूवा सारू मधुरसि लवइ, वचन दंड पंजर दुख सहइ ।
मगर सहस योजन विस्तार, तंदुल लवुतमि मन व्यापार ॥१३॥
इक इक दण्डि महादुख पार, तिहु सहत तिणि कवण आधार ।
माया वागुल क्रोध भुजंग, मांनिहि वेसर होइ मतंगु ॥१४॥
लोभिइ उंदरडो मरि होइ, कर्म आगल नवि छूटइ कोइ ।
नयन रूपि रंगि रमइ पतंग, नाद वेधि वेधियउ कुरंगु ॥१५॥
मीन रसनि परिमल भमरलउ, फरस रसि गज गयवर गलिउ ।
इक २ इंद्रि लगइ दुख सहइ, जिस तनि पंचइ ते किम सहइ ॥१६॥
इय सुणिय सुणिय विचार निर्मल, आठमद जिउ परिहरइ ।
तिजी राग दस (द्वेप?) कषाय इन्द्रि, पंच विषय न चित धरइ ॥
धन्न धन्न खरतर गछ सुरतरु, भणइ 'जिणचन्द्रसूरि' ।
जे पढ़इ तेहनइ आदि 'जिणवर', मनह वंछित पूरि ॥१७॥
(पत्र १ सं० तत्कालीन)

(२) विक्रमपुर मंडण आदि जिन स्तवन

राग :—धारणि

साचउ इक अरिहन्त अकल सरूपी जिणवर जाणीयइ रे ।
हरिहर ब्रह्मा देव ते सुहणइ मनहि न आणियइ रे ॥
सामी समरथ आज मई नयणउ निरखीयइ रे ।
मन माहरउ रे रूड़ा, जिणगुण गाइवा हरखीयउ रे ॥आ०॥
रमणि रंग विलास योवन धन छइ सहु(य) कारिमउ रे ।
भवभय भंजण धोर श्रीनरपहेसर सुरत(सुख) सुरतरु समउरे ॥२॥
तुम्ह दरसिण जगनाह, सफल जमारो जाण्यो मइ माहरो रे ।
कामित फल दातार हिव हुं नाम न छोड़ूं ताहरउ रे ॥३॥
द्यो समकित मुझ सामी वलि वलि पय पणमी वीनवउं सही रे ।
गरूआ तणउ रे सभाव एहज प्रारथिया पहडइ नही रे ॥४॥
'विक्रमनयर' शृङ्गार श्री आदिसर निज मन ध्याइयइ रे ।
श्रीजिनचन्द्रसूरि एम, पभणइ वंछित(बहू) फल पाईयइ रे ।।स०॥५॥

(३) जोगी वाणी

काया नगरी कोट सबल तिहा, अष्ट बुरज नव द्वारं ।
सहस बहुत्तरि राणी रमता, राइण (रावरन) विरचत वारं ॥१॥
जोगी हो भूलि म भरम संसारं,
यहु घट काचउ कूड म राचउ कोजइ जिनधर्म सारं ॥१॥जो०॥
चीर कपूर आसन कि पटंबर ताल सु अमृन हारं ।
देखत धिग धिग सयल संगत ए, कोटी हुइस्यइ असारं ॥२॥जो०॥

काचउ रे कुम्भ भर्यो जिम नीरइ, होइ न विणसत वारं ।
तेम अथिर तनु छीजइ खिण खिण, कीजइ पुण्य अपारं ॥३॥जो०॥
जड़िय न औषध मन्त्र न मूली, तंत्र न जंत्र जनोइ ।
जामन मरण जरा दुख वारण, राखणहार न कोइ ॥४॥जो०॥
नव तत(त्व) मेरी कंगुरी (किंनरी) रे, जीवदया तंत सारं ।
जे कंगरी(किनगरी) वावइ अरिहन्त ध्यावइ, ते पावइ भवपारं ।५।जो०
वाणी श्रुत रंग सीगी पूरं, नासइ दुकृत पूरं ।
कानइ मोरइ तप मुद्रा दीपइ, जीपइ चंद नइ सूरं ॥६॥जो०॥
समता अंगि विभूति लगाउं, विनइ जटा सुर राऊं ।
मेखलि मौनि महाव्रत कंथा, पहिरि परम पद पाउं ॥७॥जो०॥
शील गुण्ड तिन डंपति जोगवटउ, दीनउ गुरु हितकारं ।
ज्ञान मढी थिर आसन वइठउ, मन्त्र जपुं(जपइ) नवकारं ॥८॥जो०॥
भावना भूमि खिमा मोरी मिज्या, सोवत सयर सुरंगो ।
सुगुरु वचन सुणि मोह निंद्रा मिसि, राव? लगी सिव रंगो ।९।जो०
खपर खाइ संघ(था)रइ सोवइ, भार जटा सिर धारइ ।
जोगी नाम विगोवइ कां रे, जिण मत विण भ(व) हारइ ॥१०॥जो०॥
आदीसर जिन शासन जोगी, नेमि नइ थूलिभद्र राया ।
जेहनइ नामइ पाप पुलायइ, निर्मल होवइ काया ॥११॥जो०॥
पूरि मनोरथ वीर जोगीसर, 'ढिलीपुर' प्रभु जाणी (राया) ।
जोगी वाणि 'जिनचन्द सूर' हि, रंगइ एम वखाणी ॥१२॥जो०॥
पाठा. श्री जिनचंद सूरीसर इणपरि जोगी कुं समझाया ॥जो०॥
॥ इति गीतम् ॥

पञ्चतीर्थी स्तवनम् ।

कनक केतक केसर दीधितिं, मिलित मुक्त महासुख सन्ततिम् ।
विदित विश्वपति विगतानृतं, नमत नाभि भवं नयनामृतम् ॥१॥
सुमुख गोमुख यक्ष वरेणयः, समनु सेवित आदिमतीर्थपः ।
दम दयापर काम कलाजितः, शिव रमां ददतान्सवपाङ्कितः ॥२॥
मृदु मृगाङ्क महाभव भीत भिद्गगन नीरधि चापति मुस्सविन् ।
कल कुमारक कांचल कान्तजिन् ,विजयनां जिन शान्ति त्रिकालविन् ।३।
सकल सद्गुण रत्न करण्डकम् , भव महोदधि तार तरण्डकम् ।
सपदि वारित वाद वितण्डकम् , स्मरति शांति जिनेश म चंदकं ।४।
विगत विस्तर वाम विरामकम् , मुख कला जित तापन धामकम् ।
नत सुरासुर शङ्कर नामकम् , विधिन मार्ज्जनताकृत कामकम् ॥५॥
घन घना घन कज्जलकासितम् , परम केवल भाव विभासितम् ।
नमित निर्ज्जर राज नरेश्वरम् , भजत सुन्दर नेमि जिनेश्वरम् ॥६॥
सकल मंगल मूलमपापकम् , विदलिताखिल कर्म कलापकम् ।
वर विभा भर भासुर भालकम् , प्रणत पार्श्वपतिं परपालकम् ॥७॥
तव जिनेश दिनेश समाकृतिः जनित लोक सुकोक चमत्कृतिः ।
रुचिर रोचि कलाप कलाधृतिः कृत कुबोध तमोहर नाहतिः ॥८॥
मथित मन्मथ मन्थुर संकटं, जरित जन्म जरा मरणव्ययम् ।
सरल सज्जित संयम सद्रथम् , विनुत वीर जिनं धृत सत्पथम् ॥९॥

तरुण तप्त हिरण्य समत्विपम्, दरितरत्य रति प्रभृति द्विपम् ।
विकट सङ्कट कोटि पराङ्मुखम्, हृदि विवत्त जिन विलसत्सुखम् ॥१०॥
इति जगद्गुरु पचक सस्तवस्सविनय जिनचन्द्र कृतस्तव ।
सुकवि चित्त कृतानध समद प्रतनुतात्सुख सन्तति सम्पद ॥ ११॥
॥ इति पञ्चतीर्थी स्तवनम् सम्पूर्णम् ॥

पार्श्वनाथ स्तवन

पद द्वयाशक्त नरा प्रभूता अभीपबोयस्य परि प्रभूता ।
उर्द्ध प्रयान्ति प्रतिभास माना सूर्यस्य जेतु प्रतिभा समाना ॥ १ ॥
वीर्यादि हार्यादित मन्युनेव रत्ता नितान्त खलु मन्युनेव ।
अय जन तापयति प्रमोदात् दस्मस्सु सत्सु प्रभुप प्रमोदात् ॥ २ ॥
पद द्वय यस्य विभाति कामम् सरोज सभार मिव प्रकामम् ।
सुरेन्द्र नागेन्द्र कृत प्रणामम् स्तवीमि पार्श्व सुगुणाभिरामम् ॥ ३ ॥
सुदेशोस्तु पार्श्वो जिनो मे विशाल सदायोष्ट देहो भवत्शर्म्मकाल ।
अर्हन्नम भूतस्य सत्तास्य चूडामणि निम्न नोष्ट प्रकर्मच्छि देहि ॥ ४ ॥
स्वच्छ श्री शशि गच्छ मण्डपमणि गाम्भीर्य्य धैर्य्योदधि
श्रीमच्छ्री जिन पूर्वको गुणनिधि माणिक्य सूरि गुरु
शिष्य श्री जिनचन्द्र सूरिभिरिति सम्यक् स्तुतो भक्तित
श्री पार्श्व प्रददातु निर्मल फल त्रैलोक्य चूडामणि ॥ ५ ॥
॥ इति पार्श्वनाथ स्तवनं समाप्तम् ॥
(पत्र १ हमारे सग्रह मे)

अवश्य पढ़िये ! शीघ्र खरीदिये !!

श्री अभय जैन ग्रन्थमाला की

सस्ती, सुन्दर और उपयोगी पुस्तकें।

ग्रन्थमालाका उद्देश्य—प्रायः लागत मूल्यमें या उससे भी कम मूल्यमें यावत् अमूल्य तक में, भी सुन्दर उपयोगी जैन साहित्यका प्रचार करना।

ग्रन्थमाला स्थापन—श्रीमान् शंकरदानजी नाहटाके पुत्ररत्न, परम धर्मज्ञ विद्याविलासी, शिक्षाप्रेमी, सुधार प्रिय स्वर्गीय, श्रीमान् अभयराजजी की पवित्र स्मृतिमें सं० १९८२ में स्थापित की गयी थी। थोड़े ही वर्षोंमें अत्युपयोगी ८ ग्रन्थोंका प्रकाशन होना हर्षका विषय है। ग्रन्थमाला द्वारा प्रकाशित पुस्तकोंका संक्षिप्त परिचय यह है:—

१ अभयरत्नसार अलभ्य

खरतरगच्छीय पंचप्रतिक्रमण, साधु प्रतिक्रमणके साथ श्रावकोपयोगी स्तवन सज्झाय, तपस्या विधि, विधान भक्ष्याभक्ष्य आदि सभी आवश्यक विषयोंका अत्युत्तम संग्रह, सजिल्द पृ० ८०० का लागतसे भी कम मूल्य ॥) मात्र। इसकी उपयोगिताका स्पष्ट प्रमाण यही है कि २००० पुस्तकें धड़ाधड़ बिक गयीं, अब भी प्रचुर मांग है, लेकिन अब पुस्तकें स्टोकमें नहीं रहीं।

२ पूजा संग्रह—पृष्ट ४६४ सजिल्द ग्रन्थका मूल्य मात्र १)।

भिन्न भिन्न विद्वान् कवियोंके रचित १७ पूजाओंके साथ अप्रकाशित कविवर समयसुन्दरजीकृत चौवीसी और मनोहर स्तवनोंका उपयोगी संग्रह।

मंगानेकी शीघ्रता करनी चाहिये, अन्यथा अभयरत्नसार की की तरह पछताना पड़ेगा।

३ सती मृगावती ले०—भंवरलाल नाहटा

प्रातः स्मरणीय सती मृगावतीका सरल और रोचक भाषामें मनोहर चरित्र इस पुस्तकमें बड़ी ही खूबीके साथ अङ्कित है पृ० ४० मूल्य =) मात्र

४ विधवा कर्तव्य ले०—अगरचन्द नाहटा

ताडपत्र पर लिखित प्राचीन 'विधवा कुलक'का सरल विस्तृत विवेचनात्मक भाषान्तरके साथ विधवा बहिनोंके उपयोगी सभी विषयों और कर्त्तव्यों पर इसमें प्रकाश डाला गया है। विधवा बहिनोंके लिये तो यह मार्गदर्शक ही है। प्रभावनामें अमूल्य वितरण करने योग्य ग्रन्थरत्न पृ० ६८ मूल्य मात्र =)।

५ स्नात्र पूजादि संग्रह :—पोस्टेज)॥। का टिकट भेजने पर मुफ्त स्नात्रपूजा, अष्टप्रकारी, दादाजीकी अष्टप्रकारी पूजाओंके साथ दर्शनिक स्तवनादि संग्रह।

६ जिनराजभक्ति आदर्श अलभ्य

जिनेश्वरकी भक्ति और पूजाका सच्चा स्वरूप दर्शानेवाला अत्युत्तम ग्रन्थरत्न, प्रारम्भमें 'मूर्त्ति पूजा विचार' नामक बाबू अगरचन्दजीका मननीय लेख है। १००० प्रतियां धड़ाधड़ बिक गयीं, अब स्टोकमें नहीं है।

७ युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि

आपके कर कमलोंमें विद्यमान, हाथ कङ्गनको आरसी क्या!

८ ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह: छप रहा है

१३ वीं शताब्दीसे वर्त्तमान तककी भाषाओंका क्रमिक विकाश, जैन धर्मका उज्वल अतीत गौरव, जैनाचार्यों, विद्वानोंकी जीवनी और शासन सेवाओंका दिग्दर्शन करनेवाला हिन्दी साहित्य संसारमें अपूर्व अजोड़ ग्रन्थरत्न बड़े ही सजधज सुन्दर चित्रोंके साथ सुसज्जित होकर शीघ्र ही प्रकाशित होगा। पहलेसे ग्राहक बनिये नहीं तो पछताना पड़ेगा।

भविष्यमें प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थ

१—जिनदत्तसूरि चरित्र २—कविवर समयसुन्दर ३ कविवर धर्मवर्द्धन ४—मस्तयोगी ज्ञानसारजी, आदि ऐतिहासिक अनेकों ग्रन्थरत्न बड़ी ही महत्वपूर्ण खोज-शोधके साथ प्रकट होंगे।

—०—

परिशिष्ट (क)

(परिशिष्ट "ग" के पूर्ति रूप)

(अल्लाहो अकबर)

नकल प्रतिभाशाली फरमान तारीख २२ महीना अयान आल्ही सन् ४० (मेरे) साम्राज्य के वर्त्तमान व भविष्य के मुत्सद्दियों (समस्त कर्मचारियों—या कार्यकर्त्ताओं) को मालूम हो कि युग-प्रधान जिनचन्द्रसूरि व (और) जिनसिंहसूरि कि जो ईश्वर-भक्त व ईश्वर के विषय के पंडित हैं ; चाहिये कि उनको तसल्ली (दिलजमी) देनेका प्रयत्न करें (याने प्रसन्न रखें) कोई उनके साथियों को दुःख न देने पावे। यदि वे अपने किसी चेले या साथीको अपने पास से दूर करदेंतो किसीको ऐसे (उस) व्यक्ति की सहायता नहीं करना चाहिये। उनके उपासरों व मन्दिरों आदि में कोई भी किसी तरह से भी उनके कार्यमें विघ्न न डाले। क्योंकि बादशाह (अकबर) का यह नियम है कि हरएक सम्प्रदाय अपनी रीतिके अनुसार ईश्वर की सेवा-पूजा करें।

जो झगड़ा ईश्वरभक्त हीरविजयसूरि व विजयसेनसूरि के सम्प्रदाय वालोंसे हुआ था वह बादशाह के सामने अर्ज किया गया बादशाह ने हुक्म फरमाया कि अब उनके अनुयायियों में किसी भी कारण से झगड़ा न हो और वह एक दूसरी की बदी (बुरी) न चाहें। और जो कुछ उनके चेले धर्मसागर ने "प्रवचन परीक्षा" नामक पुस्तक में उनकी बुराई लिखी है उसको उसमें से दूर करदें और यदि उन्होंने अपनी पुस्तकों में उनके विरुद्ध कुछ लिखा है तो उसे वे भी दूर करदें क्योंकि ईश्वरभक्ति को पहली पूंजी-सीढ़ी यह है कि ऐसे कार्यों से दूर रहे।

ईश्वर से प्रार्थना है कि इन दोनों सम्प्रदायों में प्रेम व मेल होजाय।

अबुलफजल

वाके अनवीस सरफुद्दीन हुसेन

अल्लाह अकबर

नकल प्रतिभाशाली (चमकदार) फरमान जिसपर मुहर "अल्लाह अकबर" लगी हुई है।

तारीख शहरयूर ४ माह महर आलहो सन् ३७

चूंकि उमदतूल मुल्क रुक्नूस सल्तनत उल काहेरात उजदूद-दौला निजामुद्दीन मुहदखाँ जो बादशाह का कृपापात्र है, मालुम हो चूंकि मेरा (बादशाह का) पूर्ण हृदय तमाम जनता यथा सारे जान-दारों (जीवधारियों) के शान्ति के लिए लगा है कि समस्त संसार के निवासी शान्ति और सुख के पालने में रहें। इन दिनों में ईश्वर भक्त व ईश्वर के विषय में मनन करने वाले जिनचन्द्रसूरि खरतर भट्टारक को मेरे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ उसकी ईश्वर भक्ति प्रगट हुई, मैंने उसको बादशाही मिहरबानियों से परिपूर्ण कर दिया उसने प्रार्थना की कि इससे पहिले ईश्वर-भक्त हीरविजयसूरि तपखाने (हजूरके) मिलने का सौभाग्य प्राप्त किया था उसने प्रार्थना की थी कि हरसाल बारह दिन साम्राज्य में जीववध न हो और किसी चिड़िया या मच्छी के पास न जाय (न सतावें) उसकी प्रार्थना कृपाकी दृष्टि से व जीव बचाने की दृष्टि से स्वीकार हुई थी अब मैं आशा करता हूं कि मेरे लिए (एक) सप्ताह भर के लिए उसी तरह से (बादशाह का) हुक्म हो जाय। इसलिए हमने पूर्ण दया से हुक्म किया कि आषाढ मास के शुक्लपक्ष में सातदिन जीववध न हो और

न सताने वाले (गैर मूजी) पशुओं को कोई न सतावे, उसकी तफ़सील यह है :—नवमी, दसमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णमासी। वास्तव में बात यह है कि चूंकि आदमी के लिए ईश्वर ने भिन्न भिन्न अच्छे पदार्थ दिए हैं अतः उसे पशुओंको न सताना चाहिए और अपने पेट को पशुओं की कब्र न बनाए। कुछ हेतुवश प्राचीन समय के कुछ बुद्धिमानलोगों ने इस प्रथा को चलादिया था। चाहिए कि जैसा ऊपर लिखा गया है उसपर अमल करे इसमें कमी न हो और इसे (हुक्म को) कार्य रूपमें परिणित करने में बहुत सहनशीलता से काम लें।

ऊपर लिखी तारीख को लिखा गया

अबुलफ़जल व वाकयानवीस इब्राहिमबेग

(१) उड़ीसा और उड़ीसा की सब सरकारें,

	खिलजीयाबाद
जिहन्ताबाद	सरीफाबाद
मारोहा (मादोहा)	सासा गाँव
तारीकाबाद	मारकाम
गोरीया	सलीमाबाद
कफ़दा	सलसल (सिलसल)
कीचर	फतेहाबाद
बलाद (टाण्डा)	भूराघाट
ताजपुर	महमूदाबाद
हसन गाँव	मदारक,

(२) फरमान वयाजी व मोहर "अल्लाह अकबर" असकरार ४ सहरयूर माहमहर आलही सन् ३७ आंकि जागीरदारान करारियान ओ मुत्सद्दियान सूबे अवध विदानद.

अवध	वहराइच
खैराबाद	गोरखपुर
लखनऊ	

(३) (कटा हुआ आधा उपर का भाग नहीं मिला)

देहली	सरहिन्द
वदायुं	सम्बल
हिसार—फीरोज़ा	सहारनपुर
रिवाड़ी	

नोट :—खरतराचार्य गच्छीय यति श्रीपूनमचन्दजी के सौजन्य से हालहीमें हमें पांच शाही-फरमानोंकी नकलें प्राप्त हुई, जिनमें तीन केवल, आषाढ़ी अष्टान्हिकामारिके फरमान हैं। मुल्तान सूबेका एक फरमान परिशिष्ट (ग) में छप गया है। ये तीन फरमान क्रमशः सूबा उड़ीसा, अवध और दिल्लीके हैं। पहला फरमान धर्मसागर कृत "प्रवचन-परीक्षा" सम्बन्धी है उसकी दोनों नकलें अत्यन्त जीर्ण और जर्जरित होनेके कारण पूर्ण शब्दानुवाद न हो सका, अतएव भावानुवाद ही प्रकाशित करते हैं। फरमानोंका अनुवाद डा० आशीर्वादीलालजी श्रीवास्तव M.A. ph. D. महोदयने करनेकी कृपा की है एतदर्थ आपको अनेक धन्यवाद है। सूरिजीको मिले हुए शाही फरमानोंमें अभीतक खंभातके जलचर जन्तुओंका एवं आठ इतर सूबोंके फरमान, एवं शाही आमन्त्रण-पत्र, दर्शनीविहार मोक्ष इत्यादि कई और मिलने चाहिए। भविष्यमें प्राप्त हुए तो द्वितीयावृत्तिमें प्रकाशित करेंगे।

परिशिष्ट (छ)

पूर्त्ति

पृ० ९ श्रीवर्द्धमानसूरि कृत उपमितिभवप्रपञ्चानामसमुच्चय, उपदेश-माला वृहद्वृत्ति और सं० १०४९ का प्रतिमा-लेख (कटिग्राममें) उपलब्ध है।

पृ० १२ श्री अभयदेवसूरि कृत १ सत्तरीभाष्य (गा० १९२ कृपा० भं०), २ नवतत्वप्रकरण भाष्य, ३ पंचनिग्रन्थी, ४ वंदनक भाष्य, ५ निगोद षट्त्रिंशिका, ६ पुद्गल षट्त्रिंशिका, ७ साहम्मो वच्छल कुलक (गा० २१) और ८ महावीर स्तवनादि उपलब्ध हैं।

पृ० १३ जिनदत्तसूरि कृत १ सुगुरु पारतन्त्र २ विघ्नविनाशी स्तोत्र, ३ उपदेश कुलं, ४ सर्वाधिष्ठायी स्तोत्र, ५ श्रुतस्तव, ६ आध्यात्म गीतानि ७ मन्त्रगर्भित स्तोत्र आदि उपलब्ध हैं।

पृ० १४ जिनपतिसूरि कृत पंचलिंगीटीका, तीर्थमाला, चतुर्विंशतिजिन स्तव, विरोधालङ्कार ऋषभ स्तुति इत्यादि उपलब्ध हैं।

पृ० १९ श्री जिनप्रबोधसूरिजीने विवेकसागर कृत 'पुण्यसार कथा" का संशोधन किया था।

पृ० १६३ विनयसोम—इनके शिष्य सोमसुन्दर शि० अमर कृत विवाह पड़ल (प० १९) उपलब्ध है।

पृ० १६२ लब्धोदय शि० दानसागर शि० रत्नधीर कृत भुवनदीपकटबा (सं० १८०९ जै० सा० सं० इ०) मिलता है।

पृ० १६४ कल्याणधीर कृत साधुसझाय गा० ६८ पत्र ३ चतुर० सं० में है।

पृ० १६४ गुणरत्न कृत काव्यप्रकाश टीका (सं० १६१० ज्ये० व० ७ शि० रत्नविशालार्थं) और सारस्वतक्रियाचन्द्रिका (सं० १६४१

भुवन० भं० पत्र ४४) उपलब्ध है। इनके शिष्य रत्नविशाल कृत रत्नपाल चौ० (सं० १६६२ महिमापुर भुवन० भं०) और इनके लिखित प्रशस्ति सं० १६६६ भा० सु० ३ वीरमपुरमें (नाहर लेखाङ्क १७१९) है। शिष्यके प्रशिष्य महिमोदय कृत पंचाङ्गनयनविधि गा० ९४ (सं० १७२३ भा० सु० ७) भी उपलब्ध है।

पृ० १६४ कुशलधीर कृत 'रसिकप्रिया भाषाटीका' (जोधपुर, वर्द्धमान भं० गु०) और कुशललाभ कृत वनराजर्षि चौ० (सं० १७५० जय० भं०), मल्लिस्त० (१७५६ जेसलमेर) उपलब्ध है।

पृ० १६४ महिमोदय कृत ग्रहपक्षगुहस्पष्टानयन चौ० गा० ४६ (सं० १७३१ मा० सु० ९ सांगाजी हेतवे रचित) संग्रह में नं० १२९ में है।

पृ० १६९ क्षेमरङ्ग शिष्य विनयप्रमोद दि० महिमासेन लिखित प्रति महिमा भ० बं० नं० २० में है।

पृ० १७३ पद्महेम शिष्य कृत देशीनाममाला अवचूरि (सं० १६९२ कृपा० भं० नं० ५२९) उपलब्ध है।

पृ० १८१ श्रीजिनसिंहसूरिजी के भुवनराज नामक शिष्य थे जिनके सं० १६८७ फा० सु० ९ बीकानेरमें लिखित प्रति का अन्त्य-पत्र हमारे संग्रहमें है।

पृ० १८२ रामचन्द्र कृत मूलदेव चौ० (सं० १७११ नवहर–चतुर० सं०) एवं सामुद्रिकभाषा (सं० १७२२ माघ कृ० ६ मेहरा जिनहर्षसूरि भं०) उपलब्ध है। वैद्यविनोद सं० १७२० लिखा

है यह संवत् रामविनोद का है। वैद्यविनोद इससे अलग होगा उसका रचनाकाल सं० १७२६ वै० सु० १५ मरोट (दान० भं०) है।

पृ० १८३ दयासागर कृत दोलतवीरास (सं० १७०५ फा० सु० ९ वर्द्ध० भं०) उपलब्ध है।

पृ० १८५ सुमतिकल्लोल कृत मृगापुत्र सन्धि (रामचन्द्र भं०) सं० १६६१ (?) मा० ब० ११ महिमनगरमें रचित उपलब्ध है।

पृ० १८५ रत्नसुन्दर शि० रत्नराज शि० नरसिंह कृत कल्पसूत्र बाला० और योगचिन्तामणि बाला० उपलब्ध है।

पृ० १८६ ज्ञानचन्द्र कृत जिनपालित जिनरक्षितरास (गा० १८४) और चित्तसंभूति चौढा० (गा० १८६) क्षमा० भं० में उपलब्ध है।

पृ० १८६ साधुरंग कृत धर्मोपदेश गा० ८७, सूयगडंग दीपिकादि उपलब्ध है।

पृ० १८८ विनयलाभ कृत 'पार्श्व भक्तामर' गा० ४५ "भक्तामर पाद पूर्ति काव्यसंग्रह" भा० २ में मुद्रित है।

पृ० १८९ देवचन्द्रजी कृत "दण्डक बाला०" (सं० १८०३ का० सु० ११ नवानगर० चतुर० सं०) उपलब्ध है।

पृ० १९० की फूटनोटमें उल्लिखित "लघुविधिप्रपा" का अवतरण :—
"श्री जिनचन्द्रसूरिजी यइ श्री पुण्यसागर महोपाध्याय नइ पूछायउ हुतउ तिवारइ पूठी जबाब कीधउ हुतउ"

पृ० १९१ पद्मराज कृत चौदह गुणस्थान स्त० टबा और ९ बोलगर्भित चौवीस जिन स्तवनादि उपलब्ध है।

पृ० १९२ अमरमाणिक्य शि० वा० क्षमारंग शि० रत्नलाभ शि० राजकीर्त्ति कृत "वर्द्धमानदेशना" उपलब्ध है।

पृ० १९३ विमलकीर्त्ति कृत (१) दशवैकालिकटबा (२) पाक्षिकसूत्र टबा और (३) प्रतिक्रमण समाचारी टबा उपलब्ध है।

पृ० १९३ ज्ञानमेरु कृत (१) कालिकाचार्य कथा (भुवन० भं०), (२) माधवनिदान बाला० उपलब्ध है।

पृ० १९३ नयमेरुके शिष्य केशवदास लिखा है किन्तु वे उनके प्रशिष्य यानी शि० लावण्यरत्नके शिष्य थे।

पृ० १९६ राजसिंह कृत विद्याविलास चौ० (स० १६७९ वै० चंपावती दान० भं०) उपलब्ध है।

पृ० १९६ कुशललाभ कृत जिनरक्षितरास (सं० १६२१ श्रा० सु० ९) उपलब्ध है। इनके गुरुभाई भानुचन्द्र-रामचन्द्र (सं० १६९७ वाल्यवयस्क, प्रद्वेषी) थे, भानुचन्द्रजीके पास सुप्रसिद्ध कविवर बनारसीदास श्रीमाल प्रतिक्रमणादि पढ़े थे (आ०का०म०मौ० ७ पृ० १९८)।

पृ० १९७ चरित्रसिंह कृत देशीनाममाला वृत्ति पत्र ४९ महिमा० भं० में उपलब्ध है।

पृ० १९७ प्रमोदमाणिक्य शि० क्षेमसोम पुण्यतिलक शि० विद्याकीर्त्ति कृत नरधर्म चरित्र सं० १६६९ पत्र ९ महिमा० भं० में है।

पृ० १९९ लावण्यकीर्त्ति कृत "देवकी ६ पुत्र ढाल" हमारे संग्रहके नं० १४०२ में है।

पृ० २०१ गुणविनय कृत ऋषिमण्डल अवचूरि (पत्र० १९ भुवन० भं०) और जयतिहुअण बाला० (लाहोर, स्वयं लि० राम० भं०)उपलब्ध है।

पृ० २०२ मतिकीर्त्ति कृत सम्यक्त्वपचीसी टबा (पत्र ८ मह्र० भं०), ललिताङ्ग रासादि उपलब्ध है।

पृ० २०३ श्रीवल्लभ कृत "चतुर्दश स्वर स्थापन वादस्थल जिनराजसूरिराज्ये रचित उ० जयचन्द्रजीके निजी पुस्तकमें है।

पृ० २०४ चारुदत्त शि० कल्याणनिधान शि० लब्धिचन्द्र कृत जन्मपत्री पद्धति (सं० १७५१ का० सु० महिमा० भं०) उपलब्ध है।

पृ० २०४ पुण्यकीर्ति कृत मोहछत्तीसी (१६८४ भा० नागौर) मद्छत्तीसी (सं० १७८९ आ० व० १३ मेड़ता) महिमाभक्ति भंडारमें उपलब्ध है।

पृ० २०४ सूरचन्द्र शि० हीर उदय प्रमोद कृत चित्तसंभूति चौ० (सं १७१९ जेसलमेर चतुर० सं०) उपलब्ध है।

पृ० २०५ शिवनिधानकृत गुणस्थानस्तवबाला० (पूनमचन्दजी यति सं० पत्र १६) संग्रामपुर में श्रावक जीवराजकी धर्मपत्नी के लिए रचित एवं भाषाके कालिकाचार्यकथा व चौमासीव्याख्यान उपलब्ध है। इनके शिष्य "मान", कृत रसमञ्जरी (गा० १०७) शिक्षा छत्तीसी (दान० भं०) और उत्तराध्ययनगीत जो सिंहविनयकृत लिखा है वास्तवमें महिमासिंह "मानकवि" कृत ही है, इस कृतिमें मतिसिंह और कनकसिंह दो गुरुभाइयोंका उल्लेख किया है।

पृ० २०६ सहजकीर्ति कृत विमनसत्तरी (सं० १६६८ नागौर सुजन० भं०) उपलब्ध है। इनके हरिश्चन्द्र रास में १ सायर सेठ २ वच्छराज ३ मरदेव ४ सुदर्शन ५ कलावती ६ रायपसेणी उद्धार ७ शत्रुञ्जय रासके रचनेका उल्लेख है। देवराज वच्छराज चौ० भिन्न भिन्न लिखा वह एक ही है। इनके शिष्य रत्नसुन्दर शि० नन्दलाल कृत (१) अष्टाह्निका व्या० (१७८९ फा० सु० ५), (२) शृङ्गार-वैराग्य तरङ्गिणी वृत्ति (सं० १७८५ आगरा), चौदहगुणस्थान विवरण (सं० १७८८ वै० सु० ३ कासमपुर जय० भं०), (४)

सिद्धान्तरखवार्ता आदिरद व्याख्या० (प० २ दान० भं०) आदि उपलब्ध है।

पृ० २०६ श्रीसार कृत जयतिहुअण बाला० (पत्र २९ जय० भं०) और कई स्तोत्रादि उपलब्ध हैं।

पृ० २०८ ज्ञानप्रमोद कृत जगदाभरण वृत्ति (जिनराजसूरि राज्ये प० ६१ दान भं० और कतिपय स्तवनादि उपलब्ध हैं। इनके शिष्य गुणनन्दन कृत इलातीपुत्र चौपई (सं० १६७५ विजयादशमी, विहार पुर क्षमा० भं०) और प्रशिष्य विनयचन्द्र कृत मेघदूतअवचूरि (सं० १६६४ राड़द्रह० स्वयं लि० प्र०) संग्रह में है। दूसरे शिष्य विशालकीर्त्ति के शिष्य क्षेमहर्ष कृत (१) पुण्यपाल चौपई (सं० १७०४ पो० शु० १० श० सिन्धु-सजाउलपुर, पर्द्ध० भं), (२) चन्दनमलयागिरि चौ० (सं० १७०४ महिमा० भं०) उपलब्ध है। क्षेमहर्ष कृत फलोदीपार्श्व स्त० गा० ७४ (प० ३) और लक्ष्मीविनय कृत भुवनदीपक बाला० (सं० १७६७ मि० कृ० १० दान० भं०) उपलब्ध है।

पृ० २०८ हीरकलश कृत १मुनिपतिचौ० (१६१८ मा० कृ० ७ र० बीकानेर महिमा० भं०), २ आराधना चौ० (सं० १६२३), ३ जीभदांतसंवाद (सं० १६४३ बीकानेर सं०), हियाली (सं० १६४३ बीकानेर) और इनके शिष्य हेमाणंद कृत अङ्कुरस्पण चौ० और दशारणभद्रभास (सं० १६६८ कार्त्तिक पूर्णिमा गा० ५६) भी उपलब्ध है।

पृ० २०८ जयनिधान कृत १ देवदिन्नचरित्र (कृपा० भं०), २ अठारह नाता सझाय (सं० १६३६ जय) ३ समेतशिखर यात्रा स्त०

(सं० १६५९ गा० १७) ४ चौबीसजिन अन्तरकाल स्त० (सं० १६३४) और कई स्तवन स्तोत्रादि उपलब्ध हैं। इनके शिष्य कमलसिंह शि० कमलरत्न कृत ज्ञानपञ्चमीस्तवनादि उपलब्ध है, कमलरत्नके शिष्य दानधर्मने पृथ्वीराज वेलि का टबा लिखा (महिमा० भं० न० ३३)। जयनिधानजी के लिखे हुई कई प्रतिएं बीकानेर के ज्ञानभण्डारों में हैं।

पृ० २०९ ललितकीर्त्ति कृत शीलोपदेशमाला वृत्ति और इनके शिष्य पुण्यहर्ष कृत हरिबल चौ० (हपु गुमुनि शाखि—कृपा० भं०) उपलब्ध है। हीरराज के शिष्य उदयहर्ष भी अच्छे कवि थे।

पृ० २०९ चन्द्रकीर्त्ति शिष्य सुमतिरङ्ग सुकवि थे। उनकी १ प्रबोधचिन्तामणि चौ० २ मोहविवेक चौ० (स० १७२९ वि०दु० मुलतान), ३ हरिकेशी चौ० (सं० १७२७ श्रा० शु० २ मं० मुलतान), ४ जम्बू चौ० (सं० १७२९ आ० कृ० ९ मुल्तान श्रीपूज्य० सं०) आदि कई कृतियें उपलब्ध हैं।

पृ० २१० "कीर्त्तिरत्नसूरि परंपरा" के हेडिङ्ग में जो कवि लिखे गए हैं उनमें केवल नं० १८-१९ के ही उक्त परंपरा के हैं। भावहर्ष सागरचन्द्रसूरि परंपरा के थे और विजयमेरु नाम भूलसे छपा है। इनका नाम वास्तव में विनयमेरु है। इनके रचित पन्नवणा विचार स्तवन गा० २९ (सं० १६९२ पौष शु० १९ साचौर) संग्रहमें है, ये श्रीजिनकुशलसूरि शि० क्षेमकीर्त्ति शाखाके थे।

❀ शुद्धाशुद्धि पत्रम् ❀

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३—२२	(पत्र २६)	(पत्र ८६)
१६—२०	समयसुन्दरोयाध्यायो	समयसुन्दरोपाध्याये
१६—१६	पहले	पहले
२६—५	केखक	लेखक
३३—१५	पहोड़ो	पहाड़ो
३४—६	लेओ	तेओ
४७—६	प्रसिद्धेया	प्रसिद्ध थया
४९—२१	पट्टा	पट्ट
५०—५	सन्वन्धी	सम्वन्धी
५१—२२	नखू	खून
५५—४	सूथी मां	सूधी मां
५५—७	सं० १६४८	सं० १६४८
५७—५	६५	७५
६७—१७	नो	तो
६८—२१	पण	पण
७०—३	शेकनो	शकनो
७०—२१	मनी शकेलीनथी	मलीशकेल नथी
७७—१४	मोठिया	सेठिया

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५—१४	सं० १५६६	सं० १५६८
७—२	स्त्रोत	स्रोत
८—२	चरित्र	चारित्र
१०—२२	स्रोजशोथ	स्रोजशोध
१६—६	परिगृह	परिग्रह
२४—१२	आग	आगे
२१-४, १२	परिगृह	परिग्रह
३१—४	धर्मिप्ट	धर्मिष्ठ
४१—५	स्थभणा	स्थम्भणा
४४—३	उद्वत	उद्धृत
४६—५	वादका	वाद कीयउ
७२—८	ओर	और
७४—१५	फरनिजा	फरहरे नेजा
७६—१६	गुणों के	अवगुणों के
७६—२०	कभी कभी	कभी धनी कभी
७७—५	विनेचन	विवेचन
७६—२१	अरूढ	आरूढ़
८०—२२	आदुर्भाव	प्रादुर्भाव
८२—२१	बलाए	बुलाए
८३—२१	माता	माता.
८४—२२	याग	योग

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६०—१६	महान्त	महान्तः
६१—१३	काश्मीरान्	कश्मीरान्
६१—१७	तथाहूता	तदाहूता
६१—१७	नायक	ययुः
६१—१८	श्रीगुरोर्देशना देवानन्दितो भून्नराधिपः	श्रीगुरोर्देशना देवनन्दितोऽभून्नराधिपः
६१—२०	ददो	ददौ
६३—६	जीवों को	जीवों के
६३—२०	स्तु	स्तत्
६७—१३	ममं मत्री साहिनाचालयत्तराम्	महामंत्री सार्द्ध साहेरचालयत्
६७—१४	संयमन्	संयमान्
६७—१६	वृताचार	व्रताचार
६७—२०	स्पदमीगितु	स्पदमीशितुः
१००—१५	तंड	तइं
१०६—१३	वसारा	वैशारा
१०७—१	रायमिंघेः	रायसिंघेः
१०७—२१	संमर्ग	संमर्ग से
१०८—४	समझ	समक्ष
११६—१४	फवे	फर वे
११६—१०	made	mode

पृष्ठ पंक्ति अशुद्ध	शुद्ध
११६—२० अम्राट	सम्राट्
१२४—२० करो	करी
१३०—२० शी	जी
१४३—११ कर्मो	कर्यो
१४३—२३ चको	चूको
१५३—२० चत्र	चैत्र
१६४—२३ सुमतिमन्दिर	सुमतिमन्दिर
१६८—१२ चत्री	चैत्री
१८७—८ पत्र०	पत्र० ७
१६०—२२ साधुकीर्त्य	साधुकीर्त्यु
१६६—६ आरामशाभा	आरामशोभा
१६६—२१ कुशललाम	कुशललाभ
१६७—२२ महो	महो०
१६८—११ (रना	(रचना
२०१—१० अन्तिय	अन्तिम
२०७—६ उपधानचधि	उपधानविधि
२०६—१३ भजनगर	भुजनगर
२१४—१६ ॥२४॥	॥२४८॥
२१८—२१ वासुपूज्य	वासुपूज्य
२१८—२२ वासपूज्य	वासुपूज्य
२२१—१० स्नान	स्नात्र

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२२२—२३	यहकमो	पहकमो
२२५—८	धर्मधोरयताधर	धर्मधौरेयताधर.
२२५—६	सर्व	सर्व
२२५—६	साह्यु क्तं	साहेयं
२२५—११	प्राप्यसेहं महादेवं सिंह प्रश्नरितो भवन्	प्राप्य सैंहं महादेवं सिंह: प्रश्नरितोऽभवन्
२२७—१२	प्रभो ,	प्रभो:
२२५—१४	यर्य्यन्त	पर्य्यन्त
२२७—१३	गुणावले	गुणावले:
२२७—१७	गन्तव्यामेवोति	गन्तव्यमेवेति
२२६—१२	पीतलमय	पीतलमय
,, —१३	धणी	धणो
,, —१६	भव	ऽभवद्
२३३—७	मद्ध	सिद्ध
,, —२१	मोहे	माहे
२३४—१७	जोवड़ा	जोवाड़ां
२३७—२०	गभित	गर्भित
२३६—२३	जलालद्दीना	जलालद्दीन
,, ,,	नेक फोट	ऽनेकफोट्ट
,, २४	नति	पति
२४३—१६	ट्रक	ट्रैक

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२४६—६	म०	मं०
२७६—१	सरस्वतौ	सरस्वती
२८३—१३	तद्वन्	तद्वत्
२६४—५	जिननवल्लभ	जिनवल्लभ
३०४—२२	मविष्य	भविष्य

पृ० ८३-६७ की फुटनोटमें जो श्लोक दिए हैं वे "कर्मचन्द्रमंत्रि वंश प्रबन्ध"के हैं और पृ० २३६-४० के फुटनोटका अवतरण "कर्मचन्द्र मंत्रिवंश प्रबन्ध वृत्ति"का है। पृ० ७३ का अवतरण "अकबर-प्रतिबोध रास" का है। पहले फरमेमें फुटनोटके चिन्ह (स्टार) शब्दोंके पीछे लगे हैं वे आगे लगने चाहिए।

प्रेस दोषसे अनेक जगह मात्राएं टूट गई और अक्षर अस्पष्ट उठे हैं एवं 'व' के स्थान पर 'ब' छपा है, ऐसी साधारण अशुद्धियें हमने नहीं लिखी हैं।

विशेष नामोंकी सूची

ई

उ

ऊ

ऋ

ग

छ

फ

ब

ह